

GOVERNMENT OF INDIA

DEPARTMENT OF ARCHAEOLOGY

**CENTRAL ARCHAEOLOGICAL
LIBRARY**

CALL NO. Sa.2Vu Jai-Ram

D.G.A. 79.



THE JAIMINIYA OR TALAVAKARA
UPANISHAD BRAHMANA.

DEVANAGARI TEXT WITH INDEXES.

PREPARED FROM THE EDITION, IN ROMAN SCRIPT

OF

SHRI HANNS OERTEL PH. D.

BY

PANDIT RAMA DEVA, B. A.

WITH

AN INTRODUCTION ON THE HISTORY OF SAMAVEDA LITERATURE.

BY

BHAGAVAD DATTA.

Handwritten signature
Handwritten signature

FEBRUARY 1921.

FIRST EDITION,

1,000 Copies.

Price

6 Shillings.

श्री ३४

दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला।

अनेक विद्वानों की सहायता से।

भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक वा अध्यक्ष अतुलसन्धान-विभाग

दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर द्वारा

सम्पादित।

ग्रन्थाङ्क ३।

श्रीमदयानन्द महाविद्यालय संस्कृतप्रबन्धमाला सं० ३

श्री ३म्
जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

अथवा *Alvars*

तलवकार-उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

Talavakar

प० रामदेव बी० ए०

द्वारा

श्रीमान् हन्नस अटेल, पी० एच० डी०

H. Oerfi महाशयस्य

रोमनलिपि-संस्करणात् देवनागर्याम् लिपिकृतम् ।

भगवद्भक्त

संस्कृताध्यापक दयानन्दकलेज, लाहौर,

Sa2Vu

लिखितं

Ref/ Sa2V5

Jai/Ram

भूमिका-सहितम् ।

Jai/Ram

आर्य्य संवत् १९६०८५३०२० ।

विक्रम सं० १९७७ ।

सन १९२१ ई० ।

दयानन्दा

प्रथमावृत्तिः १००० प्रति

प० भरवप्रसाद के प्रबन्धसे विद्याप्रकाश प्रेस चण्डीमहला लाहौर में छपा ।

**CENTRAL ARCHAEOLOGICAL
LIBRARY, NEW DELHI.**

Acc. No. 5172
Date..... 17-1-57
Call No. Sa 2 Vu
Jai / Ram

Printed by Bhairo Prasada,

MANAGER, VIDYA PRAKASHA PRESS, LAHORE.

AND PUBLISHED BY

THE RESEARCH DEPARTMENT, D. A. V. COLLEGE, LAHORE.

The Publications of this series can also be had of—

1. MESSRS. LUZAC & Co.,

46 Great Russell Street,

London W. C.

2. Lala Moti Lal Banarsi Dass, The Punjab
Sanskrit Book Depot, Said Mittha Bazar, Lahore.

3. Lala Mehr Chand Lachhman Dss, Sanskrit
Booksellers, Said Mittha Bazar, Lahore.

4. Pt. Wazir Chand, Vedic Book Depot, Mohan
Lal Road, Lahore.

॥ ओ३म् ॥

भूमिका ।

सामवेदीय वाङ्मय का इतिहास ।

परमात्मा से सावेद का प्रादुर्भाव ।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

ऋ० १०।६०।१।यजुः ३१।७। तै० ब्रा० ३।१।३॥

उस व्यापक सर्वपूज्य परब्रह्म से ऋग्वेद, सामवेद प्रादुर्भूत होते हैं । अथर्ववेद प्रसिद्ध होता है उस से, यजुर्वेद उस से प्रकट हुआ ।

(पूर्वपक्ष) 'ऋचः' आदि पद बहुवचनान्त हैं, अतः इनका अर्थ ऋग्वेद आदि कैसे हुआ ? इनका अर्थ तो यही है कि ऋचायः, साममन्त्र और छन्द उत्पन्न हुए ।

(उत्तरपक्ष) यह सत्य है, कि 'ऋचः, सामानि,' और 'छन्दांसि' पद बहुवचनान्त हैं, पर साथ ही 'यजुः' पद एकवचन में भी है । यदि तुम्हारी बात सही जाये तो 'यजुः' पद से कुछ कबहूँ अभिप्राय लोगे ?

(पूर्वपक्ष) 'यजुः' पद यहाँ जात्यर्थ में एकवचन होता हुआ भी यजुर्मन्त्रों का बोधक है, यजुर्वेद का नहीं ।

(उत्तरपक्ष) यह बात यहाँ न घटेगी क्योंकि 'छन्दांसि' पद पर पूर्ण विचार किसी और परिणाम पर ले जाता है । देखो ! 'छन्दांसि' पद यहाँ किन्हीं मन्त्र-विशेषों का बोधक नहीं है । इवान्व सरस्वती

मे इसी पर विचार करते हुए लिखा है—'वेदानां गायत्र्याविच्छन्दोऽन्वितत्वात्पुनश्छन्दाँसीतिपदं चतुर्थस्याथर्ववेदस्योत्पत्तिं ज्ञापयती-
त्ववचेयम्।' (ऋ० भाष्यभू० वेदोत्पत्तिवि०) अर्थात् 'वेदों में सब मन्त्र गायत्र्यादि छन्दों से युक्त ही हैं, फिर (छन्दाँसि) इस पद के कहने से चौथा जो अथर्ववेद है उस की उत्पत्ति का प्रकाश होता है।' अन्यथा 'छन्दाँसि' का यहां कोई प्रयोजन नहीं। इस अर्थ में अन्य प्रमाण भी देखो।

- (१) "ऋचाम्.....गायत्रं छन्दः ।
यजुषां.....त्रैष्टुभं छन्दः ।
सान्नायम्.....जागतं छन्दः ।
अथर्वणां.....सर्वाणि छन्दांसि ।"

गो० भा० १।१।२६॥

वैदिक विचार में यह सुप्रसिद्ध है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द सम्बन्धी है [यद्यपि यह अनुसन्धेय है कि ऋग्वेद में गायत्री (२४५०) की अपेक्षा त्रिष्टुप् (४२५३) क्यों अधिक है ?] यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द सम्बन्धी और सामवेद जगती छन्द सम्बन्धी है। अब रहा अथर्ववेद, सो वह पूर्वोक्त गोपब्राह्मण के प्रमाणानुसार सर्व-छन्द-सम्बन्धी है। उसका किसी एक छन्द से सम्बन्ध-विशेष नहीं। यही कारण है कि उपस्थित मन्त्र में 'छन्दाँसि' पद से अथर्ववेद का ग्रहण होता है।

(२) प्रस्तुत मन्त्र-सम्बन्धी एक अन्य बात भी ध्यान देने योग्य है। अथर्ववेद में यह मन्त्र निम्नलिखित प्रकार से आया है—

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दो इ जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत ॥

अथर्व० १६।६।१३॥

यहां 'इन्द्रांसि' के स्थान में 'इन्द्रो ह' पाठ है। इस प्रकार पाठ में भेद कर देने से परमात्मा ने मन्त्रों द्वारा ही अन्य मन्त्रों का व्याख्यान कर दिया है। यह मन्त्र उन्नीसवें काण्ड का है, और यद्यपि पञ्चपटञ्जिका की भूमिका में लिखे अनुसार हम अभी तक इस काण्ड के सहितान्तर्गत होनेके विषय में कुछ नहीं कह सकते, फिर भी यह तो सध को स्वीकार करना पड़ेगा कि बहुवचनान्त 'इन्द्रांसि' पद का अर्थ एकवचन 'इन्द्र' अर्थात् (पूर्व प्रमाणाँ की दृष्टि से) अथर्ववेद ही है। रहा क्रियापद 'जहिरे'। सो वह व्यत्यय ही समझना चाहिये; यद्यपि ऐसे व्यत्ययों के उदाहरण संप्राप्त वैदिक ग्रन्थों में अत्यल्प मिले हैं।

पूर्वोद्धृत अथर्ववेद के मन्त्रों से निश्चय होता है कि 'इन्द्रांसि' आदि पदों का अर्थ एक वचन में ही है। ऐसी अवस्था में यजुः पद भी यजुः मन्त्रों का जाति-वाचक न रहेगा। इस विषय में अन्य प्रमाण देखो—

(३) यस्मादचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाक्षन् । सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेवसः ॥

अथर्व १०।७।२०॥

इस प्रमाण में 'यजुः' पद एक वचन में है, और अथर्वीङ्गिरस स्पष्ट ही ऋग्वेद का चोतक है। अतएव 'ऋचः' और 'सामानि' पदों का अर्थ भी ऋग्वेद और सामवेद ही होना चाहिये।

विचारान्तर्गत "तस्माद्यज्ञात्" अ० १०।६०।६ मन्त्र की व्याख्या में सत्यव्रत सामग्रामी त्रयीपरिचय तथा निष्काखोचन में लिखते हैं कि 'सामवेद इन्द्र और गान दो भागों वाला है। सो इन्द्र भाग का ग्रहण इन्द्रांसि पद से और गान भाग का ग्रहण सामानि पद से करना चाहिये।' इसका कुछ संयोजन तो हरिप्रसाद

जी ने वेदसर्वस्व के उपोद्घात पृ० १५ पर किया है। यद्यपि हम उनके विचार-क्रम से सहमत नहीं, तथापि उन के इस परिणाम के कि गान भाग तो मूलसंहिता का गेय-रूपान्तर ही है, अनुकूल सम्मति रखते हैं। इस गान भाग के लिये कहीं अन्यत्र मन्त्रों में 'सामानि' या 'साम' पद प्रयुक्त हुआ होता तो सत्यव्रत जी का पक्ष कुछ ठहर सकता; पर ऐसा है नहीं, अतः उनका पक्ष निराधार होने से सम्मान योग्य नहीं।

सत्यव्रत जी के पक्ष को एक बात कुछ आश्रय दे सकती है, यद्यपि यह इन्हों ने स्वयं नहीं लिखी। अथर्ववेदीय पिप्पलाद शास्त्रा में 'सामानि यस्य होमानि' के स्थान में 'हन्दांसि यस्य होमानि' पाठ आया है। ऐसी वृथा में सत्यव्रत कह सकता था कि 'हन्दांसि' पद 'सामानि' का पर्यायवाची है, और सामवेद के छन्द भाग का द्योतक है। यह बात भी सत्य नहीं ठहरती क्योंकि 'सामानि' आदि पद जैसा आगे चल कर और भी विदित हो जायगा सामवेद वाचक हैं। वैसा कोई छन्द वेद है नहीं, और 'छन्द' पद अथर्ववेद वाची सिद्ध हो चुका है, अतः पिप्पलाद का पाठ जब तक कि उस आका के अन्य लिखित ग्रन्थ न मिले (जो कि बहुत कम सम्भव है) अशुद्ध ही कहा जायगा।

विदेशीय (पारसीक) भाषा में छन्द का अर्थ।

भाषा-विज्ञानी जानते हैं कि छन्द शब्द ही पारसीक भाषा में छन्द बना है। यही छन्द पारसीकों का धर्ममन्त्र है। इस में अथर्वन पुरोहितों का नाम भी कई बार आया है। हाग के मतानुसार तो इस में आया हुआ एक मन्त्र भी अथर्ववेद का प्रथम मन्त्र है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि छन्द का अथर्ववेद से सम्बन्ध विशेष है, अतएव छन्द शब्द का अर्थ पूर्वोक्त मन्त्र में अथर्ववेद ही युक्तियुक्त है। ऐसी वृथा में 'सामानि' आदि पद भी सामवेद आदि के वाचक हैं।

ब्राह्मणग्रन्थों में सामानि पद का अर्थ ।

- (१) सामवेद आदित्यात् (ऐ० २५।७)
- (२) आदित्यात्सामानि (कौशी० ६।१०)
- (३) सूर्यात् सामवेदः (श० ११।५।८)
- (४) सामान्यादित्यात् (छाँ० उ० ४।१।७।२)
- (५) सामवेद आदित्यात् (जै० उ० ब्रा० ३।१।५।७)
- (६) सामवेदोऽमुष्मात् (षड्विं० ४।१)
- (७) आदित्यात् सामवेदम् (गो० १।६)

इन सात प्रमाणों में से दूसरे और चौथे प्रमाण में 'सामानि' पद आया है, अन्य पांच प्रमाणों में सामवेद । ये ब्राह्मणशास्त्र एक प्रकार से पूर्वोक्त वेद ग्रन्थों की व्याख्या में ही कहे गये हैं । इन में अधिकांश स्थलों में सामवेद का प्रयोग बता रहा है कि प्राचीन ब्राह्मण ऋषियों की दृष्टि में भी इन स्थलों में 'सामानि' पद से सामवेद का ही अभिप्राय होता था। अतएव "तस्माद्यज्ञात्" मन्त्र का इस लेख के आरम्भ में किया हुआ अर्थ ही सत्य है, और दूसरा नहीं । इस मन्त्र का यही अर्थ ऋषि व्यानन्द सरस्वती ने अपने अनेक ग्रन्थों में किया है । हम ने तो उसी का उद्धरणमात्र दिया है ।

इस कल्पारम्भ में सामवेद सब से प्रथम किस को प्राप्त हुआ ?

पूर्वलेख से यह स्पष्ट होगया होगा कि सामवेदादि वेद उसी यज्ञ=स्कन्ध=परब्रह्म से प्राप्त हुए । यहाँ यह विवाद नहीं उदाया जायगा कि वेद-ज्ञान क्यों परमात्मा का है ? इसे किसी अन्य अक्षर पर लुंगा । यहाँ अब यही निर्णय करना है कि इस कल्पारम्भ में सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ या अनेकों को ।

अनेकों को प्राप्त हुआ, ऐसा मानने वाले बहुत थोड़े हैं। उन के पक्ष में कोई प्रमाण भी नहीं है। जो यह मानते हैं कि सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ, वे दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक भाग वालों का मत है कि सामवेद अग्नि के अधिष्ठाता देव को प्राप्त हुआ। उसी से मन्त्र-द्रष्टा ऋषियों को प्राप्त हुआ। दूसरे भाग वालों का मत है कि मनुष्य-देह-धारी अग्नि ऋषि को प्राप्त हुआ जो इस कल्पारम्भ में अमैथुन सृष्टि का एक सभासद था। इस पर विचार—

(१) अग्नि आदि द्रव्यों का कोई चेतन जीव अधिष्ठाता है अर्थात् इसको स्व-शरीरवत् बनाये है, ऐसा वेद में कहीं नहीं आया। हाँ, अग्नि ईश्वरदेव का नाम तो सर्वत्र प्रसिद्ध है। इस का विशेष व्याख्यान भगवान् इयानम् सरस्वती की ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका में मिल सकता है। इसी पक्ष के अग्रजनों में 'जडाग्नि से ऋग्वेद का प्रकाश हुआ' इस का अग्रज हो जाता है। कारण कि जड़ को ज्ञान होना असम्भव है।

(२) दूसरे मत में भी एक भारी आपत्ति आती है। पूर्वोक्त ब्राह्मणग्रन्थों के सात प्रमाणों में सूर्याव=आदित्याव=अमुष्माव पद आये हैं। इस पर—

(पूर्वपक्ष) यदि सूर्यादि मनुष्य देहधारियों के जन्म होते तो उन के पर्याय अदित्य आदि और 'वायु' का पर्याय 'वोध्यं पचते' कतः ११।५।६।२ न आते। ब्राह्मणग्रन्थों में "अमुष्माव" प्रयोग स्पष्ट इसी सूर्य के लिये आया है। और वायु यदि कोई मानव समान का सवस्व था तो क्या वेद "वोध्यं पचते" अर्थात् 'जो पक रहता है' ऐसा ही था? क्या मनुष्य भी पचन समान रहते हैं।

(उत्तर पक्ष) प्राचीन संस्कृत वाक्यमय के न जानने का ही कारण है कि ऐसे पूर्वपक्ष खड़े होते हैं। वेस्रो महाभारत को—

(क) वहाँ कर्ण के समीप उस के पिता सूर्य का आनामिका है। यह सूर्य कोई देवता न था, प्रत्युत मनुष्य देहधारी व्यक्ति ही था। उस के निम्नलिखित नाम महाभारत वनपर्व अध्याय ३०१ में आये हैं।

अभिप्रायमयो ज्ञात्वा महेन्द्रस्य विभावसुः ।

कुयदलार्ये महाराज सूर्यः कर्णमुपागतः ॥६॥

स्वमान्ते निशि राजेन्द्र दर्शयामास रश्मिवान् ।

कृपया परयाऽऽविष्टः पुत्रस्नेहाच्च भारत ॥७॥

आश्रयो वेदविद्रूत्वा सूर्यो योगद्विरूपवान् ॥८॥

अहं ताव सहस्रांशुः सौहृदान्त्वा निर्दशये ॥२२॥

इस का संक्षिप्त अभिप्राय यह है कि योगसिद्धि-सम्पन्न सूर्य महात्मा आश्रय वेप में रात्रि के अन्तिम प्रहर में कर्ण के आगने पर उसके समीप आया। उस सूर्य के यहाँ कई नाम आये हैं जो सूर्य शब्द के पर्याय हैं, यथा विभावसु=रश्मिवान्=सहस्रांशुः। अब रामायण पर किञ्चित् ध्यान दो—

(क) वाल्मीकिरामायण में वानर जाति का सुविख्यात कथन है। वहाँ भी मुनि वाल्मीकि वानर शब्द के अनेक पर्याय उस जाति के लिये प्रयोग में लाते हैं। ध्यान रहे कि मिथ्या-कथा बुक विवरण को छोड़ कर वानर जाति मानवोत्तर जाति सिद्ध नहीं हो सकती। और सत्य तो यह है कि (क) और (ख) स्थलों में सूर्य और वानर के क्रमशः पर्याय-प्रयोग को देख कर ही अन्त में आश्रय लोगों ने इन्हें देवता वा पशु मान लिया था। अन्त में आश्रय लोगों के वाक्य-प्रयोग पर भी ध्यान देना चाहिये—

(ग) तैत्तिरीयब्राह्मण ३।१।८ में नचिकेता की कथा आई है। वहाँ उस का जिस ऋषि से प्रश्नोत्तर हुआ, उस का नाम मृत्यु ही कहा है। कठोपनिषद् में भी यही कथा बड़े विस्तार से आई है। वहाँ मृत्यु ऐतिहासिक कथा के साथ २ कुछ अलङ्कार भाग मिश्रित करके औपनिषद्-भाव अधिक खोजा गया है। परन्तु से अधिक विचारणीय यह है कि यहाँ मृत्यु ऋषि के कई दूसरे भी नाम दिये गये हैं। ये सब नाम मृत्यु शब्द के पर्यायवाची हैं यों “यम १।५ अमृतक १।२६”।

(घ) वेद के ऋषियों के तो कई ऐसे नाम सर्वानुक्रमणी में आये हैं जैसे “अग्निः पावकः” ऋ० १०।१४०॥ अग्निस्तपसः ऋ० १०।१४१॥ यहाँ विशेष्य विशेषण भाव से ये समानार्थक शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इन पूर्वोक्त प्रमाणों से यही निश्चित होता है कि बहुत प्राचीन काल में व्यक्ति-विशेषों के नामों के यदि कोई पर्याय हों तो वे भी उसी के नाम के किये प्रयुक्त हो जाते थे। और जैसे महाभारत में ‘सूर्य’ को ‘रश्मिधान’ आदि कहा है वैसे ही अथर्ववेद में ‘वायु’ को ‘योऽयं पवते’ कह दिया गया है। अथर्ववेद ब्राह्मण आदि ग्रन्थों के पूर्वोक्त सात प्रमाणों में “आदित्य” मनुष्य देहधारी ऋषिदेव है, कोई जड़ वा जड़ सूर्य का आविष्कार देव नहीं। इसी आदित्य=सूर्य=रवि के मन में इस कल्पारम्भ के सबब से पृथ्वी परमात्मा ने सामवेद का प्रकाश किया। उसी ने ब्रह्म आदि को पढ़ाया और फिर यह वेद सर्वत्र फैलता गया। पञ्चविंशब्राह्मण में जो “अमुष्मात्” प्रयोग आया है उसका यही अन्विष्टाव है कि मनुष्य शरीर में शिर स्थान आदित्य वा सूर्य सम्बन्धी है। सूर्य ऋषि को समाधिरूप दशा में शिर की नादिकों में मन के जाने से इस वेद का ज्ञान होता था, अतः यह प्रयोग आ गया है।

सामवेद की शाखाएं ।

आर्यावर्ष में ऋषि के आरम्भ से लेकर दीर्घ काशपर्यन्त शौकिक और वैदिक भाषा का बहुत प्रचार रहा । उस समय वेदादि शास्त्र राज कल की अपेक्षा अल्पपरिश्रम से ही समझे जाते थे । तब प्रवचनकर्त्ता आचार्य वा ऋषि अपने शिष्यों के लाभार्थ कठिन वैदिक शब्दों के स्थान में अन्य सरल वैदिक शब्द प्रयुक्त करके अथवा कुछ २ व्याख्या करके पढ़ाया करते थे । उतने से ही शिष्य यथार्थ अभिप्राय समझ लेते थे । तब किन्हीं विस्तृत भाष्यों की आवश्यकता न थी । यही ऋषि-प्रवचन था जो पीछे शाखा आदि नाम से प्रसिद्ध हुआ । इसी प्रवचन के सम्बन्ध में भाष्यकार पतञ्जलि मुनि ने लिखा है—

“ न हि च्छन्दांसि क्रियन्ते । निखानि च्छन्दांसीति । यद्यप्यर्थो निखो या त्वसौ वर्णानुपूर्वी सानित्या । तद्देदाचैतद्भवति काठकं कालापकं मौदकं पैप्पलादकमिति । ” ४।३।१०१॥

अर्थात् वेद तो क्या, साधारण ग्रन्थों के समान शाखाएं भी बनाई नहीं गईं । इनका शब्दार्थ निख है । हां, अर्थ के निख होते हुए भी वर्णानुपूर्वी अनित्य हैं । इसी के भेद से ऋषियों ने नित्य वेदार्थ खोजा है । और इसी भेद से काठक आदि अनेक शाखाएं हुई हैं ।

(प्रश्न) मूल सामवेद जिस की आगे शाखाएं बनीं अब कहाँ है ? उस में ऋग्वेदीय ऋचाएं न होनी चाहियें । अब तो जितने ग्रन्थ सामवेद के नाम से मिलते हैं उन सब में ऋग् भाग सम्मिलित है ।

(उत्तर) मूल सामवेद था तो अवश्य क्योंकि बिना इस के साम-शाखाएं इनती कैसे, और प्रवचन किस का होता ? इसी मूल का यज्ञान ऋग्वेदादि वेदों और ऐतरेय आदि ब्राह्मणों में आया । वह मूल भी प्रतीत होता है, प्रवचन के बख से पीछे ऋषि-विशेष के नाम से प्रसिद्ध हो गया । ऋग्वेदीय ऋचाएं सामवेद में न थीं ।

और न है। हम बड़ बड़ कहते हैं कि ऋग्वेद और सामवेद के अनेक मन्त्र सहस्र हैं। उन्हीं मन्त्रों का पारिभाषिक नाम 'ऋक्' भी है। कर्त्ता परमात्मा ने प्रयोजन-विशेष के लिए ये समान मन्त्र दो वेदों में रखे हैं। मिथ्या-इतिहास-प्रचारक जो ठेकक हमारे इस कबज को नहीं मानते उन्हें हम ऋग्वेद का एक मन्त्र बताते हैं—

गायत्रेण गतिं विमिती अर्कमर्केण सामं त्रैष्टुभेन वाकम् ।

अर्केन वाकं द्विप्रदा चतुष्पदान्तरेण मिमते सप्त वयसिः ॥

ऋ० ११ १३३ १ २३३

इतिहासकारों को यहाँ तक का यह मौखिक-सर्व अन्व है। इस पूर्ववर्ती लेखकों के अन्तर्मुख पर अन्तःकरण होने से यद्यपि वह अन्व अत्यन्त पुराना नहीं, तथापि बहुत जगह भी नहीं है। इस अन्व से भी इष्ट ही अन्व में ऋचाओं का होना जसम्भ गया है। अर्थ इस का अतीव सरल है। पूर्व लिखा जा चुका है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द प्रधान और यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द प्रधान है। अर्क छन्द मन्त्र या ऋचा का भी पर्यायवाची है। अतएव मन्त्रार्थ यह है—

गायत्री छन्द से अर्क=ऋचा=ऋग्वेद का (जगदीश्वर) अस्तिमम करता है। ऋचाओं से सामवेद का। त्रिष्टुप् छन्द से वाक=यजुर्वेद का। यजुः मन्त्रों से वाक=अथर्ववेद का। [जो ऐसी] सप्त छन्द युक्त वेद वाणी का मान करते हैं [वे कृतकृत्य होते हैं।] इससे पूर्वपक्षियों को भी मानता पड़ेगा कि ऋचाएं वा ऋग्वेदीय मन्त्रों जैसे मन्त्र बहुत पुराने काल से सामवेद में चले आते हैं। हम पूर्ववर्ती युक्त हैं कि आर्येतिहासानुसार सामवेद आरम्भ से ही संहितारूप में चला आ रहा है, अतः इस दृष्टि से जो सत्य ही है अदि-स्थिति से सामवेद में ऋचाएँ चली आती हैं। जो व्यक्ति हम अन्वकारों को साम पाठ से पृथक् जाने, माना, वह वैदिक आनुवंशिक इतिहास से अज्ञ है।

शास्त्रा-विभाग ।

अथ एषा शास्त्रा-विभाग पर विचार । इस पर प्रकाश डालने वाक्य कोई अति प्राचीन ग्रन्थ हमारे पास विद्यमान नहीं । एक चरण-व्यूह ग्रन्थ ही रह गया है । वह विक्रम से पांच, सः सै वर्ष पूर्व का ही प्रतीत होता है । इस में पाठसेव का साङ्गत्य है । नीचे उसी की साक्षी उपस्थित की जाती है ।

चरणव्यूह की साक्षी ।

लौकिकीय परिशिष्टः ।

सामवेदस्य किल सहस्रभेदा भवन्ति ।
एध्वनध्यायेष्वधीयानारणे शतक्रतुवजे-
काभिहतः ।

शेकनध्याकृत्यामः । तत्र रात्रायनीया
ना सप्तभेदा भवन्ति । (१) रात्राय-
नीयाः (२) रात्र्यमुद्राः* (३) का-
खोपा (४) महाकाखोपा (५) लाङ्ग-
कायनाः (६) शार्दूलाः (७) कौशु-
माभेति ।

अधिकार-प्रदर्शिते प्रकारान्तर ।

तत्र कौशुमानां षड्भेदा भवन्ति ।
(१) कौशुमाः । (२) आसुरायणाः
(३) आसायनाः (४) प्राश्नाधिजेन-
मृकः (५) अचीनयोग्याः (६)
नैसमीयाः ।

अथर्व-परिशिष्टः ।

तत्र सामवेदस्य शास्त्रासङ्ख्यासीत् ।
अनध्यायेष्वधीयानाः सर्वे ते एकैव
विनिहतः । प्रविलीनाः । तत्र केचिदवा-
शिष्टाः प्रचरन्ति । तथ्या ।

(१) रात्रायनीयाः (२) सास-
मुद्राः* (३) काखोपाः (४) महा
काखोपाः (५) कौशुमाः (६) लाङ्ग-
सिकाभेति ।

कौशुमानां षड्भेदा भवन्ति । तथ्या ।

(१) सात्रायणीयाः (२) आसुराय-
णीयाः (३) वैतधृताः (४) प्राश्नीनाः
(५) तेजस्ताः (६) अनिष्टकाभेति ।

* सास्यमुद्रा नाम अधिक युक्त है । महाभाष्य १।१।४॥

१।१।४८॥ पर ऐस ही पाठ है ।

जहाँ सैकुण्ठों साम-शास्त्रीयों के नाम विद्युत हो गये हैं वहाँ विद्यमान नामों में भी पाठ भेद के कारण एक बड़ा अन्तर पड़ गया है। पूर्वोक्त शास्त्रा-नामों के पढ़ने से यह बात सुस्पष्ट हो जाती है। चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने निज व्याख्या में कुछ अन्य नाम भी दिये हैं। उन्हीं का पाठभेद स्वामी हरिप्रसाद जी के वेदसर्वस्व के पृष्ठ १७२ पर मिलता है। पता नहीं उन्होंने ने स्व-बुद्धि से पाठ संशोधन किया है अथवा किसी लिखित ग्रन्थ के आधार पर ये नाम दिये हैं। तथापि हम उनके पाठभेदों को कोष्ठों में रख कर महिदास के पाठ जो संवत् १८५६ के काशी-संस्करण में छपे हैं, नीचे देते हैं।

(१) आसुरायणीया (२) वासुरायणीया (३) वार्तान्तेरिया [वार्तान्तेवेयाः] (४) प्राञ्जल [प्राञ्जलाः] (५) ऋग्वैतविधाः [ऋग्वैत-भेदाः] (६) प्राचीनयोग्याः [७ ज्ञानयोग्याः] (७) रागायनीयाश्चेति । तत्र रागायनीयानां नव भेदा भवन्ति । (१) रागायनीयाः (२) शाठ्या-यनीयाः (३) शाठ्यमुद्राः [सात्वत्याः] (४) अत्यन्ताः (५) महाअत्यन्ताः (६) काञ्जलाः (७) कौथुमाः (८) गौतमाः (९) जैमिनीयाश्चेति ।

पतञ्जलि मुनि कहते हैं “सहस्रवर्तेना सामवेदः” (महाभाष्य कीलहार्ने सं० भाग १, पृ० ९) अर्थात् ‘सहस्र शास्त्रा वाला साम वेद है।’ उन्हीं सहस्र शास्त्राओं में से कुन्नेक का उल्लेख पूर्वोक्त चरणव्यूह के पाठों में है। चरणव्यूह के शास्त्रा-नाश-इति-हास में तथ्य की किस अव्यवस्था का होना सम्भव है। तदनु-सार वहाँ वा किसी विद्युत-प्रकोप वाले दिन किसी सामशास्त्रीय अध्यापक ने अपनी शास्त्रा का पाठ किया होगा। यह इन्द्र=सूर्य के वज्र=तड़ित की धारा से अपने प्राण नष्ट कर बैठ जायेगा। साथ ही

‘‘स के ग्रन्थ विनष्ट हो गये होंगे* । परन्तु यह सब दूर की कल्पना प्रतीत होती है । वस्तुतः कालक्रम से ही ये सब शाखाएं लुप्त होती गई होंगी ।

सम्प्राप्त तीन शाखाएं ।

सम्प्रति सामवेद की तीन शाखाएं ही प्रसिद्ध हैं । चर्याव्यूह में भी इन्हीं का उल्लेख है । ‘गुर्जरदेशे कौथुमी प्रसिद्धा । कार्याटके जैमिनी प्रसिद्धा । महाराष्ट्रदेशे रागायनीया प्रसिद्धेति ।’’ अर्थात् गुजरात में कौथुमी, कार्याटक में जैमिनी और महाराष्ट्र में रागायनीय शाखा प्रसिद्ध हैं ।

पूवोक्त तीन शाखाओं में से कौथुमी शाखा ही सम्प्रति मूल सामवेद माना जाता है । इस का एक कारण तो इस का समस्त भारत में अत्यन्त प्रसिद्ध होना है । अन्य प्रबल कारणों की अपने खोज होनी चाहिये ।

इस सामवेद के आठ ब्राह्मण हम तक पहुँचे हैं । (१) तायज्य ब्राह्मण अथवा पञ्चविंशब्राह्मण अथवा प्रौढ ब्राह्मण अथवा कौन्तेय ब्राह्मण । (विजयियोथीका इण्डिका संस्करण संवत् १८२७-३०) । (२) षड्विंशब्राह्मण (जीवानन्द सं० १८८१ सन् तथा ‘‘विज्ञापनमाध्य-सहितम्,’’ पृ० एफ० ईश्वरसिंह सम्पादित, लीडन १८०८) । (३) सामविधानब्राह्मण (ए० सी० बर्नेट सम्पादित १८८० सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रत सामा० सम्पा० सं० १८५१) । (४) चार्षेय ब्राह्मण (ए० सी० बर्नेट सम्पा० १८७८ सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रतसं० सम्पा०

* अलबेस्ली लिखता है कि ‘‘उस के काल से कुछ पूर्व ही कस्मीर के वल्लुक नामक ब्राह्मण ने वेदों को लिपिबद्ध करने की प्रथा चलाई थी ।’’ (अलबेस्ली का संस्कृत भाग दूसरा, श्रीचित्ररामकृत अनुवाद । सन् १८७८ पृ० १३३) हमें इस बात पर विश्वास नहीं ।

सं० १-६४८) । (१) देवताध्याय या देवत ब्राह्मण (प० सी० बर्नेज सम्पा० सन् १८७३ तथा जीवानन्द सन् १८८१) । (२) उपनिषद् ब्राह्मण—(क) मन्त्रब्राह्मण (सत्यव्रतसा० सम्पा० सं० १-६४७ तथा प्रथम प्रपाठकमात्र के० स्टोअर सम्पा० १-६०१) (ख) छान्दोग्योपनिषद् (अनेक संस्करण निकल चुके हैं) । (३) संहितोपनिषद् प० सी० बर्नेज सन् १८७१) । (८) वंशब्राह्मण (प० सी. बर्नेज सम्पा. १८७३ तथा सत्यव्रत सा० सं० १-६४६) ।

कई विद्वानों का मत है कि वस्तुतः सामब्राह्मण एक ही है । यह सम्प्रति चार भागों में विभक्त हो गया है । (१) पञ्चीस अध्यायात्मक पञ्चविंशब्राह्मण (२) पञ्च अध्यायात्मक षड्विंशब्राह्मण (३) अष्ट अध्यायात्मक छान्दोग्योपनिषद् (४) दो अध्यात्मक गृह्य-कर्म-प्रमाण मन्त्रब्राह्मण । सारा ब्राह्मण चाळीस अध्याय युक्त था । अन्य पांच ब्राह्मण अनुब्राह्मणमात्र हैं । जब तक सामवेद सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों के कुछ वैज्ञानिक संस्करण न छप जायें, तब तक इस विषय पर कुछ कहना हमारे लिये असुक्त है । इस का विचार अभी होसकता है जब इन ब्राह्मण-ग्रन्थों का काव-निरूपण हो जावे ।

ताराज्यब्राह्मण की प्राचीनता ।

अष्टाध्यायी ४। २। १३८ पर एक वार्तिक है “चरण सम्बन्धेन निवास क्षत्तयोऽयम् ।” इस पर लिखते हुए पतञ्जलिमुनि चरणसम्बन्धी नौ (९) श्रुतियों की निवास-विचार से तीन भागों में बांटते हैं । “ त्रयः प्राच्याः । अथ उदीच्याः । अथो माध्यमाः । ” काशिकाकार इसी वाक्य को ध्यान में रखकर अष्टा० ४। ३। १०४ ॥ पर लिखता है—“वैशम्पायनान्तेवासिनो नव ।” आगे चलकर वह कुछ सम्बन्धीन कारिकाएं उद्धृत करता है । उन में से एक का अर्थ शब्द यह है —

ऋचाभारुणितारुण्यश्च मध्यमीयास्त्रयोऽपरे ॥

अर्थात् ऋचाभ, भारुणि और तारुण्य तीनों वैशम्पायन-शिष्य भाष्यम्=मध्यम भूमि निवासी थे। इन तीनों के अपने २ चरण थे। इन में से तारुण्य की शाखा आरम्भ से कौथुमी ही चली आ रही है। इस का कुछ पता पाणिनीय गणपाठ से लगता है। वहाँ ६।२।३७ पर यह तीन गण भी दिये हैं। “कठकाखापाः। कठकौथुमाः। कौथुमलौकाचाः।” हम कह चुके हैं कि कठ और तारुण्य आदि स्तोत्र्य=एक शुरु के शिष्य थे। उन में से कठों की अपनी शाखा थी, परन्तु तारुण्य का अपना चरण ही था। इस लिये गण में कठ और तारुण्य दोनों की शाखाओं का परिचय देने के लिये “कठकौथुमाः” कहा है। इस कथन में एक बात ध्यान देने योग्य है। सामविधान ब्राह्मण के अन्त में जो ऋषि-परम्परा दी है वहाँ तारुण्य का शुरु प्राजापत्यविधि से बादरायण कहा है। यथा—

सोऽयं प्राजापत्यो विधिस्तमिषं प्रजापतिर्बृहस्पतये प्रोवाच ।
बृहस्पतिर्नारदाय । नारदो विष्वक्सेनाय । विष्वक्सेनो व्यासाय
पाराशर्याय । व्यासः पाराशर्यो जैमिनये । जैमिनिः पौष्पिण्ड्याय ।
पौष्पिण्ड्यः पाराशर्यायणाय । पाराशर्यायणो बादरायणाय ।
बादरायणस्तारिदशाध्यायनिभ्याम् । तारिदशाध्यायनिनौबहुभ्यम् ॥

एक तारुण्य का वर्योन शतपथब्राह्मण ६।२।२।२५ में आया है— “अथ ह्य स्माह तारुण्यः ।” अतः इतना निश्चित है कि वहाँ तारुण्य कौथुमी ही हो, है वह अतिप्राचीन। तब उस की संहिता क्यों कौथुम हुई और मूख सामवेद क्यों कौथुम कहलाया ? इस का विचार के लिए बड़े परिश्रम की आवश्यकता है।

सूत्रों का मिलान निम्नलिखित प्रकार से है। (१) मय्यकठपर्यायः

अथवा आर्यैयकल्प (डबल्यू० कालेण्ड सम्पा० सन् १९०८) ।
 (२) बुद्धसूत्र आर्यैयकल्प का परिशिष्ट ही है (उसी के उत्तर भाग में रूपा है) । (३) लाट्यायन श्रौतसूत्र (बिब० इण्डि० सं० १६२८) ।
 (४) गोमिलीय गृह्यसूत्र (फ्रायर सम्पा० १८८४ सन् तथा बिब० इण्डि०, द्वि० सं०, सन् १९०८) । (५) आश्वकल्प, परिशिष्ट, गोमिल
 अथवा वसिष्ठकृत (बिब० इण्डि० द्वि० सं० सन् १९०६) ।
 (६) कर्मप्रदीप अथवा कन्दोगृह्यपरिशिष्ट (धर्मशास्त्रसंग्रह, सन् १८७६, जीवनानन्द संस्करण के पूर्वार्ध पृ० ६०१-६४४ तक, कात्यायन-
 स्मृति वा कात्यायनविरचित कर्मप्रदीप के नाम से रूपा है । तथा
 प्रथम प्रपाठक फ्रा० ओडर सम्पा०, पहले १८८६ सन् तथा बिब० इण्डि० में
 सन् १९०६ और द्वि० प्रपाठक सु० होलस्टार्डेन सम्पा० पहले सन् १८६०) ।
 (७) गृह्यसंग्रह, गोमिलपुत्रकृत (ब्लूमफील्ड द्वारा Z.D. M. G. Vol
 ३५ में सम्पा० तथा बिब० इण्डि० द्वि० सन् १९१०) । (८) पञ्च-
 विधसूत्र (सत्यव्रतसा० सम्पा० तथा रि० जीमन सम्पादित १९१३
 मेसलम) । शिक्षाग्रन्थों में तीन शिक्षा प्रसिद्ध हैं ।

(१) नारदीय शिक्षा (सत्यव्रतसा० सं०, दशार्थेय सम्पा०
 आहौर सन् १८०६ तथा शिक्षासंग्रह काशी में, सन् १८६३) । (२)
 शोसथीय शिक्षा (शिक्षा संग्रह सं०) (३) गौतमीयशिक्षा (शिक्षा
 संग्रह सं०) । प्रातिशाल्या में निम्नलिखित ग्रन्थ हैं ।

(१) श्रुतसूत्र (ए० सी० बर्नेस सम्पा० १८७६) । (२) सामतम्य
 (दयानन्द मद्रासविद्यालय के लालचन्द पुस्तकालय में इस की एक
 प्रतिविधि है जो मद्रास गवर्नमेण्ट के संग्रह के एक ग्रन्थ से कराई
 गई थी) । (३) पुण्यसूत्र वा फुल्लसूत्र (रि० जीमन सम्पादित) ।

कुछ चीजें (१४) ग्रन्थों का हम ने ऊपर उल्लेख किया है ।
 इन के अतिरिक्त अष्टौत्स (३८) और ग्रन्थ हैं । उन सब के नामादि

जैमिनीय संहिता (von Dr. W. Caland, Breslau, 1917) पृ० १३—१५ पर देखो ।

२. राणायनीय शाखा ।

इस शाखा की संहिता अभी तक नहीं लगी । इस के सूत्र ग्रन्थ मिल्लिखित हैं ।

(१) द्राह्यायण श्रौतसूत्र (कुछ भाग रियूटर सम्पादित लगभग १८०४ सन्) । (२) खादिरगृह्यसूत्र अथवा द्राह्यायणगृह्यसूत्र (मैसूर राज्य संस्कृत ग्रन्थमाला १८१३ सन् तथा आनन्दाश्रम पूना सन् १८१४) । (३) गौतमपितृमेघसूत्र (कालेण्ड सन्पा० खार्पेज़िंग १८६६ सन्) । (४) गौतमस्मृति (स्मृतिसमुच्चय, पूना) ।

राणायनीय-शाखा सम्बन्धी इतने ग्रन्थों का वर्णन करके डाक्टर कालेण्ड महाशय एक विचार उपस्थित करते हैं । वह इतना आवश्यक है कि हम उस का अनुवाद दिये बिना नहीं रह सकते—

“ परन्तु इन सब ग्रन्थों का राणायनीय-शाखा सम्बन्धी होना अनिश्चित ही है । कर्मप्रदीप पर आशार्क का भाष्य है । उस में वह बताता है कि गोमिहसूत्र कौथ्यों का ही गृह्यसूत्र नहीं प्रत्युत राणायनीयों का भी है । हेमाद्रि भी अपने आश्रकल्प में तीन बार (पृ० १४२४, १४६०, १४६८) गोमिह को राणायनीय-सूत्रकृत कहता है । यदि यह बात मान ली जावे तो खादिरगृह्यसूत्र राणायनीयों का सूत्र नहीं रह सकता । अस्तु, दक्षिण भारत में शारदूखों के एक खादिर गृह्यसूत्र की विद्यमानता कही जाती है । (देखो Report on a search for Sanskrit mss. in the Bombay Presidency 1892-95, by A. V. Kathavate Bombay, 1901, No. 79) । शारदूल भी सामवेद की एक शाखा है । अब यही खादिर गृह्यसूत्र शारदूल साम्यों के खादिर सूत्र से कुछ पाठभेदों को छोड़ के प्रयः मिलता

वतया जाता है। हेमाद्रि के काल में शार्दूल शाखा की ऐतिहासिक भूमिका बढ़ गई थी, यह भी आश्चर्य से ज्ञात होता है। उस में (पृ० १०७८) पर, वह वेद के उन भागों का उल्लेख करता है जो ब्राह्मणों के भोजन-समय शार्दूल-शाखा वाकों को गाने चाहिये। अतएव यह स्पष्ट है कि कम से कम आदिरगृहसूत्र में मुख्यतः शार्दूलों सम्बन्धी गृह्यकर्म थे। परन्तु एक और ऐतिहासिक आदिर-सूत्र सम्बन्धी है। मैसूर में १८८१ सत्र में कण्ठभूषण भाष्य संहिता जो गृह्यरत्न रूपा है उस में अनेक बार गौतमगृह्यसूत्र का उल्लेख है। उस में जितने भी वाक्य गौतम के नाम से दिये गये हैं, वे सब हमारे आदिरगृह्यसूत्र में मिलते हैं। इस के अतिरिक्त जैसा हम पूर्व कह चुके हैं, हमारे पास एक गौतम पितृमेघसूत्र है, एक गौतम धर्मसूत्र (स्टैनज़लर सम्पा० कण्डन १८७६) * और एक स्मृति भी है। ये सब गौतमों के ग्रन्थ भी हो सकते हैं कि जो सामवेद का गौण भाग है। "

हम ने विद्वान् पाठकों के विचारार्थ भी कालेण्डर-प्रदर्शित के सब पक्ष उद्धृत कर दिये हैं। अपनी सम्मति किसी और समय पर प्रकाशित करेंगे ॥

जैमिनीय शाखा ।

इस शाखा के निम्नलिखित ग्रन्थ अब तक प्रकाशित हो चुके हैं—(१) जैमिनीय संहिता (Dr. W. Caland's edition, Breslau, 1907.) (२) जैमिनीय-ब्राह्मण (इस के अनेक खण्ड हक्सट आर्टेल के पाश्चात्य अनुसन्धान पत्रों में प्रकाशित किये हैं। अन्य उपयोगी खण्डों का अधिकांश भाग ग्रन्थरूप में रूप गया है—Das Jaiminiya Brāhmaṇa in Auswahl, Amsterdam, 1919) हस्तलिखित सामग्री के अपर्याप्त होने से वह बहुदुर्लभ ग्रन्थ अभी पूरा नहीं रूप पाया। (३) जैमिनीय-अथर्वब्राह्मण (अर्थात् गायत्र्युपनिषद्,

* इसके दो भारतीय संस्करण निम्नलिखित चुके हैं—(१) मैसूर (२) भोपाळ ।

पूर्वोक्त ब्राह्मण का उत्तर भाग है। दृक्स एटेंल सम्पा० १८६४ सन्)
 (४) आर्षेय-ब्राह्मण (५० सी० धर्नेस सम्पा० मंगलोर १८७८)।
 (५) जैमिनीय श्रौतसूत्र अग्निष्टोम-प्रकरण (डी० गैस्ट्रा सम्पा०
 लार्डेन सन् १९०६)*। (६) जैमिनीय-गृह्यसूत्र (edited by Dr.
 W. Caland, Amsterdam, 1905.)†

जैमिनीय-ब्राह्मण ।

“शौनकादिभ्यश्छन्दसि।” ४।३।१०६ के गण्य में पाणिनि
 “तलघकार” शब्ध पढ़ते हैं। इसी तलघकार ऋषि के नाम पर
 तलघकार शास्त्रा प्रसिद्ध थी। उसी का अब जैमिनि-शास्त्रा नाम
 हो गया है। इसका कारण अभी पूर्णतया ज्ञात नहीं। संहिता के
 समस्त ब्राह्मण को भी अब जैमिनीय ब्राह्मण कहते हैं।

श्री शङ्कराचार्य केनोपनिषद् भाष्य के प्रारम्भ में लिखते हैं—
 “केनेदितम्” इत्याद्योपनिषत्परब्रह्मविषया वक्तव्येति नवमस्या-
 ध्यायस्थारम्भः। प्रागेतस्मात्कर्माययक्षेपतः परिसमापितानि समस्त-
 कर्माश्रयभूतस्य च प्राणस्योपासनान्युक्तानि कर्माङ्गसामविषयाणि
 च। अनन्तरं च गायत्रिसामविषयं दर्शनं वंशान्तमुक्तम्।”

(अर्थ) “केनेदितम्” से आरम्भ होने वाली, परब्रह्मविषय के
 कहने वाली उपनिषद् कही जानी चाहिये। यह नवम अध्याय का
 आरम्भ है। इस से पूर्व (ब्राह्म) अध्यायों में यज्ञ कर्म पूरे कहे गये
 हैं। प्राणीपासना भी कही गई है। तत्पश्चात् गायत्रिसाम अर्थात् वंश
 कहा गया है।” तलघकार ब्राह्मण का यह अर्थन शङ्करने किया है।

जैमिनीयब्राह्मण जो सम्प्रति मिश्रता है उसका अध्यायक्रम

* जैमिनीय श्रौतसूत्र समग्र समाप्ति नकोदा राजकीय ग्रन्थमण्डल-
 कीर्ति ही होगी।

† जैमिनीय गृह्यसूत्र का कोलेरड सम्पादित भारतीय संस्करण ला०
 मोतीलाल बनारसीदास सैरमिन्हा नज्दर लाहौर द्वारा प्रकाशित किया जायगा।

शाकुन-प्रदर्शित अध्यायक्रम से विभिन्न है। प्रथम तीन अध्याय हैं। पश्चात् उपनिषद् ब्राह्मण आरम्भ होता है। उस में चार अध्याय हैं। केन उपनिषद् चतुर्थाध्याय के अठारहवें खण्ड से आरम्भ होता है, और इक्कीसवें पर समाप्त हो जाता है। वंश इस से पूर्व ही समाप्त हो जाता है। सात खण्ड इस से आगे और हैं। सो सारे मिला के ब्राह्मण के सात अध्याय होते हैं। यदि आर्षेय-ब्राह्मण भी मिला जावे तो सारे आठ अध्याय होते हैं। कर्मसूत्र है और ग्रन्थ मिलने पर इस बात का निर्णय हो जावे।

उपनिषद् ब्राह्मण ।

उपनिषद् ब्राह्मण को एडवर्ड मॅर्टेन महाशय ने अमेरिकन ओरिएण्टल सोसायटी के जर्नल सं० १५ में रोमन-लिपि में सम्पादित किया था। मेरे कहने पर पण्डित रामदेव जी ने उसी से इस का देवनागरी संस्करण तैयार किया था। वही अब यहां छपा गया है।

हस्तलिखित सामग्री ।

जिस हस्तलिखित सामग्री से एडवर्ड ने अपना संस्करण तैयार किया था उस का उल्लेख उस ने अपनी भूमिका में इस प्रकार दिया है—

A. बनेल के नोटानुसार जो लपेटने वाले कागज पर है, वह हस्तलेख "मन्त्राचार हस्तलेख से नकल किया गया," १८७८ सन् में। अन्त में वह लिखता है "मूल की तिथि, कुलुम १०४०=१८२४ सन्। पञ्चमद के हस्तलेख से।"

B. तालपत्री पर लिखे ग्रन्थ से, लगभग ३०० वर्षपूर्व लिखा गया, सिन्धुद्वी से प्राप्त, परन्तु पहले अलेप्पी से लाया गया था। इस के पाठभेद ही दिये गये हैं।

C. बनेल के हाथ की रोमनलिपि में किया हुआ ग्रन्थ। यह १८२४ पर समाप्त हो जाता है।

A. ग्रन्थ का पाठ और B. के पाठभेद ग्रन्थाक्षरों में हरिवर्षीय कागज पर हैं। वे प्रो० जानअवेरे द्वारा रोमन में लिखे गये थे, और काफी प्रो० छिट्ने ने मूल से मिखा ली थी। उन्होंने C. के पाठभेद भी वे दिये थे। इसी कापी से यह संस्करण तैयार किया गया है। मूल अब इण्डिया आफिस लण्डन के पुस्तकालय में है।

हस्तलेखों में ऐसा शीर्षक है —

तलवकारवाण्णो उपनिषद्वाङ्मयम् ।

अनुवाक, खण्ड और कण्डिकादि के विभाग विषय में श्रीअटेल ने यह लिखा है। “वाक्यों (कण्डिकाओं) के अङ्क देने में हस्तलेख असावधान और असङ्गत हैं। A. अनुवाक और खण्डविभाग नहीं देता, परन्तु प्रत्येक अध्याय की कण्डिकाओं पर क्रमशः अङ्क देता है। मैंने अनुवाक और खण्ड विभागों में B. और C. की अथवा कण्डिकाओं के अङ्कों में तीनों हस्तलेखों की साधारण अशुद्धियों और विलोपों का लिखना उपयोगी नहीं समझा। अध्याय २१ से A. और B. अङ्कों का नया प्रकार (कण्डिकाओं की समाप्ति पर) आरम्भ करते हैं। तथापि तीन पट्टी कण्डिकाएं (२१-३) छोड़ते हैं, और २४ को २ लिखते हैं। पर इस के पश्चात् नियमपूर्वक अर्थात् २५=५ इत्यादि, लिखकर तृतीय अध्याय के अन्त तक जाते हैं, ३४=५७। B. में अङ्क देने के एक और क्रम के भी अवशेष हैं। यहां तीसरे अध्याय की प्रथम तीन कण्डिकाओं पर और अङ्क के साथ क्रमशः ५६, ५७ और ५८ लिखा है। B. में ३१८ पर ७०, ३१९ पर ७३, ३२० पर ७६ के अङ्क अधिक हैं। इन अन्तिम तीन अनुवाकों की गणना स्पष्ट ही इस अध्याय के प्रथम तीन से विभिन्न है। साथ ही मूल की कण्डिकाओं के क्रम से भी भिन्न है।

“तीनों हस्तलेख एकही संक्षेप मूल से आय हैं। तीनों में बहुत संशयपूर्ण अक्षरपाठ है। विषय, अक्षर-विन्यास और शब्द-सम्बन्धी

बातों में भी वे असावधानी से लिखे गए हैं। मैंने इन बातों के ठीक करने में स्थतन्त्रता बर्ती है। सब स्थलों में, जो केवल अक्षर-विन्यास सम्बन्धी नहीं हैं, मैंने हस्तलेखों के पाठ-मेव पृष्ठ के नीचे दिये हैं। निर्वेशों की संरक्षता के लिये मैंने प्रत्येक अध्याय में निरर्थक अनुवाक विभाग का ध्यान न करते हुए क्रमशः खण्डाङ्क दे दिया है। हस्त लेखों में कथिडकाओं पर कोई अङ्क नहीं तथापि मैंने यह दे दिया है।

अमेरिकन संस्करण ■ अन्त में अर्टेल महाशय ने चार सूचियाँ दी हैं। [१] आवश्यक शब्दों और ऋषि नामों आदि की सूची। [२] निर्वचनों की सूची। [३] व्याकरण सम्बन्धी प्रयोजनीय स्थल। [४] उद्धरणों की सूची। हमने प्रथम सूची में से ऋषि नाम पृथक् करके उनकी सूची दे दी है। अन्य शब्दों को इस लिए नहीं दिया कि दयानन्द महाविद्यालय के अनुसन्धान विभाग की ओर से उपपञ्चव्य ब्राह्मणों आदि की एक विस्तृत सूची तैयार हो रही है। उसमें ये शब्द और अन्य शब्द भी आवेंगे, अतः उनको यहाँ कांपता आवश्यक नहीं समझा। सूचियाँ (२) और (४) भी हमने दे दी हैं। तीसरी की हम आध्यावर्तीय पण्डितों के लिए अनावश्यक समझते हैं।

व० रामदेव ने पाठमेदों को देने के लिये A.B.C. के डूबाले नहीं दिये। सो आवश्यक होने पर भी यह रह गये हैं। पहले फार्मों में उन्होंने Omitted के स्थान में "ओमि" दिया था। मैंने ओमि ब्रह्म कर उस के स्थान में संस्कृत शब्द "नास्ति" कर दिया है। यह संस्कृत शब्द होने से एतद्देशीय जनों के लिये अधिक उपयोगी है। अर्टेल ने प्रत्येक खर सन्धि पर 'कामे' का चिह्न दिया हुआ था। रामदेव जी ने उस के स्थान में 'ऽ' चिह्न दे दिया था। संस्कृत में यह अनावश्यक है, अतः दूसरे फार्म से मैंने इसे भी हटा दिया है ॥

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मण के सम्बन्ध में विशेष वक्तव्य ।

जैसा पूर्व लिखा जा चुका है, यह ब्राह्मण, वृहद् जैमिनीय ब्राह्मण का एक भागमात्र है । इस का मूल नाम "गायत्र उपनिषद्" है । जै० उ० ब्रा० ४। ७ के अन्त में यही नाम आया है । यह नाम है भी सार्थक, क्योंकि इन सारे अध्यायों में गायत्र साम का ही वर्णन है । उसी से अमृत अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति जताई गई है । जै० उ० ब्रा० ३।४० के आरम्भ में यही कहा गया है—

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन
देवा एतेनर्षयः ॥१॥

अर्थात् यह यही अमृत गायत्र (साम) है । इसी से प्रजापति मुक्त हुआ, इसी से (अग्न्य) विद्वान्, इसी से मन्त्रार्थ द्रष्टा (ऋषि) ।

इस ब्राह्मण में दो स्थलों पर अर्थात् ३।४०-४२॥ और ४।१६, १७॥ पर दो वंश परम्पराएं आई हैं । अन्तिम वंश परम्परा पहली से कुछ ही अग्न्य नाम रखती है । यह है भी छोटी । पहली का आरम्भ "ब्रह्म" से होता है । (१) ब्रह्म ने (२) प्रजापति के दिये । उसने (३) परमेष्ठी के दिये । उसने (४) देवसंविता के दिये इत्यादि ।

शतपथब्राह्मण (माध्यन्दिन) में भी वंशम काण्ड की समाप्ति पर और चौदहवें काण्ड के अन्त से कुछ पढ़ले दो ऋषि-वंशम-पत्नियां आई हैं । पहली में बताया गया है कि स्वयंभू ब्रह्म ने प्रजापति को विद्या पढ़ाई, और उत्तरली में कहा है कि परमेष्ठी को । जै० उ० ब्रा० में एक रूप से इन दोनों का मेल है । अर्थात् ब्रह्म, प्रजापति, और परमेष्ठी यद्यपि समकालीन थे, तथापि गायत्र साम का रहस्य ब्रह्म ने स्वयं परमेष्ठी को नहीं बताया, प्रत्युत यह उस तक प्रजापति द्वारा आया ।

जैमिनीय ब्राह्मण कोई नया ब्राह्मण नहीं ।

शतपथ ब्रा० के द्वि० वंश में ब्रह्म से लेकर अपने आप (वयं) तक ६८ नाम हैं । जै० उ० ब्रा० के प्रथम वंश में ब्रह्म से लेकर वैपश्चित ६० गुप्त लौहित्य तक ५० नाम हैं । प्रत्येक ब्राह्मण के सब वंशों को मिला कर और यदि कुछ नाम छूट गये हैं तो उनका स्थान छोड़ कर भी ब्रह्म से ऋषियों की एक जैसी संख्या होजायगी। इस से प्रतीत होता है कि भार्यावर्त्त के इतिहास में ब्राह्मणों के संकलन का समय प्रायः एक ही था । ब्रह्मा से जो अनेक विद्यायें अनेकों कुलों में चली आई थीं, वही इतिहासयुक्त करके प्रायः एक काल में एकत्र कर ली गई । जैमिनीय ब्राह्मण भी उसी समय संकलित हुआ ।

जब यह ग्रन्थ रूप रहा था, तब श्रीमान् कालेण्ड महाशय ने मुझे पत्र लिखा कि ये अर्द्धल के कई पाठ शुद्ध कर देंगे । तब मैंने उन्हें मुद्रित ७२ पृष्ठ भेज दिये थे । उन्होंने उनके शशिये पर संशोधन कर दिया है । यह भूमिका के अन्त में छाप दिया गया है । अगले पृष्ठों का संशोधन फिर कभी छपा जायगा । इस परिश्रम के लिए जो उन्होंने स्वयं मेरा ध्यान उधर खींच कर किया है, मैं उन का अत्यन्त अनुग्रहीत हूँ ।

इस ग्रन्थ के मूफ पं० विश्वबन्धु एम० ए० शास्त्री, तथा पं० हंसराज पुस्तकालय जालन्धर पुस्तकालय ने दिये हैं । इन दोनों मालिकों का भी मैं कृतज्ञ हूँ ।

भक्तियामय भगवान् अपनी कृपा से इन हृदय-पावक ग्रन्थों के प्रचार में मेरी सहायता करें । **स्वामी**

वयानन्द महाविद्यालय

जालन्धर पुस्तकालय लाहौर

माघ, संक्रान्ति सं० १९७७

भगवद्

श्री कालेगड-प्रदर्शित सटिप्पण पाठ संशोधन ।

पृ०	पंक्ति	प्रकाशित पाठ	संशोधित पाठ
३,	१२	०सिच्येतेवमे०	सिच्येतेवमे०
५,	१	हेऽषा खला	हेषाखला
५,	७	उतैषां खला	उतैषाखला
५,	११	०प्रति यस्य	प्रत्यस्य
हस्त ले० पाठ शुद्ध है । देखो पाठ मेद ।			
७,	६	लोष्टो	लोष्टो
८,	१	ळयित्वा पनि०	ळयित्वापनि०
८,	६	ववर्ज	ववृजे*
८,	८	वहुर्भू०	वहोर्भू०
११,	१२	वै वेद०	वावेद०
१६,	४	यदमृते	यदनृचे
१७,	■	देवा	देवाः
१७,	■	कस्मावु	कस्मा उ
२०,	६	०सप्ताहोरात्राः	सप्त होत्राः
३४,	१५	अभिपर्यक्त	अभिपर्यस्त
३७,	३	उष्वा	[उष्वा]
३७,	८	इ चै०	इ [स्म] चै०
४०,	२	तद्यद्वै	तद्यद्वै
४६,	१	प्रजापतिर्वा वेद अग्र	प्रजापतिर्वावेदमग्र
४६,	१२	सुनोति	सनोति
५३,	२	०सर्क	०सर्क
५३,	४	०यतन	०यतना †
५८,	३	०पुनीध्वं न पूता वै	०पुनीध्वमपूता वै
६०,	१५	ययाच ‡	पपाच or पपच

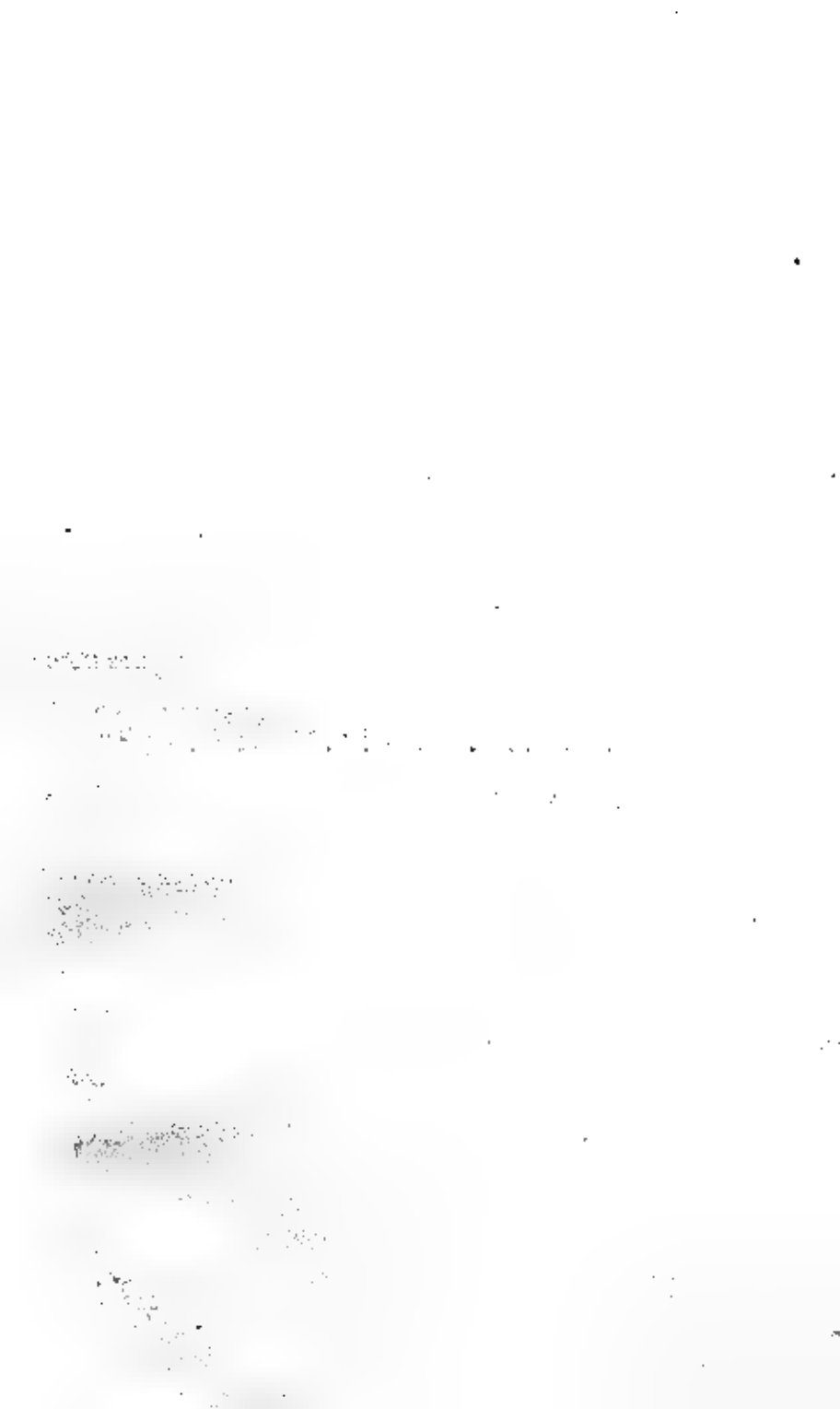
* The mss. (Grantha) have ववृज or वव्रज which nearly is the same in Grantha. If the Sandhi is effaced we ought to return ववृजे ।

† इदमायतना is a bahuvrīhi compound, वाकमेद ओ नीचे लिया है, वह ठीक है ।

‡ Must be corrupt.

शुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
भू० ४	५	सिद्धि०	संदि०
॥ ६	४, ६, ८, ११	अग्नि	सूर्य
१३	१३	०सा	०सा—
२४	१	यत्पर तद०	यत्परतद०
३८	३	शामूल प०	शामूलप०
५४	१३	श्रेय स	श्रेयस
६३	२	एवं वि०	एवंवि०
१००	१५	०भ्य	०भ्य—
१०६	१४	वाङ्	वाङ्
१०७	१५	० पाणौ	० पानौ
१११	७	युष्मासु	युष्मासु
११३	११	रेतो	रेतो
१३६	३	०सपृष्ठाति	स्पृष्ठाति
१४२	८	स्वमस्य	स्वर्गस्य
१४६	८	चकुलं	चकुलं



जैमिनीय-उपनिषद्-ब्राह्मणम्

मजापतिर्वा इदं प्रथेण वेदेनाऽनयद् पदस्येऽदं जितं
 तत् ॥ १ ॥ स ऐस्ततेऽस्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यक्ष्यन्त
 इमां वाच तेजितिं जेष्यन्ति येऽयम्यम । इन्त प्रयस्य वेदस्य रस-
 माददा इति ॥ २ ॥ स भूरित्येवर्गेदस्य रसमादत्त । सेऽयम्पृ-
 थिव्यभवत् । तस्य यो रसः प्राणोदत् सौऽग्निरभवद्रसस्य रसः
 ॥ ३ ॥ भुव इत्येव यजुर्गेदस्य रसमादत्त । तदिदमन्तरिक्षम-
 भवत् । तस्य यो रसः प्राणोदत् स वायुरभवद्रसस्य रसः ॥ ४ ॥
 स्वरित्येव सामवेदस्य रसमादत्त । सौऽसौ द्यौरभवत् । तस्य यो
 रसः प्राणोदत् स आदित्योऽभवद्रसस्य रसः ॥ ५ ॥ अथैऽकस्ये-
 ऽथाऽक्षरस्य रसे नाऽशक्रोदादातुम् ओमित्येतस्यैऽव ॥ ६ ॥
 सेऽयं वागभवत् । ओमेव नामैऽषा । तस्या उ प्राण एव रसः ॥ ७ ॥
 तान्येतान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री ।
 तद् उ ब्रह्माऽभिसंप्रथते । अष्टाक्षकाः पञ्चवस्तेनो पञ्चव्यम् ॥ ८ ॥ १, १

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स यद् ओमिति सोऽग्निर्वागिति पृथिव्योमिति वायुर्वा-
 गित्यन्तरिक्षोमितीत्यादित्यो वागिति द्यौरोमिति प्राणो वागित्येव
 वाक् ॥ १ ॥ स य एवं विद्वानुद्गायत्योमित्येवाऽभिमादाय पृथि-
 व्याभ्यतिष्ठापयत्योमित्येव वायुमादायाऽन्तरिक्षे प्रतिष्ठापयत्यो-
 मित्येवाऽऽदित्यमादाय दिवि प्रतिष्ठापयत्योमित्येव प्राणमादाय
 वाचि^३ प्रतिष्ठापयति ॥ २ ॥ तद्वैऽतच्छैलना^४ गायत्रं गायन्त्यो-
 वा ३ च ओवा ३ च ओवा ३ च हुम्भा ओवा इति ॥ ३ ॥ तदु ह
 तत्पराङ् इवाऽनायुष्यम् इव । तद्वायोश्चाऽपां चानुवर्त्म गेयम् ॥ ४ ॥
 यद्वै वायुः पराङ् एव पवेत क्षीयेत (स) । स पुरस्ताद्वाति स
 दक्षिणतस्स पश्चात्स उत्तरतस्स उपरिष्ठात्स सर्वा दिशोऽनुसं-
 वाति ॥ ५ ॥ तदेतदादुरिदानीं वा अयमितोऽवासीदथेऽत्याद्वाती
 ऽति । स यद्रेष्माणं जनमानो निवेष्टमानो वाति क्षयादेव विभ्यव
 ॥ ६ ॥ यदु इवा^{१०} आपः पराचीरेव प्रसृतास्स्यन्देरन् क्षीयेरँस्ताः ।
 यदङ्गीसि^{११} कुर्वाणा निवेष्टमाना आवर्तान् सृजमाना धन्ति क्षयादेव
 विभ्यतीः । तदेतद्वायोश्चैऽवाऽपां चाऽनु वर्त्म गेयम् ॥ ७ ॥ १, २ ॥
 प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

२. १ अन्तरीक्षं । २ आपा । ३ वाची । ४ छेत्तुं, क्षीयुं । ५
 च । ६ पराङ्, पुराद् । ७ रिष्ठात् । ८ क्षीत् । ९ यजमानो, जमानो ।
 १० यद् ११ अयद्, यद् १२ अङ्गीसि ।

ओवा ओवा ओवा हुम्भा ओवा इति करोत्येव । एताभ्यां
 सर्वमायुरेति ॥ १ ॥ स यथा हृत्तमाक्रमैराक्रममाण इयादे-
 वमेवैऽते द्वे-द्वे देवते संथायेऽयां लोकान् रोहन्ति ॥ २ ॥ एक उ
 एव मृत्युरन्वेत्यशनयैऽव ॥ ३ ॥ अथ हिङ्गुरोति । चन्द्रमा
 वै हिङ्गुरोऽग्रमु वै चन्द्रमाः । अन्नेनाऽशनयां व्रन्ति ॥ ४ ॥
 तां-तामशनयाममेन हत्वोऽमित्येतमेवाऽऽदित्यं समथाऽतिमुच्यते ।
 एतदेव दिवश्छिद्रम् ॥ ५ ॥ यथा खं वाऽनसं स्याद्द्वयस्य वैऽवमे-
 तदिवश्छिद्रम् । तदग्निमभिस्संछुप्तं दध्यते ॥ ६ ॥ यद्वायवस्योऽऽ-
 र्ध्वं हिङ्गारात्तदमुतम् तदात्मानं दध्यादथो यजमानम् । अथ
 यदितरात् सामोऽऽर्ध्वं तस्य प्रतिहारात् ॥ ७ ॥ स यथाऽग्निरा-
 पस्संछुज्येरन् यथाऽग्निनाऽग्निस्संछुज्येत यथा क्षीरे क्षीरमा-
 सिच्यादेऽमेवैऽतदक्षरमेताभिर्देवताभिस्संछुज्यते ॥ ८ ॥ १, ३ ॥

अथमेऽनुवाके वृत्तीयः अष्टकः ।

तं वा एतं हिङ्गारं हिम्भा इति हिङ्गुर्वन्ति । श्रीर्वै भाः ।
 असौ वा आदित्यो भा इति ॥ १ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु गमे

३. १ ओव २ येव ३ अक्रम ४ इति ५ त्वां, त्व ६ नस ७ रसस्य
 ८ स ९ त्वद्, तद् (१) १० रात् ।

इति । यद् इति स्त्रीणाम् प्रजननं निगच्छति तस्मान्नतो ब्राह्मण
 अधिकल्पो जायतेऽतिव्याधी राजन्यश्चरः ॥ २ ॥ एतं ह वा
 एतं न्यङ्गमनु कृषभ इति । यद् इति निगच्छति तस्मात्ततः पुण्यौ
 बलीवर्दो दुहाना धेनुरुक्ता दशवाजी जायन्ते ॥ ३ ॥ एतं ह वा
 एतं न्यङ्गमनु गर्दभ इति । यद् इति निगच्छति तस्मात्स पापीया-
 ज्छ्रेयसीषु चराति तस्मादस्य पापीयसश्च्रेयौ जायतेऽश्वतरो वा-
 ऽश्वतरी वा ॥ ४ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु कुश्र इति । यद् इति
 निगच्छति तस्मात् सोऽनार्यस्सन्नपिराज्ञः माम्नोति ॥ ५ ॥ तं है-
 ज्तमेके हिङ्गारं हिम्भा ओवा इति बहिर्ध्वेज्व हिङ्गुर्वन्ति । बहिर्ध्वे
 ऽव वै श्रीः । श्रीर्वै साम्नो हिङ्गार इति ॥ ६ ॥ स य एनं तत्र
 भूयाद्बहिर्ध्वान्वा अयं श्रियमधित पापीयान् भविष्याति^१ ।

स यदा वै श्रियतेऽथाऽग्नौ मास्तो भवति ।

क्षिमेवत मरिष्यत्यग्नौ नम्रासिष्यन्ति^२ इति तथा हैऽव स्यात्
 ॥ ७ ॥ तस्माद् है तं हिङ्गारं हिं वो इत्यन्तरिध्वेज्वाऽऽत्मन-
 ज्येयः । तथा ह न बहिर्धा श्रियं कुरुते सर्वमायुरेति ॥ ८ ॥ १, ४

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः अण्डः ।

४. ३ स्त्रिया ४ जायत इतिव्य ५ ययत् इ य ७ 'इति' अधिक =
 नाकष्यरस, नार्थ्यस ६ ओम् । बहिर्ध्वेज्व.... तत्र भूयाद् १०
 बहिर्ध्वे, ओम् । य ११ यसीऽति ।

सा हैऽषा खला देवताऽपसेधन्तीऽतिष्ठति । इदं वै त्वमत्र
पापमकर्णोऽहैऽऽप्यसि । यो वै पुण्यकृत् स्यात् स इहैऽयादिति
॥ १ ॥ स ह्य्यादपश्यो वै त्वं तद्यदहं तदकरव तद्वै मा त्वं नाऽका-
रयिष्यस्त्वं वै तस्य कर्ताऽसीति ॥ २ ॥ सा ह वेदसत्यम्माऽऽहे-
जति । सत्यं हैऽषा देवता । सा ह तस्य मेऽऽशे यदेनमपसेधेत्
सत्यमुपैऽवह्यते ॥ ३ ॥ अथ होवाचैऽऽश्वाको वा वार्ष्णे-
जनुवक्ता वा सात्यकीर्त उतैषा खला देवताऽपसेदुमेव ध्रियतेऽ-
स्यै दिशः ॥ ४ ॥ [तद्] दिवोऽन्तः । तदिमे यावापृथिवी
संभ्रित्यतः । यावती वै वेदिस्तावतीऽयमपृथिवी । तद्यत्रैऽतथा-
त्वालं खातं तत्सम्पति स दिव आकाशः ॥ ५ ॥ तद्वहिष्पवमाने
स्त्यमाने मनसोऽद्यूहीयात् ॥ ६ ॥ स यथोऽच्छायम्यति यस्य
मपधेतैऽवमेवैतया^१ देवतयेदममृतमभिपर्येति यत्राऽयमिदं तपती-
ति ॥ ७ ॥ अथ होवाच—॥ ८, ९, ५ ॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः अणकः ।

गोबलो वार्ष्णः क एतमादित्यमर्हति समयेऽनुम । दूराद्वा एव
एतत् तपति न्यक्ष । तेन वा एतम्पूर्वेण सामपथस्तदेव मनसा-

६. १ 'जति' अधिक २ त्वद् ३ अर्क ४ स ५ सत्यम्मेह ६ मन्त्र
७ अको ८ सत्यकीर्त ९ अ १० द्यूय ११ प्रत्यस्य १२ ज्ञातस्य ।

हृत्योऽपरिष्ठा देतस्वैऽतस्मिन्मृते निद्व्यामिति ॥ १ ॥ तद्
 होवाच आध्यायानिस्समयैऽनाऽतदेनं कस्तद्वेद । यद्येता आपो वा
 अभितो यद्वायुं वा एष उपह्वयते रश्मीन्वा एष तदेतस्मै व्यूह-
 तीति ॥ २ ॥ अथ होऽवाचोऽलुक्यो जानश्रुतेयो यत्र वा एष
 एतत् तपत्येतदेवामृतम् । एतच्चैद् ग्रामोति ततो मृत्युना पाप्मना
 व्यावर्तते ॥ ३ ॥ कस्तद्वेद यत्परेणाऽऽदित्यमन्तरिक्षमिदमना-
 लयनमवरेण ॥ ४ ॥ अथैऽतदेवाऽमृतम् । एतदेव मां युयम्थाप-
 यिष्यथ । एतदेवाहं नातिमन्य इति ॥ ५ ॥ तान्येतान्यष्टौ ।
 अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री । तद् ब्रह्मा-
 भिसम्पद्यते अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥ ५ ॥ १, ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

ता एता अष्टौ देवताः । एतावदिदं सर्वम् । वे [.....]
 करोति ॥ १ ॥ स नैषु लोकेषु पाप्मने भ्रातृव्यायावकाशं
 कुर्यात् । मनसैनं निर्मजेत् ॥ २ ॥ तदेतद्विज्ञाऽभ्यनूच्यते ।

“चत्वारि वाक् परिमिता पदानि

तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः ।

६, १ वाऽयं २ तद्, त ३ स्वैऽअथो ५ अथो ६ऽवाचा (१) उलुक्यो,
 उलुक्यो ७ बह ८ परोक्ष ९ अन्विष्य १० त, प्रापि ११ यत् ।

गुहा त्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ति

तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति” इति ॥३॥

सद् यानि तानि गुहात्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ती (ऽती) ऽम एष
ते लोकाः ॥४॥ तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्तीति । चतुर्भागे ह वै
तुरीयं वाचः । सर्वयास्य वाचा सर्वैरेभिलोकैस्सर्वेणास्य कृतम्भ-
वाति य एवं वेद ॥ ५ ॥ स यथाऽमान्मास्यमृत्वा लोष्टो विध्वं-
सत एषमेव स विध्वंसते य एवं विद्वोऽसमुपवदति ॥ ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके सप्तमः अष्टकः ।

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

मजापतिर्वा इदं त्रयेण वेदेनाऽजयद्यदस्येदं जितं तत् ॥१॥
स ऐक्षतेस्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यक्ष्यन्त इमां वाच ते
जितिं जेष्यन्ति येऽयम्भम ॥ १ ॥ हन्तेऽमं त्रयं वेदमपीळयानीति
॥ २ ॥ स इमं त्रयं वेदमपीळयत् । तस्य पीळयःनेकमेवाक्षरं ना-
क्षरौव पीळयितुमिति यदेतत् ॥ ४ ॥ एष उ ह वाच सरसः ।
सरसा ह वा एवंविदस्त्रयीविद्या भवति ॥ ५ ॥ स इमं रसम्पी-

७. १ तानि २ लो, ओमः ३ गयन्ति ४ तानि ५ ओम् ६ कुरवा
७ लोष्टो ८ ओम् एषम विध्वंसते ९ स एषो... उपवदन्ति ।

१. ने २—वा, ४ ३—लो ४. प्रथं ।

ळयित्वा पमिवायोऽऽर्ध्वोऽद्रवत् ॥ ६ ॥ तं द्रवन्तं चत्वारो देवाना-

मन्वपहपन्निन्द्रश्चन्द्रो रुद्रस्समुद्रः । तस्मादेते श्रेष्ठा देवानाम एते श्रे-

नमन्वपश्यन् ॥ ७ ॥ स योऽयं रस आसीत्तदेव तपोऽभवत् ॥ ८ ॥

त इमं रसं देवा अन्वैक्षन्त । तेऽभ्यपश्यन्त स तपो वा अभूदिति

॥ ८ ॥ इममु वै त्रयं वेदम्परीक्षित्वा तस्मिन्नेतदेवात्तरमपीळित-

मविन्दन्मोमिति यदेतत् ॥ १० ॥ एष उ ह वाव सरसः । तेनै-

नम्प्रायुवन् । यथा मधुना लाजान् प्रयुयादेवम् ॥ ११ ॥ तेऽभ्य-

तप्यन्त । तेषां तप्यमानानामाप्यायत वेदः । तेऽनेन च तपसाऽपीनेन

च वेदेन तामु एव जितिमजयन् याम्प्रजापतिरजयत् । त एते सर्वे

एव प्रजापतिमात्रा अयाश्म अयश्म इति ॥ १२ ॥ तस्माच्चप्यमा-

मस्य भूयसी कीर्तिर्भवति भूयो यज्ञः । ॥ य एतदेवं वेदैवमेवा-

ऽपीनेन वेदेन यजते । यदो याजयत्येवमेवाऽपीनेन वेदेन याजयति

॥ १३ ॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽर्तिरस्ति य एवं वेद । स

य एवैनमुपवदति सार्तिमृच्छति ॥ १४ ॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः अष्टः ।

५. छन्दे ८. ओम् ७. सेनं = अन्. ऐच = तेभ्यप १०-इयस्त-११

पीळितं, ता १२ वा १३ प्राञ्च १४ ययाद् १५. तेनः ते एन.

तेनेन १६. यच १७-यम् १८ अत्रियाम् १९ ओम् यजते यज्ञो-वेदेन

२० एव अपि २१ अस्ति २२ उपवति उत्तवति २३ अच्छति, अय-

तदाहुर्देवो ओवा इति गीयते कात्रभवति क सामेति ॥१॥ ओम
इति वै साम वागित्पृक् । ओमिति मनो वागिति वाक् । ओमिति
माणो वागित्येव वाक् । ओमितीन्द्रो वागिति सर्वे देवाः । तदे-
तदिन्द्रमेव सर्वे देवा अनुयन्ति ॥२॥ ओमित्येतदेवाक्षरम् । एतेन
वै संसवे परस्येन्द्रं वृज्जीत । एतेन ह वै तद्वको दास्य्य आजके-
शिनामिन्द्रं वर्ज्ज । ओमित्येतेनैवाऽऽनिनाय ॥३॥ तान्येतान्यष्टौ ।
अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । अक्ष उ गायत्री । तदु ब्रह्माभिसम्प-
द्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥४॥ तस्यैतानि नामानीन्द्रः
कर्माक्षितिरमृतं व्योमान्तो वाचः । बहुभूयस्सर्वं सर्वस्मा-
दुत्तरं ज्योतिः । ऋतं सत्यं विज्ञानं विवाचनमप्रतिवाच्यम् । पूर्वं
सर्वं सर्वा वाक् । सर्वमिदमपि धेनुः पिबते परागर्वाक् ॥५॥१॥६॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः अष्टाक्षः ।

सा पृथक्सलिलं कामदुघाक्षिति प्राणसहितं चक्षुश्श्रोत्रं
वाक्प्रभृतस्मनसा व्याप्तं हृदयाग्रं मन्त्राक्षरं भक्तं मन्त्रशुभं वर्षपवित्रं

१. उवा । २. ओवात (= ओवा ३?) ३. अग्न ।

४. अष्टाक्ष-१५-शीन्द्र-जनि-१६. अक्षज ।

७. अनिनाय १८-६. क्षिति । ८-हिर १०. विज्ञान-११-अः ।

१ सा । २-सुधोक्-१३-दयोक्-१४. सक्त्रम्, अत्रम्, भृक्त्रम् ।

गोभज स्पृथिव्युपरं तपस्तनु वरुणापरियतनमिन्द्रश्रेष्ठं सहस्राक्षर-
 मयुतधारममृतं दुहानां सर्वान् इमं लोकानभिविचरतीति ॥१॥
 तदेतत् सत्यं मत्सरं यदोम इति । तस्मिन्नापः प्रतिष्ठिता अभ्यु-
 पृथिवी पृथिव्यामिमे लोकाः ॥२॥ यथा सूच्या पलाशानि
 सन्तुलणानि स्युरेवमेतेनाक्षरेणोमे लोकास्सन्तुलणाः ॥३॥
 तदिदमिमान् अतिविध्य दशधा क्षरति क्षतधा सहस्रधाऽयुतधा
 प्रभुतधा (नियुतधा) ऽर्बुदधा न्यर्बुदधा^{११} निखर्वधा^{११} पद्ममक्षिति-
 च्योमान्तः ॥४॥ यथौघो विष्यन्दमानः परः-परोवरीयान् भव-
 त्येवमेवैतदक्षरम्परः-परोवरीयो^{१२} भवति ॥५॥ ते हैते^{१४} लोका
 ऊर्ध्वा एव श्रिताः । इम एव त्रयोदशमासाः ॥६॥ स य एवं
 विद्वस्तुल्यमस्ति स एवमेवैतल्लोकानातिवहति । ओमित्येतेनाक्षरेणा-
 मुमादित्यभ्युख आधत्ते । एष ह वा एतदक्षरम् ॥७॥ तस्य^{१५}
 सर्वमाप्तमवाति सर्वं जितं न हाऽस्य कश्चन^{१६} कामोऽनाप्तो भवति
 य एवं वेद ॥८॥ तद्ध पृथुर्वैर्न्यो दिव्यान् ब्राह्म्यान् पश्यच्छ ।

११. पर्यवेष्ट- १-८ । ७ ओमिति । ८-पुः । ९ आत्मा, 'इदं' और
 दशधा के मध्य स्थान रिक्त है । १० निर्बु- ११ निखर्वाक्ष, निखर्वहान् ।
 १२-नाम् । १३ ओम् । परः परो १४ है । १५ तस्मि । १६ कश्चन । १७ है ।

स्थूणां दिवस्तम्भनीं सूर्यं मादुरन्तरिचो सूर्यः
 पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमीश्शिशिरै^{१९} भूरिभाराः
 किं स्वन्महीरधितिष्ठन्त्याप इति ॥ ६ ॥ ते ह
 प्रत्यूचुस्

स्थूणामेव दिवस्तम्भनीं सूर्यं मादुरन्तरिचो
 सूर्यः पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमीश्शिशिरै^{१९} भूरि-
 भारास्सत्यन्महीरधितिष्ठन्त्याप^{२०} इति ॥ १० ॥

ओमिरयेतदेवाक्षरं सत्यम् । तदेतदापोऽधितिष्ठन्ति ॥ ११ ॥ ११ ॥ १० ॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः अक्षरः । द्वितीयोऽनुवाकस्तृतीयः ।

—:०:—

प्रजापतिः प्रजा अमृजत । ता एनं सृष्टा अन्नकाशिनीरभित-
 स्समन्तम्पर्यविशन् ॥ १ ॥ ता अब्रवीत् किंकामास्थेति । अन्नाद्य-
 कामा इत्यनुबन्धः ॥ २ ॥ सोऽब्रवीदेकं वै वेदमन्नाद्यमद्यत्ति सामैव ।
 तद्गः प्रयच्छानीति । तन्नः प्रयच्छेत्यनुबन्धः ॥ ३ ॥ सोऽब्रवीदिमान्वै
 पशून् भूयिष्ठमुपजीवामः । एभ्यः प्रयमम्पदास्यामीति ॥ ४ ॥
 तेभ्यो हिङ्गारम्प्रायच्छत् । तस्मात्पशवो हिङ्गुरिक्तो विजिह्वस-

१८-मिश्र । १९-शिशिरे । २०-अधित ।

१. वा । २. वाम- । ३. पृथ- । ४ -कृतो ।

माना इव चरन्ति ॥५॥ प्रस्तावम्मुध्येभ्यः । तस्माद्बु ते रतुवत्^१
 इवेदम्मे भविष्यत्पदो मे भविष्यतीति ॥६॥ आदि वयोभ्यः ।
 तस्मात् तान्याददानान्धुपापपातमिव चरन्ति ॥७॥ उद्गीथं देवेभ्यो
 ऽमृतम् । तस्माच्चेऽमृताः ॥८॥ प्रतिहारमारण्येभ्यः पशुभ्यः ।
 तस्माच्चे प्रतिहृतास्तन्तस्यमाना इव चरन्ति ॥९॥ १।१.१॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः अष्टकः ।

उपद्रवं गन्धर्वाप्सरोभ्यः । तस्माच्च उपद्रवं गृह्णन्त इव
 चरन्ति ॥१॥ निधनम्पितृभ्यः । तस्माद्बु ते निधनसंस्थाः ॥२॥
 तद्यदेभ्यस्तत् साम प्रायच्छदेतमेवैभ्यस्तदादित्यम्प्रायच्छत् ॥३॥
 स यदनुदितस्सहिङ्कारोऽर्घोदितः मस्ताव आसंभवमादिर्योध्यन्विन
 उद्गीथोऽपराहृष्टः प्रतिहारो यदुपास्तमर्थं लोहितायाति स उपद्रवो
 ऽस्तमित एव निधनम् ॥४॥ स एष सर्वैर्लोकेस्समः । तद्यदेष
 सर्वैर्लोकेस्समस्तस्मादेष एष साम । स ह वै सामवित् स साम
 वेद य एवं वेद ॥५॥ ते ऽब्रुवन् दूरे वा इदमस्मत् । तत्रेदं कुरु

१. रतुवत्तेव । २. प्रतिहृतास् । ३. तावु (१) स्तु (१) यमानाः
 तातास्यमाना ।

१-प्रापसरेभ्यः । २-अर्घ्योदित- ३-आदित्यः । ४-प्रतिहार 'स सामवेद'
 देता ह ।

यत्रोपजीवामेति ॥६॥ तद्वत्तन्मभ्यत्यनयत् । ■ वसन्तमेव हिङ्गार-
मकरोद्ग्रीष्मप्रस्तावं वर्षासुद्रीथं शरदम्पतिहारं हेयन्तं निधनम् ।
मासार्धमासावेव सप्तमावकरोत् ॥७॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि ।
तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥८॥ तत् पर्जन्यमभ्यत्यनयत् । स
पुरोवातमेव हिङ्गारमकरोत् ॥९॥ १ । १२॥

तृतीयेऽनुषाके द्वितीयः खण्डः ।

जीमूतान् प्रस्तावं स्तनयित्नुमुद्रीथं विश्रुतम्पतिहारं द्यौर्ह
निधनम् । यद्वृष्टात्मजाश्चौषधश्च जायन्ते ते सप्तम्यावकरोत्
॥१॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥२॥
तद्यज्ञमभ्यत्यनयत् । स यजूष्येव हिङ्गारमकरोद्वचः प्रस्तावं
सामान्युद्रीथं स्तोमम्पतिहारं छन्दो निवनम् । स्वाहाकारवषद-
कारावेव सप्तमावकरोत् ॥३॥ तेऽब्रुवन् नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव
कुरु यत्रोपजीवामेति ॥४॥ तत्पुरुषमभ्यत्यनयत् । स मन एव
हिङ्गारमकरोद्वाचम्प्रस्तावम्पाणमुद्रीथं चक्षुःप्रतिहारं श्रोत्रंनिधनम्
रेवश्चैव प्रजां च सप्तमावकरोत् ॥५॥ तेऽब्रुवन् न वा एनत्तद-

५-म इति । ६ कर- । ७ प्रस्तावः । वर्षा उद्रीथः, शरदम्पतिहारः
स्तोम शरदम्पतिहारम् ।

१. प्रस्तावैवम् । २-तिर । ३. सप्तम- । ४. म इति । ५. अभ्यत्यन-

कर्मोपजीविष्याम इति ॥६॥ स विद्यादहमेव सामास्मि मय्येता
देवता इति ॥७॥ १ । १३॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

■ इदं देवतस्स्यात् । यावद् वा आत्मना देवानुपास्ते
तावदस्मै देवा भवन्ति ॥ १ ॥ अथ य एतदेवं वेदाऽहमेव
सामाऽस्मि मय्येतास्सर्वा देवता इत्येवं हाऽस्मिन्नेतास्सर्वा देवता
भवन्ति ॥२॥ तदेतदेव श्रुत्वा । सर्वा इ वै देवताम्भृण्वन्त्येवं-
विदम्पुण्याय साधवे । ता एनम्पुण्यमेव साधु कारयन्ति ॥३॥

■ इ स्माऽऽह मुचिरादशैलनो वो यज्ञकामो मायैव स वृणीताम् ।
तत एवैऽनं यज्ञ उपनंस्यति । एवंविदं बुद्धायन्तं सर्वा देवता
अनुसंतप्यन्ति । ता अस्मै तृप्तास्तथा करिष्यन्ति ययैऽनं यज्ञ
उपनंस्यतीऽति ॥४॥ १ । १४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवा वै स्वर्ग लोकमैप्सन् । तं न शयाना नाऽऽसीना न
तिष्ठन्त्यो न कम्बन्ते नैव केमचन कर्मणाऽऽप्नुवन् ॥ १ ॥ ते
देवाः मजापतिमुपाधावन् स्वर्गं वै लोकं मैप्सिष्यं । तं ■ शयाना

१-देवता-२-ओम् । ३-यस्मै । ४-देवभूत । देवभूत । एवभूत । ५-न ।

१-ऽऽसीना । २-त्यो । ३-उपाय- ।

नाऽऽसीना न तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचनकर्मणाऽऽपाम ।
 तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गं लोकमाप्नुयामेऽति ॥२॥ तानम्रवीत्
 साम्राऽनृचेन स्वर्गं लोकम्प्रयातेऽति । ते साम्राऽनृचेन स्वर्गं
 लोकम्प्रायन् ॥ ३ ॥ अ वा इमे साम्राऽयुरिति । तस्मात्प्रसाज
 तस्माद् प्रसाम्यजयन्ति ॥४॥ देवा वै स्वर्गं लोकमायन् । त एता-
 न्यृक्पदानि शरीराणि धून्वन्त आयन् । ते स्वर्गं लोकमजयन् ॥५॥
 तान्या दिवः प्रकीर्णान्यशेरन् । अथेऽमानि प्रजापतिर्ऋक्पदानि
 शरीराणि सञ्चित्वाऽभ्यर्चन् । यदभ्यर्चन्ता एवर्चोऽभवन् ॥६॥
 १ । १५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सैश्वर्गभवदियमेव श्रीः । अतो देवा अभवन् ॥१॥
 अथैऽधामिमामसुरादिश्रयमविन्दन्व । तदेवाऽऽसुरमभवत् ॥२॥
 ते देवा अभवन् या वै नश्रीरभूदविदन्त तामसुरः । कथं न्वेषा-
 मिमांश्रियन्पुनरेव ज्येमेऽति ॥३॥ तेऽमुवन्नृच्येव साम मायामेति ।

४ प्रयामे । ५ प्रयाते, प्रयामे, प्रयामे । ६ लोकमप्रायत् । ७ इसके
 बाद कुछ गड़ बड़ है । ४ के पूर्व यह सख में लिखा है 'त एतान्यृक्पदानि
 शरीराणि धून्वन्त आयन् (रयन्) । ते स्वर्गं लोकमजयन् (-अत्) ।
 अथेऽमानि प्रजापतिर्...ता एवर्चोऽभवन् । ८ यत् । ९ अमे । ते स्वर्ग
 मजयन्, यहाँ अधिक है । १० ओम् । यद्..... । ११ ओम् । ता एव ।

१ आत्- २ तद् । ३ एवा । ४ सञ्चित्वा । ५ अय ।

ते पुनः प्रस्थादुत्पाचं सामाऽगायन् । तेनाऽस्मांल्लोकाद-
 मुराननुदन्त ॥४॥ तद्वै माध्यन्दिने च सवने तृतीयसवने च
 नर्चोऽपराधोऽस्ति । स यत्ने ऋचि गायति तेनाऽस्मांल्लोकाद-
 द्विषन्तम्भ्रानृण्य नुदते । अथ यदमृतं देवतासु प्रातस्सवनं गायति
 वेन स्वर्गं लोकमेति ॥५॥ प्रजापतिर्वै साम्नेऽर्माजितिमजयथाऽस्य
 ऽयं जितिस्ताम । स स्वर्गं लोकमारोहत् ॥६॥ ते देवाः प्रजापति-
 मुपेत्याऽब्रुवन्स्मभ्यमपीऽदं साम प्रयच्छेति । तथेति । तदेभ्य-
 स्सामं सम्यच्छ्व ॥७॥ तदेनानिदं साम स्वर्गं लोकं नाऽकामयत्
 वोढुम् ॥८॥ ते देवाः प्रजापतिं मुपेत्याऽब्रुवन् यद्वै नस्सामं प्रादा-
 इदं वै नस्तस्वर्गं लोकं न कामयते वोढुमिति ॥९॥ तद्वै पाप्मना
 संश्रजतेति । सोऽस्य पाप्मेति । ऋमिति । तद्वै सामं सज-
 ॥१०॥ तदिदम्प्रजापतेर्गर्ह्यमाणमतिष्ठदिदं वै सा सत्पाप्मना सम-
 सात्तुरिति । सोऽब्रवीद्यस्त्वैतेन व्यावर्तयाद्ध्येव स पाप्मनावर्ताता
 इति ॥११॥ स य एतद्वै प्रातस्सवने व्यावर्तयति व्येवं स
 पाप्मना वर्तते ॥१२॥ १ । १६॥

अतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

६-दुर्गस्य । ७-क्रीतं-५-पराधो । ८-चि । १०-मृते । ११-तम् ।
 १२-अथ-१३-न कामयते, न कामयते । १४-कामार्थं-सामम् ।
 १५-लोकं-१६-एवं ।

तदाहुर्यदोवा ओवा इति गीयते काचर्भवति क सार्मेति ॥१॥
 प्रस्तुवन्नेवाष्टाभिस्तारैः प्रस्तौति । अष्टाचरा गायत्री । अक्षरस्य चरं
 अक्षरम् । तच्चतुर्विंशतिस्सम्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यचरा गायत्री ॥२॥
 तामेताम्प्रस्तावेनर्धमाप्त्वा या श्रीर्याऽपचितिर्यस्त्वर्गो लोको यद्यश्च
 यदन्नाद्यं तान्यागायमान् आस्ते ॥३॥ १।१।७।

अतुर्थेऽनुवाके तृतीयः अण्डः ।

प्रजापतिर्देवानसृजत । तान् मृत्युः पाप्मान्वयस्यत ॥१॥
 ते देवा प्रजापतिमुपेयास्तुवन् कस्मादु सोऽसृष्टा मृत्युचेभः पाप्मा-
 नमन्कस्तुवन्मांसियेति ॥२॥ तानब्रवीच्छन्दसि सम्भरत । तानि
 यथायतनम्प्रविशत ततो मृत्युना पाप्मान् न्यस्यस्तेष्वेति ॥३॥
 वसवो मरुर्षी समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयन्
 ॥४॥ रुद्राक्षिष्ठुमं समभरन् । तां ते प्राविशन् । सत्यसाधव्यव-
 यन् ॥५॥ आदिता जगर्षी समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान्
 साऽच्छादयन् ॥६॥ विषेदेवाऽभुष्टुमं समभरन् । तां ते प्राविशन् ।
 तान् साऽच्छादयन् ॥७॥ तान् अस्यामृष्यस्वरायाम्मृत्युनिरा-
 म

१. प्रस्तावेष्टवेच । २-र्ग ।

१. ता, ताः । २. कस्मा । ३-या । ४-सृष्टा । ५-यन्
 ६-वसवः, वस्य- । ७. न्यस्य, तान् ।

नाद्यथा मणौ मणिसूत्रम्परिपश्येदेवम् ॥८॥ ते स्वरम्प्राविशन् ।
 तान् स्वरे सतो न^१ निरजानात् । स्वरस्य तु घोषेणाऽन्यैव ॥९॥
 तं ओमितेदेवाक्षरं समारोहन् । एतदेवाक्षरं त्रयीविद्या । यददो^२
 ऽमृतं तपति तत्प्रपथ सतो मृत्युना पाप्मना व्यावर्तन्त ॥१०॥
 एवमेवैवं विद्वान् ओमितेदेवाक्षरं समारुह्य यददो^३ ऽमृतं तपति
 तत्प्रपथ सतो मृत्युना पाप्मना व्यावर्ततेऽथो यस्यैवं विद्वानुद्गा-
 यति ॥११॥ १।१८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्तमासः ॥

—:०:—

अथैतदेकविंशं साम ॥१॥ तस्य त्रय्येव विष्वा हिङ्गतरः ।
 अग्निर्वायुरसावादित एष प्रस्तावः । इम एव लोका आदिः ।
 तेषु^४ हीदं लोकेषु सर्वमाहितम् । श्रद्धां यज्ञो दक्षिणा एष उद्गीथः ।
 दिशोऽवान्तरदिश आकाश एष यतिहारः । आपः प्रजा ओषधय
 एष उपद्रवः । चन्द्रमा नक्षत्राणि पितर एतन्निधनम् ॥२॥
 तदेतदेकविंशं साम । स य एवमेतदेकविंशं साम वेदैतेन शास्य

सर्वेणोद्गीतम्भवसेतस्माद्देव सर्वस्मादावुच्यते य एवं विद्वांसमुप-
वदति ॥३॥ १११.८॥

पञ्चमोऽनुवाकस्तस्मात्तः ।

—:०:—

इदमेवेदमग्रेऽन्तरिक्षमासीत् । तद्देवाप्येतर्हि ॥१॥ तद्यदेतदन्तरिक्षं^१
य एवाऽयम्पवत् एतदेवान्तरिक्षम् । एष ह वा अन्तरिक्षनाम् ॥२॥
एष उ एवैष विततः तद्यथा काष्ठेन पलाशे विष्कम्भे स्यातामक्षेण
वा चक्रावेवमेतेनेमौ लोकौ विष्कम्भौ ॥३॥ तस्मिन्निदं सर्वमन्तः ।
तद्यदास्मिन्निदं सर्वमन्तस्तस्मादन्तर्यक्षम् । अन्तर्यक्षं ह वै नामैतत् ।
तदन्तरिक्षमिति परोक्षमाचक्षते ॥४॥ तद्यथा मृताः प्रवद्धाः प्रलम्बे-
रक्षेवं हैतस्मिन्सर्वे लोकाः प्रवद्धाः प्रलम्बन्ते ॥५॥ तस्यैतस्य
सांज्ञस्तिष्ठ आगास्त्रीण्यागीतानि पङ्क्तिभूतयश्चतस्रः प्रतिष्ठा दश
प्रगास्सप्त संस्था द्वौ स्तोभावेकं रूपम् ॥६॥ तद्यास्तिष्ठ आगा इय
एव तै लोकाः ॥७॥ अथ यानि (श्रीरम्) आगीतान्यभिर्वायुरसा

५-यस्य । ६ आगृह्यते ।

१-रीक्ष- २ अधिक है । एष ह वा अन्तरीक्षम् । ३ एषम् ।

४ नास्ति । ५-क्षोना- ६ मयम् । ७ एतेन । ८ नास्ति । तद-

अन्तस् । ९ नास्ति । १०-बन्ध- ११-वस्य । १२ आगाः । १३ एक-

रूपम्, पकरूपम् । १४ लो ।

॥१०॥ तमुपागायन् । तस्य स्वस्वरन् । तेषाम्पुनारसमादत्तः ॥११॥

१।२१॥

पष्ठेऽनुवाके द्वितीयः अष्टः ।

स यथा मधुधासे मधुनाळीक्षिर्मध्वासिश्च देवमेव तत्सामन्
पुना रसमासिञ्चत् ॥१॥ तस्माद्बु ह नोऽपगायेत् । इन्द्र एव
यदुद्गाता । स यथा सावमीषां रसमादत्त एकमेव तेषां रसमादत्ते
॥२॥ कासे ह तु यजमान उपगायेद्यजमानस्य हि तद्वसयो अन्न-
चार्याचार्योक्तः ॥३॥ तदु वा आदुस्मैव नायेत् । दिक्षोः उपगा-
यन् दिशामेवं सलोकतां जयतीति ॥४॥ ते य एवमे मुरुयाः
माणा एत एवोद्गातास्त्वोऽपगातारश्च । इमे ह अय उद्गातार इम
उ चत्वार उपगतातारः ॥५॥ तस्माद्बु चतुर एवोऽपगातृन् कुर्वीत ।
तस्माद्बुहोऽपगातृन् सखभिर्मृशेदिसस्त्वश्रोत्रं मे माहिसिष्टेति ॥६॥
स सस्त रस आसीद्य एवायम्पवत् एव एव ॥ रसः ॥७॥ स यथा
यध्वालोपमद्यादिति ह स्माह मुचिषश्शैलन एवमेतस्य रसस्यात्मान-
म्पूरयेत् । स एवोद्गातात्मानं च यजमानं चामृतत्वं गमयतीति ॥८॥ १।२२

पष्ठेऽनुवाके तृतीयः अष्टः । पष्ठेऽनुवाकस्तमाप्तः ।

॥०॥

११-सा ।

१-युवने । २ 'स' अधिक पदो । ३-यत् । ४-रस । ५ एव ।

६-य । ७ आ-यत् । ८-यत् ।

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥

स यस्स आकाशो वागेव सा । तस्मादाकाशाद्वाग्वदति ॥२॥

तामेतां वाचमभ्यपीत्यपतिरभ्यपीळ्यत् । तस्या अभिपीळितायै रसः

प्राणोदत् । त एवेमे लोका अभवन् ॥३॥ स इमां लोकानभ्यपीळ्यत् ।

तेषामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । ता एवैता देवता अभवन्नाभि-

र्वाणुरसावादिष इति ॥४॥ स एता देवता अभ्यपीळ्यत् ।

तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । सा त्रयीविद्याभवत् ॥५॥

स त्रयीं विद्यामभ्यपीळ्यत् । तस्या अभिपीळितायै रसः प्राणोदत् ।

ता एवैता व्याहृतयो ऽभवन् भूर्भुवस्स्वरिति ॥६॥ स एता व्या-

हृतीरभ्यपीळ्यत् । तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । तदेतद-

क्षरमभवदोमिति यदेतद् ॥७॥ स एतदक्षरमभ्यपीळ्यत् । तस्या-

ऽभिपीळितस्य रसः प्राणोदत् ॥८॥ १।२३॥

सप्तमेशुवाके प्रथमः खण्डः ।

तदक्षरदेव । यदक्षरदेव तस्मादक्षरम् ॥१॥ यदेवाक्षरं ना-

क्षीयत तस्मादक्षरम् । अक्षरं ह वै नापैतत् । तदक्षरमिति

१. एता वा । २. रसम् । ३. 'स त्रयीम्'.....रसम् (।)

प्राणोदत्' अधिक द्वे । ४. नास्ति । ५-आ । ६ नास्ति । स त्रयीम्

प्राणोदत् । ७-आ ।

१-वा ।

परोक्षमाचक्षते ॥२॥ तद्वैतदेक ओमिति गायन्ति । तत्तथा न
गायेत् । ईश्वरो ह्येनदेतेन रसेनान्तर्धातोः^१ । अथौ द्वे^२ इवैवम्भवत्
ओमिति । ओ इत्यु द्वेके गायन्ति । तदु द्वे तत्र गीतम् । नैव^३
तथा गायेत् । औ इत्येव गायेत् । तदेनदेतेन रसेन सन्दधाति ॥३॥
तदेतं रसं तर्पयति । रसस्तृप्तोऽक्षरं तर्पयति । अक्षरं तृप्तं व्याहृती
स्तर्पयति । व्याहृतयस्तृप्तावेदोस्तर्पयन्ति । वेदास्तृप्ता देवतास्तर्प-
यन्ति । देवतास्तृप्ता लोकास्तर्पयन्ति । लोकास्तृप्ता अक्षरं तर्पयन्ति ।
अक्षरं तृप्तं वाचं तर्पयति । वाक् तृप्ताकाशं तर्पयति । आकाशस्तृप्तः
प्रजास्तर्पयति । तृप्यति प्रजया पशुभिर्य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं
विद्वानुद्गायति ॥४॥ १।२४॥

सप्तमोऽनुवाके द्वितीयः अष्टः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

अथमेवेदमग्र आकाश आसीत् स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स
यस्स आकाश आदिस एव स । एतस्मिन् (६) उदिते सर्व-
मिदमाकाशते ॥२॥ तस्य मूर्तीमृतयोर्वै तीराणि समुद्र एव ।

१ या-१-३-ये । २ द्वे । ३ नास्ति । ४ नि-३-७-ने यस्य ।
५ श्री ३-४-अक्षरं आकाशं तर्पयति यह पाठ अक्षरं १-०-यन्ति ।
११ आर्कस्तु १-१२ गायति ।

१ दृष्ट (१) । २ उदिते । ३ देवैः । ४ तरङ्गाः ।

तद्यत्समुद्रेण परिगृहीतं तन्मृत्योरात्ममथ यत्परं तदमृतम् ॥३॥ स
 यो ह स समुद्रो य एवायम्भवत् एष एव स समुद्रः । एकं हि
 सद्रवन्तं सर्वाणि भूतान्यनुसंद्रवन्ति ॥४॥ तस्य धावागृथिवी एव
 रोधसी । अथ यथा नद्यां कंसानि वा महीशानि स्युस्सरांसि वै-
 व मस्यायम्पाथैवस्समुद्रः ॥५॥ स एष पर एव समुद्रस्योदेति ।
 स उद्यमेन वायोः पृष्ठं आक्रमते । सोऽमृतादेवोदेति । अमृतमनु-
 संचरति । अमृते प्रतिष्ठितः ॥६॥ तस्यैतत्त्रिवृद्धपम्पसोरनाप्तं शुक्लं
 कृष्णाम्बुषः ॥७॥ तद्यच्छुक्लं तद्वाचोरूपमृचोऽग्नेर्मतोः । सा वा
 सा वायुः सा । अथ योऽग्निर्मृत्युस्तः ॥८॥ अथ यत्कृष्णं तदपां
 रूपमस्य मनसोपशुषः । तथास्ताः आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो
 पशुषः ॥९॥ अथ यः पुरुषस्तं प्राणस्तत्समं तद्रसं तदमृतम् ।
 स यः प्राणस्तत्समः । अथ यद्रसं तदमृतम् ॥१०॥ १।२५॥

अष्टमोऽनुवाके प्रथमः अष्टकः ।

अथार्थात्मनः । इदमेव यत्तुस्त्रिवृच्छुक्लं कृष्णाम्बुषः ॥१॥
 तद्यच्छुक्लं वाचो रूपमृचोऽग्नेर्मतोः । सा वा सा वायुः सा ।

१-पुरुष- २-दे- ३-अनुष्टु- ४-वा- ५-याम- ६-कृष्ण-
 नि । ११ महीशहीनि । १२ अधिक है 'सस' स । १३ प्रतितिष्ठतः ।
 १४ वायुः, प्राणः । १५ अतः । १६ अन्नमस्य । १७ नास्ति, तथा-यः
 पुरुषस्तः ॥ १ भूतः । २ अधिक 'जस्ता' ।

अथ योऽग्निर्मृत्युस्तः ॥२॥ अथ यत्कृष्णं तदर्पां रूपमग्नस्य मनसो
यजुषः । तथास्ता आपोऽन्नं तद । अथ यन्मनो यजुष्य ॥३॥
अथ यः पुरुषस्त प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राण-
स्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥४॥ सैऽषोऽत्क्रान्तिर्ब्रह्मणा ।
अथातः पराक्रान्तिः ॥५॥ सा या साऽऽक्रान्तिर्विद्युदेव सा । स
यदेव विद्युतो विद्योतमानायै ज्येष्ठं रूपम्भवति तद्वाचो रूपमृषो-
ऽग्नेर्मृषोः ॥६॥ यदेव विद्युतस्संद्रवन्त्यै नीलं रूपम्भवति तदस्तां
रूपमग्नस्य मनसो यजुषः ॥७॥ य एवैष विद्युति पुरुषस्त प्राण-
स्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म
तदमृतम् ॥८॥ १।२६॥

अष्टमेषुषाके द्वितीयः अण्डः ।

स ह्योऽमृत्येन परिवृढो मृत्युमध्यास्तेऽन्नं कृत्वा ॥१॥ अथ-
ऽप एव पुरुषो योऽयं चक्षुषि । य आदित्ये सोऽतिपुरुषः । यो
विद्युति स परमपुरुषः ॥२॥ एते ह वाव त्रयः पुरुषाः । सा स्यान्ते
जायन्ते ॥३॥ स योऽयं चक्षुष्येषोऽनुरूपो नाम । अन्वज्ज्ञेयः

इ-सी-य-स- (१) । अ-न्-व-ज् । १ नास्ति । २ ज्येष्ठं । ३-य-न-म-वे ।

४-आ- । ५-य-ज- । ६-य-ज- । ७-य-ज- । ८-य-ज- ।

१-सी । २-सी । ३-सी-या-य । ४-य-ज । ५-य-ज ।

सर्वाणि रूपाणि । तमनुरूप इत्युपासीत । अन्वञ्चि^१ हैनं^२ सर्वाणि
 रूपाणि भवन्ति ॥४॥ य आदित्ये ॥ प्रतिरूपः । प्रत्यङ् शेष
 सर्वाणि रूपाणि । तम्प्रतिरूप इत्युपासीत । प्रत्यञ्चि^३ हैनं^४ सर्वाणि
 रूपाणि भवन्ति ॥५॥ यो विद्युति ॥ सर्वरूपः । सर्वाणि ह्येतस्मिन्
 रूपाणि । तं^५ सर्वरूप इत्युपासीत । सर्वाणि हाऽस्मिन् रूपाणि
 भवन्ति ॥६॥ एते ह वाच त्रयः पुरुषाः । आ हाऽस्यैते जायन्ते य
 एतदेवं वेदाधो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥७॥ १।२७॥

अष्टमोऽनुष्ठाके तृतीयः खण्डः । अष्टमोऽनुष्ठाकसमाप्तः ।

:०:

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स
 यस्स आकाश इन्द्र एव सः । ॥ यस्स इन्द्र एव एव स य एव
 स तवाति । स एव सप्तारश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् ॥२॥ तस्य वाङ्मयो
 रश्मिः प्राङ् प्रतिष्ठितः । सा या सा वागग्निस्सः । स दशधा
 भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधा^३ न्यर्बुदधा
 निखर्वधा^४ कर्मसित्तिर्योमान्तः^५ ॥ ३ ॥ स एव एतस्य रश्मिर्वा-

६-वञ्चि, चञ्चि, चं । ७ छेदम् । ८ प्रत्यङ् । ९ अधिक हे
 'रूपाणि' नास्ति-तं रूपाणि ।

१ नास्ति । २ अह- । ३ निखर्वधं । ४-ति । ५-त, संतोम-

भूत्वा सर्वास्वामु मज्जासु मखवस्थितः । स यः कश्च वदसेतस्यैव
 रश्मिना वदति ॥४॥ अथ मनोमयो दक्षिणा^१ प्रतिष्ठितः । तद्य-
 तन्मनश्चन्द्रमास्सः^{१०} । स दशधा भवति ॥५॥ ■ एष एतस्य रश्मिर्मनो
 भूत्वा सर्वास्वामु मज्जासु मखवस्थितः । स यः कश्च मनुत एतस्यैव
 रश्मिना मनुते ॥६॥ अथ चक्षुर्मयः^{११} मख^{१२} प्रतिष्ठितः^{१३} । तद्यत्तश्चक्षु-
 रादिसस्सः । स दशधा भवति ॥७॥ स एष एतस्य रश्मिचक्षु-
 भूत्वा सर्वास्वामु मज्जासु मखवस्थितः । स यः कश्च पश्यसेतस्यैव
 रश्मिना पश्यति ॥८॥ अथ श्रोत्रमयउदङ्ग^{१४} प्रतिष्ठितः । तद्यत्तच्छ्रोत्रं
 दिशत्ताः । स दशधा भवति ॥९॥ स एष एतस्य रश्मिश्रोत्र-
 भूत्वा सर्वास्वामु मज्जासु मखवस्थितः । ■ यः कश्च शृणोसेतस्यैव
 रश्मिना शृणोति ॥१०॥ १।२८॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ प्राणमय ऊर्ध्वः^१ प्रतिष्ठितः । स यस्स प्राणो वायुस्सः ।
 स दशधा भवति ॥१॥ स एष एतस्य रश्मिः प्राणोभूत्वा सर्वास्वामु
 मज्जासु मखवस्थितः । स यः कश्च प्राणसेतस्यैव रश्मिना प्राणिति

१ पश्यति । ७ पश्यति । ८ नास्ति । ९ दक्षणाः । १० मन्त्रमा-
 ११ चक्षुर्म- १२-य । १३ वसितः । १४ स, नास्ति । १५ मखवस्थितः ॥

१-स्थ- २ नास्ति ।

॥२॥ अथाऽसुमयस्तिर्यङ् प्रतिष्ठितः । ■ ह स ईशानो नाम । स
 दशधा भवति ॥३॥ स एष एतस्य रश्मिरभूत्वा सर्वास्मां प्रजासु
 प्रसवस्थितः । स यः कश्चाऽसुमानेतस्यैव रश्मिनाऽसुमान् ॥४॥
 अथाऽअमयोऽर्वाङ् प्रतिष्ठितः । तद्यत्तदक्षमापस्ताः । स दशधा
 भवति सतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधान्यर्बुदधा
 निखर्वधा पञ्चमक्षितिन्योमान्तः ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिरभूत्वा
 सर्वास्मां प्रजासु प्रसवस्थितः । स यः कश्चाश्मासेतस्यैव रश्मिना-
 भ्यति ॥६॥ स एष सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् । तदेतद्वचाऽभ्यनूच्यते
 यस्य सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवे सप्तसिन्धून् ।
 योरौहिणमस्फुरदब्रवाहुर्द्यौमरोहन्तं सजनासइंद्र इति
 ॥७॥ यस्मत्परश्मिरिति । सप्त श्वेत आदित्यस्य रश्मयः । वृषभ
 इति । एष ह्येवाऽऽसाम्प्रजानासृषभः । तुविष्मानिति । महीयैऽवर
 स्येषा ॥८॥ अवाच्यजत् सर्तवे सप्तसिन्धूनिति । सप्तश्वेतसिन्धवः ।

३ स्थान खाली है 'स.....ई' । ४-वन्ति । ५ 'यत्' के
 पञ्चम 'तद्वत्तु' नाम पाठ है, 'तद्वत्तु.....स' नहीं है । ६ अंशमम् ।
 ७ तेदा. स्त । ८ निखर्वधाम, निखर्वधाध । ९ अ. म-१ १० सामास्
 ११ नास्ति तदेतद्.....वृषभस्तुविष्मान् । १२ रोह-१ १३-इ ।
 १४-व । १५ महीयै ।

तैरिदं सर्वं सितम् । तद्यदेतैरिदं सर्वं सितं तस्मात्सिन्धवः ॥६॥
 यो रौहिणमस्फुरद्ब्रजबाहुरिति । एष (हि) रौहिणमस्फुरद्ब्रजबाहुः
 ॥१०॥ यामारोहन्तं स जनास इन्द्र इति । एष इन्द्रः ॥११॥ १।२-६॥
 नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यथा गिरिम्पन्थानस्समुदियुरिति हस्माऽऽह शाब्दोपनि-
 रेषमेत आदिस्य रश्मय एतमादिसं सर्वतोऽपियन्ति । स हैवं
 विद्वानोमिसाददान एतैरेतस्य रश्मिभिरेतमादिसं सर्वतोऽप्येति ॥१॥
 तदेतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं साम । अन्यतोद्वारं हैऽनदैक एवा-
 ऽभ्रङ्गमुपासते । अतोऽन्यथाविशुः ॥२॥ अथ य एतदेवं वेद ■
 एवंतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं सामवेद ॥३॥ सा एषा विशुव । (यद्)
 एतन्मण्डलं समन्तम्परिपतति तस्मात् । अथ यत्परमादिभाति स
 पुण्यकुसायै रसः । तमभ्यतिमुच्यते ॥४॥ तदेतदभ्रातृव्यं साम ।
 न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन
 भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं
 वेदायो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥५॥ १।३-०॥

नवमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । नवमेऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१६ स्थान आसी है-हन्-वासी, -हन्ते ।

१ एवम् । २ तिप्रतिवियन्ति । ३ अनुव- । ४ नास्ति । ५ नत, त ।
 ६ नास्ति । ७ यताय, यता । ८ गम् । ९ यतो । १० विशुः । ११-तुम् ।

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाऽप्येतर्हि । स
यस्स आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्रस्सामैवतत् ॥१॥ तस्यै-
तस्य साम इयमेव प्राचीदिग्भिर्ब्रह्म इयम्यस्ताव इयमादिरियमुद्गी-
योऽसौ प्रतिहारोऽन्तरिक्षमुपद्रव इयमेवनिधनम् ॥२॥ तदेतत्सप्त-
विधं साम । स य एवमेतत्सप्तविधं साम वेद यत्किञ्च प्राच्यादिशि
या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं रिङ्गरेणामोति
॥३॥ अथ यदक्षिणायां दिशि तत्सर्वं प्रस्तावेनामोति ॥४॥ अथ
यत्पृथ्वीयां दिशि तत्सर्वमादिनामोति ॥५॥ अथ यदुदीच्यांदिशि
तत्सर्वमुद्गीर्षेनामोति ॥६॥ अथ यदमुष्यांदिशि तत्सर्वम्यतिहारेणा-
मोति ॥७॥ अथ यदन्तरिक्षे तत्सर्वमुपद्रवेशामोति ॥८॥ अथ
यदस्यां दिशि या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं
निधवेनामोति ॥९॥ सर्वं हैवाऽस्याऽऽत्मभवति सर्वं जितं न हा-
ऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥१०॥ स यद्वकिञ्च
किञ्चैवं विद्वानेषु लोकेषु कुरुते स्वस्य हैव तत्स्वतः कुरुते । तदे-
तद्वत्ताऽभ्यनुच्यते ॥११॥ १॥११॥

इशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१ वीर । २-ईक्ष् । ३ यत् । ४ 'मनुष्या' अधिक है । ५-या ।

६ यद्यं चौथा श्लोक (मन्त्र) अधिक है और साथ ही प्रतिहारेण
'प्रस्तावेन' के स्थान में । ७ 'अप्यात्' अधिक है । ८ 'वक्षिणायांदिशि' ।

यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीस्तस्युः । नत्वा
वज्रिन्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी इति ॥१॥

यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीस्तस्युरिति । यच्छतं द्यावस्तस्युश्चत-
म्भूम्यस्ताभ्य एष एवाऽऽकाशो ज्यायान् ॥२॥ नत्वा वज्रिन्सहस्रं
सूर्या अन्विति । न ह्येतं सहस्रं च न सूर्या अनु ॥३॥ न जातमष्ट
रोदसी इति । न ह्येतं जातं रोदन्ति । इमे इ द्याव रोदसी ताभ्या-
मेव एवाकाशो ज्यायान् । एतस्मिन् ह्येते अन्तः ॥४॥ स यस्त
आकाश इन्द्र एव सः । स यस्त इन्द्र एष एव स य एष वपति ॥५॥
स एषोऽभ्राण्यतिमुच्यमान एति । तथैषोऽभ्राण्यतिमुच्यमान
एषेवमेव स सर्वस्मात्पाप्मनोऽतिमुच्यमान एति य एवं वेदाधो
यस्यैवं विद्वानुद्रामति ॥६॥ १।३२॥

पशमेऽनुवाके द्वितीयः अष्टः । वरामोऽनुवाकस्तमासः ।

—:०:—

त्रिहस्ताम चतुष्पात् । ब्रह्म तृतीयमिन्द्रस्तृतीयमजापति-
स्तृतीयमक्षमेव चतुर्थः पादः ॥१॥ तद्यद्वै ब्रह्म स प्राणोऽथ य इन्द्र-

१ नास्ति । २-यां । ३ नास्ति । ४-यद् । ५ नास्ति, स-स ।

६ स्थाने खाद्यी 'य' तक । ७-मानय, यमान ।

रभित-

स्सा वागथ यः प्रजापतिस्तन्मनोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥२॥ मन
 एव हिङ्गारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥३॥
 करोत्येव वात्वा नयति प्राणेन गमयति मनसा । तदेतन्निरुद्धं यन्मनः ।
 तेन यत्र कामयते तदात्मानं च यजमानं च दधाति ॥४॥ अथाधि-
 दैवतम् । चन्द्रमा एव हिङ्गारोऽग्निः प्रस्ताव आदित्य उद्गीथ आष
 एव चतुर्थः पादः । तद्धि प्रत्यक्षमक्षयम् ॥५॥ तां वा एतां देवतां
 अमावास्यां रात्रिं संयन्ति । चन्द्रमा अमावास्यां रात्रिमादिसम्प्र-
 विश्रत्यादित्योऽग्निम् ॥ ६ ॥ तद्यत्संयन्ति तस्मात्समम् । स ह वै
 सामवित्स साम वेद य एवं वेद ॥७॥ तासां वा एतासां देवत्वान्नमे-
 कैकैव देवता साम भवति ॥८॥ एष एवादित्यस्त्रिहृच्चतुष्पाद्रश्मयो
 मण्डलम्पुरुषः । रश्मय एव हिङ्गारः । तस्मात्ते प्रथमत एवोद्यत-
 स्तायन्ते । मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्तस्स
 एव चतुर्थः पादः ॥६॥ एषमेव चन्द्रमसो रश्मयो मण्डलम्पुरुषः ।
 रश्मय एव हिङ्गारो मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्त-
 स्स एव चतुर्थः पादः ॥९॥ चत्वार्यन्यानि चत्वार्यन्यानि । तान्यष्टौ ।
 अष्टाक्षरा गायत्री गायत्रे साम ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्माग्नि-
 सम्प्रवृत्ते । अष्टाक्षरः पञ्चवक्त्रोपशब्दम् ॥११॥ ११२३ ॥

एकादशोऽनुषाके प्रथमः खण्डः ।

अथाऽध्यात्मम् । इदमेव चक्षुःसिद्धचक्षुष्याच्छुद्धं कृष्णम्पुरुषः ।
 शुक्लमेव हिङ्गारः कृष्णाम्भस्ताम्रः पुरुषः उद्गीयो या इमा अपोऽन्तरिक्षः
 एव चतुर्थः पादः ॥१॥ इन्द्रमादिसस्यान्नभिर्दं चन्द्रमसः । चत्वारिमासि
 चत्वारिमानि । तान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम ब्रह्म उ गौ-
 यत्री । तद्वृ ब्रह्माभिसम्पद्यते । अष्टाशफाः पञ्चशस्तेनो पञ्चव्यम् ॥२॥
 स योऽयम्पवते स एव एव प्रजापतिः । तद्वेव साम । तस्यायं देवो
 योऽयं चक्षुषि पुरुषः । ॥ एष आहुतिमतिमसोत्क्रान्तः ॥३॥ अथ
 यावेतौ चन्द्रमाश्चादिसश्च यावेतावप्सु दृश्येते एतावेतयोर्देवौ ॥४॥
 मद् वा इदमाहुर्देवानां देवा इत्येते इ ते । त एत आहुतिमतिमसो-
 त्क्रान्ताः ॥५॥ तद् पृथुर्वैन्यो दिव्यान्प्राज्ञान्पुण्यञ्च येभिर्वीच
 इषितः प्रवाति ये ददन्ते षड् दिशस्समीचीः । य
 आहुतीस्त्वमन्यन्त देवा अपां नेतारः कतमे त आ-
 सन्निति ॥६॥ ते इ मृत्युञ्ज रिमामेषाम्पृथिवीं वस्त एको-
 ऽन्तरिक्षमप्येको बभूव । दिवमेको ददते यो विधतौ
 विश्वा आशाः प्रतिरत्नन्त्यन्य इति ॥७॥ इमामेषाम्पृथिवीं

१-पादः-२-तासि । ३-यते । ४-एता उ । ५-कालः । ६-परिह ।
 ७-वस्तुसः, वस्त । ८-इह । ९-इत्यम- । १०-पराह । ११-वेदः । १२-अथवा ।
 १३-अथवा ।

वस्तु एक इत्यभिर्हसः ॥१८॥ अन्तरिक्षम्येको बभूवेति वायुर्हसः ॥१९॥
 दिवमेको दृढते यो विधत्तेऽत्यादिसो हसः ॥२०॥ विश्वा आशाः
 प्रतिरक्षन्त्यन्य इति । एता ह वै देवता विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्ति
 चन्द्रमा नक्षत्राणीति । ता एतास्सामैव सत्तो न्यूढोऽन्नाद्याय ॥२१॥
 १ । ३४ ॥

एकादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्तथातः ।

—०—

अथैतत्साम । तदाहुस्संवत्सर एव सामेति ॥१॥ तस्य वसन्त
 एव हिङ्गारः । तस्मात्पशवो वसन्ता हिङ्गुरिक्तस्समुदायन्ति ॥२॥
 ग्रीष्मः प्रस्तावः । अनिरुक्तो वै प्रस्तावोऽनिरुक्त ऋतुर्न ग्रीष्मः
 ॥३॥ वर्षा उद्गीयः । उद्दिष्ट वै वर्षगायति ॥४॥ शरत्प्रतिहारः ।
 शरादि ह खलु वै श्रुमिष्ठा ओषधयः पच्यन्ते ॥५॥ हेमन्तो निधनम् ।
 निधनकृत्वा इव वै हेमन्मजा भवन्ति ॥६॥ तावेतावन्तौ संधत्तः ।
 एतदन्वन्तस्संवत्सरः । तस्यैतावन्तौ यदेमन्तश्च वसन्तश्च । एतदनु
 प्राप्स्यान्तौ समेतः । एतदनु निष्कस्यान्तौ समेतः । एतदन्वहिर्भो-
 गान्यर्थाद्दृश्ये ॥७॥ तद्यथा ह वै निष्कस्समन्तं ग्रीवा अभिपर्यक्तं

१४ विधत्ते, विजते । १५ अन्तः, 'अन्तः'—याया ।

१—कश्चित्तुम्, कश्चित्तुम् । २ नास्ति । ३—तत् । ४ सद्यः ।

५ ग्री—ह—प्रस्तः ।

एवमेतन्तं साम । स य एवमेतदन्तं साम वेदानन्ततामेव जयति
॥८॥ १।३५॥

ब्राह्मोऽनुवाके प्रथमः अष्टः ।

अथैतत्पर्जन्ये साम । तस्य पुरोक्ता एव हिङ्गारः । अथ य-
दभ्राणि सम्प्लावयति स प्रस्तावः । अथ यत् स्तनयति स उद्गीथः ।
अथ यद्विधोतते स प्रतिहारः । अथ यद्वर्षति तन्निधनम् ॥१॥
तदेतत्पर्जन्ये साम । स य एवमेतत्पर्जन्ये साम वेदवर्षको^१ हास्मै
पर्जन्यो भवति ॥२॥ अथैतत् पुरुषे साम । तस्यायमेव हिङ्गारो-
ऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ॥३॥ तदेतत्पुरुषे
साम । स य एवमेतत्पुरुषे साम वेदोऽऽर्ध्व एव प्रजया पशुभिरा-
रोहतेति ॥४॥ य उ एनत्सग्वेद ये प्रसञ्जो लोकास्ताजयति ।
तस्यायमेव हिङ्गारोऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ।
ये प्रसञ्जो लोकास्ताजयति ॥५॥ य उ एनत्तिर्यग्वेद ये तिर्यञ्जो
लोकास्ताजयति । तस्य लोमैव हिङ्गारस्त्वक्प्रस्तावो मांसमुद्गीथोऽस्थि
प्रतिहारो मज्जा निधनम् ॥६॥ तस्य ग्रीवाविर्गायति प्रस्तावम्प्रतिहारं

१ अनुवाकः ।

२-यक-१-२-गवे । ३-प्रजा । ४-न । ५-अस्ति । ६-यत्, एवम् ।

७-वृद्धः, 'स' अधिक है । ८-आक-१-२-हिङ्गारः ।

निधनम् । तस्मात्पुरुषस्य श्रीगयस्वीन्याविर्दन्ताश्च द्वयाश्चनस्ताः ।
 ये तिर्यञ्चो लोकास्ताजयति ॥७॥ य उ एनत्संयवेद ये सम्यञ्चो
 लोकास्ताजयति । तस्य मन एव हिङ्गारो वाक्यस्तावः प्राण उद्गीथ-
 श्चक्षुः प्रतिहार श्रोत्रं निधनम् । ये सम्यञ्चो लोकास्ताजयति ॥८॥
 अथैतद्देवतासु साम । तस्य वायुरेव हिङ्गारोऽग्निः प्रस्ताव आदिश
 उद्गीथश्चन्द्रमा प्रतिहारो दिश एव निधनम् ॥९॥ तदेतद्देवतासु साम ।
 स य एनमेतद्देवतासु साम वेद देवतानामेव सलोकतां जयति ॥१०॥

१३६॥

ब्राह्मणोऽनुवाके द्वितीयः अयम् ।

तस्यैतास्ति स आगा आग्नेयेकैन्द्रधेका वैश्वदेव्येका ॥१॥ सा या
 मन्त्रा साऽऽग्नेयी । तया मातस्सवनस्योद्देयम् । आग्नेयं वै मातस्स-
 वनमाग्नेयोऽयं लोकः । स्वयाऽऽगया मातस्सवनस्योद्गायत्यृधोतीमं
 लोकम् ॥२॥ अथ या घोषिण्युपदिमती सैऽऽन्त्री । तया माध्य-
 न्दिनस्य सवनस्योद्देयम् । ऐन्द्रं वै माध्यन्दिनं सवनं मेन्द्रोऽसौ
 लोकः । स्वयाऽऽगया माध्यन्दिनस्य सवनस्योद्गायत्यृधोसमुलोकम्
 ॥३॥ अथ या वीङ्ग्याभिद प्रथयन्निव गायति सा वैश्वदेवी । तया

१ ऐक- १ ऽऽग्नेय । २ नास्ति, सा ऽद् । ३ मन्त्री ।
 ४ नास्ति अथ लोकम् । ५-मन्त्री-के विषये स्थान कोणी है ।
 ६-७-दिन । ८-तिऽम् । ९ या, 'घोषिण्यु', भी लिखा है ।

तृतीयसवनस्योद्देश्यम् । वैश्वदेवं वै तृतीयसवनं वैश्वदेवोऽयमन्तरा-
 लोकः । स्वयाऽऽगया तृतीयसवनस्योद्गायत्युद्गोतीमन्तरालोकम्
 ॥४॥ अथो उच्चा सल्लाहु रेक्यैवाऽऽगयोद्देश्यं यदेवास्यमध्यं वाच
 इति । तद्यथा वै वाचा व्यापञ्चमान उद्गायति तदेवास्यमध्यं वाचः ।
 ११ तया वा एतन्ना वाचा सर्वा वाच उपगच्छति । अन्यासिक्तमिहैकस्थां
 श्रियमृद्भोति य एवं वेद ॥५॥ अथ या क्रौञ्चा सा बार्हस्पत्या । स
 यो ब्रह्मवर्चसकामस्स्यात्स १२ तयोद्गायेत् । तद्ब्रह्म वै बृहस्पतिः । तद्वै
 ब्रह्मवर्चसमृद्भोति तथा ह ब्रह्मवर्चसमिवाति ॥६॥ अथ ह चैकिता-
 नेव एकस्यैव साध्न आगां गायति गायत्रस्यैव । तदनवानं १३ गेयम् ।
 १४ तत् साध्न एवा प्रतिहारादनवानं गेयम् । तत्प्राणो वै गायत्रम् ।
 तद्वै प्राणमृद्भोति । तथा ह सर्वमायुरोति ॥७॥ १।३७॥

द्वावशोऽनुवाके तृतीयः अण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तं चैकितानेयमुद्गायन्तं कुरव उपोदुरुज्जहिहि
 साम दालभ्येऽति ॥१॥ स होऽपोद्यमानो नितरां जगौ । तं होचुः
 किमुपोद्यमानो नितरामगासीरिति ॥२॥ स होवाचेदं वै सोमेऽस्ये-

१०-यस्ति । ११ साया । १२ सः, नास्ति । १३ 'वै गायत्रम्'
 नीचे से ठे के अधिक लिखा है । १४ 'साध्नसः' अधिक है ।

१ तत् । २ उज्जिहि । ३ सोमे ।

तदेवैतत्सत्युपपत्त्यम् । तस्मादुच्ये न एतदुपावादिषु लोभशानीष्व तेषां
 श्मशानानि भवितारः । अथ वयमुदेव गातारस्म्य इति ॥३॥ अथ
 ह राजा नैव सिर्गलूनसमार्द्धाकारणं शाश्वलं पण्यभ्यामुत्थितम्पद-
 म्भर्त्ताऽऽगातां शालावसां सान्नां इति ॥४॥ नैव राजन्नुचेति
 होवाच न सान्नेऽति । तथूयं तर्हि सर्व एव पण्यय्या भविष्यथ य
 एवं विद्वांसोऽगायतेति ॥५॥ अथ यद्वाऽवश्यपृष्ट्वा च सान्नां वाऽऽगामे-
 ति धीतेन वै तथा तवान्नाऽमलाकारदेनाऽऽगातेऽति हैनोस्तदवश्यम् ।
 तद् तदुपाच स्वरेण च हिङ्गारेण वाऽऽगामेति ॥६॥ ११३८॥

ब्राह्मणोऽनुधाकेचतुर्यः कथम् ।

अथ ह ससाधिकाकश्चैत्रयिस्सत्ययम्प्यौलुपितमुवाच प्राचीन-
 योगेति मम चेद्वै त्वं सामं विद्वान् सान्नाऽऽविष्यं करिष्यसि नैव
 तर्हि पुनर्दीक्षाभिमियातासीति । मुहुर्दीक्षी वास ॥१॥ स होवाच
 यो वै सान्नाश्चिभ्यं विद्वान्सान्नाऽऽविष्यं करोति श्रीमानेव भवति ।
 क्सी वाव सान्नाभ्रीरिति ॥२॥ यो वै सान्नः प्रतिष्ठां विद्वान्सान्ना-
 ऽऽविष्यं करोति प्रत्येव तिष्ठति । वाग्वाव साम्नः प्रतिष्ठेति ॥३॥

४-उपाय- ५-पुत्र । ६-वार । ७ गलूनस्य, गुलिनस्य ।

८-तर्हि । ९ पण्यय्या । १०-च समसम् ।

१-मम । २-क्षी । ३-वा ।

यो वै साम्नस्सुवर्णं विद्वान् साम्नाऽऽर्चिज्यं करोत्यस्य गृहे
 सुखी गम्यते । माग्धो वाव साम्नस्सुवर्णमिति ॥४॥ यो वै साम्नो
 ऽपचितिं विद्वान्साम्नाऽऽर्चिज्यं करोत्यपचितिमानेव भवति । चक्षु-
 र्वाव साम्नोऽपचितिरिति ॥५॥ यो वै साम्नश्श्रुतिं विद्वान्साम्ना-
 ऽऽर्चिज्यं करोति श्रुतिमानेव भवति । श्रोत्रं वाव साम्नश्श्रुतिरिति
 ॥६॥ १।३-६॥

द्वादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वादशोऽनुवाकस्तथातः ।

॥०॥

चत्वारिवाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा
 ये मनीषिणः । गुहा त्रीणि निहिता नैऋत्यन्ति
 तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्तीऽति ॥ १ ॥

आग्नेव साम । आत्मानि सप्त मायति । वागेवोऽन्तरम् । वाक्च
 सुखं संसति । वागेव यजुः । वाचं हि मनुस्सुवर्णम् ॥२॥ वा-
 त्किञ्चाऽर्वाचीनम्ब्रह्मणस्तद्वागेव सर्वम् । अथ मदन्तश्च प्रहोपदिश्यते ।
 नैव हि तेनऽऽर्चिज्यं करोति । परोक्षेणैव न कृतम्भवति ॥३॥

४-हो ।

१-द्वावि । २-द्विवाजी । ३-मायति । ४-क- । ५-वाचं । ६-ने ।

७-मायति ।

तस्या एतस्यै वाचो मनः पादश्चक्षुः पादश्च्रोत्रम्पादो वागेव चतुर्थः
 पादः ॥४॥ तद्यद्वै मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति । चक्षुषा पश्यति
 तद्वाचा वदति । चक्षोरेण शृणोति तद्वाचा वदति ॥५॥ तद्यदे-
 तत्सर्वं वाचमेवाऽभिसमयति तस्माद्वागेव साम । स ह वै सामवित्स
 साम वेद य एवं वेद ॥६॥ तस्या एतस्यै वाचः प्राण एवाऽसुः ।
 एषु हीद सर्वमसूतेति ॥७॥ १।४०॥

त्रयोदशोऽनुवाकः प्रथमः अष्टकः ।

तेन हैतेनाऽसुना देवा जीवन्ति पितरो जीवन्ति मनुष्या जी-
 वन्ति पशवो जीवन्ति गन्धर्वाप्सरसो जीवन्ति सर्वमिदं जीवति ॥१॥
 तदाहुयेदमुनेदं सर्वं जीवति कस्मान्नोऽसुरिति । प्राण इति ज्ञेयाव ।
 प्राणो ह वाचो साम्नोऽसुः ॥२॥ स एष प्राणो वाचि प्रतिष्ठितो वायु
 प्राणे प्रतिष्ठितः । तावेतावेवमन्योऽन्यस्मिन्प्रतिष्ठितौ । प्रतिष्ठितौ
 य एवं वेद ॥३॥ तदेतद्वचाऽभ्यनूच्यते—

१ 'चतुर्थः' अधिक है । २ स्वाक् । ३ सुशोति । ४ प्रहिसय-
 १२-वा । १३ 'असुते' के परे 'एषु हीदं सर्वं सूतेति' एष में
 लिखा है ('नास्ति' ति) ॥

१-सूति । २ यक् । ३ वक् । ४ 'इदं' अधिक है । ५-वे ।
 ६ अन्यस्- । ७ प्रतिष्ठितः ।

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता ॥ पिता
स पुत्रः । विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना अदिति-
र्जातमदितिर्जनित्वम् ॥ इति ॥४॥

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमिति । एषा वै द्यौरिषाऽन्तरिक्षम्
॥५॥ अदितिर्माता स पिता ॥ पुत्र इति । एषा वै मातृषा पितृषा
पुत्रः ॥६॥ विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना इति । ये देवा असुरेभ्यः
पूर्वे पञ्चजना आसन् य एवासावदिते पुरुषो यश्चन्द्रमसि यो
विद्युति योऽप्सु योऽयमक्षन्तरेष एव ते । तदेवैव ॥७॥ अदिति-
र्जातमदितिर्जनित्वमिति । एषा ह्येव जातमेवा जनित्वम् ॥८॥ १।४१॥

अथोदशोऽनुवाके द्वितीयः अयमः । अथोदशोऽनुवाकस्त्वमासः ।

आरुणिर्ह वासिष्ठु चैकितानेयमन्त्राचर्यमुपेयाय । तं होवाचा-
ऽऽजानासि सौम्य गौतम यदिदं वर्यं चैकितानेयास्सामैवोपास्महे ।
का त्वं देवतामुपास्स इति । सामैव भगवन्त इति होवाच ॥१॥
तं ह पथच्छ यदधी तद्वेत्याह इति । अथोतिर्वाएतत्तस्य साम्नो यद्वर्यं

८-रीकस्- । ६ नास्ति, अदितिर्माता अदितिर्जनित्वम् ।

१०-चै । ११-यो । १२-वेत् । १३-वम् । १४ इतिर्, इति ॥

१ (वाचा) आज । २ यं । ३-माह-इति । ४-सन्तर्ही । ५-वतः । ६ त्वं ।

सामोपास्मह इति ॥२॥ यत्पृथिव्यां तद्वेत्या ३ इति । प्रतिष्ठा वा
 एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥३॥ यदप्सु तद्वेत्या ३
 इति । आन्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥४॥
 यदन्तरिक्षे तद्वेत्या ३ इति । आत्मा वा एष तस्य साम्नो यद्वयं
 सामोपास्मह इति ॥५॥ यद्वायौ तद्वेत्या ३ इति । श्रीर्वा एषा तस्य
 साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥६॥ यद्विज्जु तद्वेत्या ३ इति ।
 स्वासिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥७॥ यद्विनि
 तद्वेत्या ३ इति । विभूतिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपा-
 स्मह इति ॥८॥ ॥१४२॥

चतुर्दशोऽनुषाके प्रथमः खण्डः ।

यद्वद्वित्ते तद्वेत्या ३ इति । तेजो वा एतस्य साम्नो यद्वयं
 सामोपास्मह इति ॥१॥ यच्चन्द्रमसि तद्वेत्या ३ इति । भा वा एषा
 तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥२॥ यच्चन्द्रेषु तद्वेत्या ३
 इति । मक्षा वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥३॥
 यद्वक्षे तद्वेत्या ३ इति । रेतो वा एतस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह

७ हाशिया पर बिम्बा हे । ८ एतस्य । ९ नास्ति यद् इति ।

१० नास्ति साम्नो ११-हा । १२ नास्ति व स्मह ॥

१ नास्ति । २ प्रजा । ३ नास्ति, 'एतत्' मे 'अय' ।

रूपं-रूपम्प्रति रूपोबभूव तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणाय ।
 इन्द्रोमायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादश ॥
 इति ॥१॥ रूपं-रूपम्प्रति रूपो बभूवेति । रूपं-रूपं शेषप्रतिरूपो बभूव
 ॥२॥ तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणायेति । प्रतिचक्षणीयं हाऽस्यैतद्रूपम्
 ॥३॥ इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते इति । मायाभिर्होषे एतत्पुरु-
 रूप ईयते ॥४॥ युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादशेति । सहस्रं हेतु-आदि-
 तस्य रश्मयः । तेऽस्य युक्तास्तैरिदं सर्वं हरति । तथैतैरिदं
 सर्वं हरति तस्माद्वरयः ॥५॥ रूपं रूपम्प्रधवा बोभवीति
 मायाः कृगवानः पस्तिन्वं स्वाम् । त्रिर्यदिवः
 परि मुहूर्तमागात् स्वैर्मन्त्रैरनुतुपा ऋतावेति ॥६॥
 रूपं-रूपम्प्रधवा बोभवीतीति । रूपं-रूपं शेष प्रधवा बोभवीति
 ॥७॥ मायाः कृगवानः परि तन्वं स्वायेति । मायाभिर्होष एतत्स्वा-
 त्त्वं गोपायति ॥८॥ त्रिर्यदिवः परिमुहूर्तमागादिति । त्रिर्ह वा
 एष एतस्य मुहूर्तस्येवाम्प्रधिवी समन्तः पर्येतीयाः प्रजासंस्तवाः
 ॥९॥ स्वैर्मन्त्रैरनुतुपा ऋतावेति । अनुतुपा शेष एतद्वत्वात् ॥१०॥ ११ ४४
 अनुतुपा शेषानुषाके तृतीयः खण्डः ।

१ पुरुरूप इव, पुरुरूपं । २-रश्मयः । ३-शा । ४-प्रम । ५-प्रम । ६ रश्मियते ।
 ७ नास्ति, हरयश्च तेऽस्य । = 'म' अधिक है । ८ मुहूर्त-१२० नास्ति,
 इति । ११ पुनः लिखा है 'रूपंरूपं बोभवीति' (१) । १२ कृगवानः ।
 १३-मि । १४ श । १५ नास्ति । १६ अति । १७ नृत्त- । १८ आता ॥

तद्व पृथुर्वैन्यो दिव्यान्वासान्प्रच्छ—

इन्द्रमुक्थमृचमुद्गीथमाहुर्ब्रह्म साम प्राणं व्यानम् ।

मनो वा चक्षुस्पानमाहुश्श्रोत्रं श्रोत्रिया बहुधावदन्ती-

ति ॥१॥ ते प्रत्युचुः—

आयय एते सन्प्रकृतः पुराजाः पुनराजायन्ते वेदानां गुण्यैकम् ।

ते वै विद्वांसो वैन्य तद्वदन्ति समानम्पुरुषम्बहुधा निविष्टम्, इति ॥२॥

इमां ह वा तदेवतां त्रय्यां विद्यायामिमां समानामभ्येक आय-
यन्ति नैके । यो ह कवितदेव वेद स एवैतां देवतां सम्प्रति वेद

॥३॥ स एष इन्द्र उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आमन्त्रति
नैवोद्गतुश्चोपगतुर्णा च विज्ञायते । इत एवोऽऽर्ध्वस्त्वरुदेति ।

स उपरि भूर्भो लेलायति ॥४॥ स विद्यादगमदिन्द्रो नेह कश्चन
पाप्या न्यङ्गः परिशेषयत इति । तस्मिन् ह न कश्चन पाप्या न्यङ्गः

परिशिष्यते ॥५॥ तदेतदभ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कश्चन
भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कश्चन भ्रातृव्यम्पश्यत एकमेव न कश्चन

भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेव वेदाथो यस्यैव विद्वानुद्राघति ॥६॥ १॥४५॥

अतुर्वंशोऽनुषाको अतुर्वंशः सरदः । अतुर्वंशोऽनुषाकस्तमाप्तः

—०—

१-इन्द्रम् । २-नो । ३-त्रय्यां । त्रय्यां । ४-इमां । ५-नो । ६-न्य । ७-हो ।
द-य-वे । ८-तु- । ९-ति । आधिकक-रो । १०-प्यो । ११-स्वर । १२-परिवे-

प्रजापतिर्वा वेद अग्र आसीत् । सोऽकामयत् बहुस्त्वग्मजोयेय
 भूमानं गच्छेयमिति ॥१॥ स षोडशचाऽऽत्मानं व्यकुर्वत् भद्रं च
 कामयित्वाऽऽभूतिश्च सम्भूतिश्च भूतं च सर्वं च रूपं चाऽपरिमितं
 च श्रीश्च यज्ञश्च नाम चाऽग्रं च सजाताश्च पयश्च महीयां च रसश्च
 ॥२॥ तद्यद्भद्रं हृदयमस्य तत् । तत्संवत्सरमसृजत् । तदस्य
 संवत्सरोऽनूपतिष्ठते ॥३॥ समाप्तिः कर्मास्य तत् । कर्मणा हि
 समाप्नोति । तत् अष्टतनसृजत् । तदस्यर्तनोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ आ-
 भूतिरक्षमस्य तत् । (तच्) चतुर्धा भवति । ततो मासानर्धमा-
 साजहोरात्रायुषसोऽसृजत् । तदस्य मासा अर्धमासा अहोरात्रायु-
 षसोऽनूपतिष्ठन्ते ॥५॥ सम्भूती रेतोऽस्य तत् । रेतसो हि सम्भव-
 ति ॥६॥ १।४६॥

पञ्चदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तत्तच्चन्द्रमसमसृजत् । तदस्य चन्द्रमा अनूपतिष्ठते । तस्मात्सि-
 रेतसः भविरूपः ॥१॥ भूतम्मात्रोऽस्य सः । ततो वायुमसृजत् ।
 तदस्य वायुरनूपतिष्ठते ॥२॥ सर्वमपानोऽस्य सः । ततः परूनसृजत् ।
 तदस्य पचवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ रूपं व्यानोऽस्य सः । ततः प्रजा

१-वे- २-यो- ३-अन्ते- ४- 'त' अधिक- ५- तद्-
 ६- 'त' अधिक- ७- 'ति', 'ता', 'त' ।

१-स- २-स- ३-कपराधी ।

असृजत । तदस्य प्रजा अनूपतिष्ठन्ते । तस्मादामु प्रजामु रूपाय-
धिगम्यन्ते ॥४॥ अपरिमितम्मनोऽस्य तव । ततो दिशोऽसृजत ।
तदस्य दिशोऽनूपतिष्ठन्ते । तस्मात्ता अपरिमिताः । अपरिमितमिव हि
मनः ॥५॥ श्रीर्वागस्य सा । ततस्समुद्रमसृजत । तदस्य समुद्रो-
ऽनूपतिष्ठते ॥६॥ यशस्तपोऽस्य तव । ततोऽभिमसृजत । तदस्या-
ऽभिरनूपतिष्ठते । तस्मात्स मयितादिव सन्तप्तादिव जायते ॥७॥
नाम चतुरस्य तव ॥८॥ १।४७॥

पञ्चदशोऽनुवाके द्वितीयः अर्थादः ।

तत आदित्यमसृजत । तदस्यादिशोऽनूपतिष्ठते ॥१॥ अग्नि-
मूर्धास्य सः । ततो दिक्मसृजत । तदस्य अग्निमनूपतिष्ठते ॥२॥
सजाता अङ्गान्यस्य तानि । अङ्गैर्हि सह जायते । ततो वनस्पती-
नसृजत । तदस्य वनस्पतयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ पयो सोमन्यस्य
तानि । तत घोषधीरसृजत । तदस्यौषधयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ मरीच्यो
गोक्षान्यस्य तानि । गोक्षैर्हि सह मरीच्यते । ततो त्रयोऽसृजत ।
तदस्य त्रयोऽनूपतिष्ठन्ते । तस्मात्तानि त्र्यतिष्ठानि । त्र्यतिष्ठानि-

४-यते । ५-नास्ति, ततो.....तस्मात् । ६-याति । ७-तस्या ।
८-मयितामिह, मयितितम्ह ॥

१ अगान्य, अगहान्य, अङ्गह । २-सा । ३-मर । ४-मरिच,
पयो.....अनूपतिष्ठन्ते । ५-मयिष्य, मयिष्या । ६-क ॥

ऽव महामाँसानि ॥५॥ रसो मज्जाऽस्य सः । ततः पृथिवीपृष्ठजतः ।
तदस्य पृथिव्यनूपतिष्ठते ॥६॥ स ह वै षोडशधाऽऽत्मानं विकृत्य
सार्धं समैतत् । तद्यत्सार्धं समैतत् तत्साम्नस्सामत्वम् ॥७॥ स एवैष
हिरण्यमयः पुरुष उदतिष्ठत्यजानां जनिता ॥८॥ १।४८॥

पञ्चदशोऽनुवाके सृतीयः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवाः प्रजापतिमुपाधावाज्रयामाऽसु-
रानिति ॥१॥ सोऽब्रवीन्न वै मां यूयं वित्य नाऽसुराः । यद्वै मां यूयं
विधात ततो वै यूयमेव स्यात् पराऽसुरा भवेयुरिति ॥२॥ तद्वै
ब्रूहीऽत्युबन् । सोऽब्रवीत्पुरुषः प्रजापतिस्सामेति मोऽपादवम् ।
ततो वै यूयमेव भविष्यथ पराऽसुरा भविष्यन्तीति ॥३॥ तम्पुरुषः
प्रजापतिस्सामेऽत्युपासत् । ततो वै देवा अभवन् पराऽसुराः । स
भो ह वै विद्वान्पुरुषः प्रजापतिस्सामेऽत्युपास्ते मवसात्मना पराऽस्य
दिषन् भ्रातृभ्यो भवति ॥४॥ १।४९॥

पञ्चदशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । पञ्चदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

— १८० —

७ महामन ८ मज्ज्या । ९-न्ते । १० समैतत् तत्पञ्चाशत्
अद्यत्सार्धं समैतत् (१) पुनः हे । ११ जयिता ॥

१ पञ्च । २-वैत । ३-वि । ४-

देवा वै विजिग्यानां^१ ब्रह्मवन्दितीयं करवामहे । माऽद्वितीया
 भूमेति । तेऽब्रुवन् सांमैव^२ द्वितीयं करवामहे । सांमैव नो द्वितीय-
 मस्त्विति ॥१॥ त इमे द्यावापृथिवी ब्रह्मवन् समेतं साम प्रजनयत-
 मिति ॥२॥ सोऽसावस्या अवीभत्सत । सोऽअवीब्रह्म वा एतस्यां
 किं च किं च कुर्वन्त्यधिष्ठीवन्त्यधिचरन्तध्यासते । पुनीतन्वेनामपूता
 वा इति ॥३॥ ते गाथामब्रुन्त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति ।
 शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते गाथयाऽपुनन् । तस्मादुत गाथया
 शतं मुनोति ॥४॥ ते कुम्भ्यामब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं तत-
 स्स्यादिति । शतसनिस्स्या इति । तथेति । ते कुम्भ्या-
 ऽपुनन् । तस्मादुत कुम्भ्या शतं मुनोति ॥५॥ ते नारायणसीमब्रु-
 वन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतसनिस्स्या इति ।
 तथेति । ते नारायणस्याऽपुनन् । तस्मादुत नारायणस्या शतं मुनोति
 ॥६॥ ते रैक्षीमब्रुवन् त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतस-
 निस्स्या इति । तथेति । ते रैभ्याऽपुनन् । तस्मादुत रैभ्या शतं

१-विजिग्यानाम् । २-सां । ३-या । ४-अवीब्रह्म । ५-अविब्र-
 ह्म-नी । ६-अपुनन् । ७-पुनः । विज्या है । ८-तेन । ९-शतम् ।
 १०-मिन्न । ११-त । १२-त ।

सुनोति ॥७॥ सेयम्पूता । अथाऽमुमब्रवीद्ब्रह्म वै किं च किं च
पुनो^{१५}श्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति ॥८॥ १।५०॥

षोडशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स ऐलवेनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता
श्वचः पूतानि यजूषि पूतमनुक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥१॥
ते समेस साम प्राजनयताम् । तद्यत्समेस साम प्राजनयतां तत्सा-
अस्सामत्वम् ॥२॥ तदिदं साम सृष्टमद उत्क्रम्य लेलायदतिष्ठत् ।
तस्य सर्वे देवा ममत्विन आसन्मम ममेति ॥३॥ तेऽब्रुवन्मीव-
म्भजामहा इति । तस्य विभागे न समपादयन् । तान्प्रजापतिर-
ब्रवीदपेत । मम वा एतत् । ग्रहमेव वो विभक्षयामीति ॥४॥
सोऽब्रवीत्प्रवीत्स्वि वै मे ज्येष्ठः पुत्राणामसि । त्वम्प्रथमो वृणीष्वेति
॥५॥ सोऽब्रवीन्मन्द्र साभ्रा वृणेऽभ्राद्यमिति । स य एतद्वायाद-
अदि एव सोऽसन्मासु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वांसमेतद्वायन्त-
मुपवदादिति ॥६॥ अयेन्द्रमब्रवीत्त्वमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्र-

१३ तम् ।

१-अव- । २-वाम । ३-अज- । ४-अत् । ५-मे ।

६-विद्वान् के लिये स्वाति काशी है, वीणा । ७-मविष्य- । ८-अियम् ।

९-मायवाच- । १०-हीमान् । ११-अथ । १२-सोमम् ।

वीरुग्रं सान्नो वृणो श्रियमिति । स य एतद्वाया^{१३}च्छीमानेव सोऽस-
 न्मासु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वांसमेतद्वायन्तमुपवदादिति ॥२॥
 अथ सोममब्रवीत्स्वमनुवृणीष्वेति ॥२॥ सोऽब्रवीद्वसु^{१४} सान्नो वृणो
 मियमिति । स य एतद्वायात्प्रिय एव स कीर्तः प्रियश्चक्षुषः प्रिय-
 स्सर्वेषामसन् मासु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वांसमेतद्वायन्तमुप-
 वदादिति ॥१०॥ अथ बृहस्पतिमब्रवीत्स्वमनुवृणीष्वेति ॥११॥
 सोऽब्रवीत्क्रौञ्चं सान्नो वृणो ब्रह्मवर्चसमिति । स य एतद्वायाद्ब्रह्म-
 वर्चस्येव सोऽसन्मासु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वांसमेतद्वायन्तमुप-
 वदादिति ॥१२॥ १।५१॥

षोडशेऽनुवाके द्वितीयः अयः ।

अथ विश्वान्देवान्ब्रवीद्युयमनुवृणीध्वमिति ॥१॥ तेऽब्रुवन्वैश्व-
 देवं सान्नो वृणीमहे प्रजननमिति । स य एतद्वायात्प्रजावानेव सोऽस-
 दस्मानु देवानामृच्छाद्य एवं विद्वांसमेतद्वायन्तमुपवदादिति ॥२॥
 अथ पशून्ब्रवीद्युयमनुवृणीध्वमिति ॥३॥ तेऽब्रुवन्वायुर्वै ब्रह्माक-
 शीश्रे । स एव नो वरिष्यत इति । ते वायुश्च पशवश्चाब्रुवन्भिरुक्तं सान्नो

१३ वसु । १४ प्रियम् । १५ नास्ति, स य सोऽब्रवीद् ५ में ।

१६ मायवच । १७ नास्ति । १८ नुह- ।

१ 'म' अधिक है । २ नीचे से 'च' स वायु' अधिक होता है ।

३ वरिष्ठ । ४ अग्निरे-

वृक्षीमहे पशव्यमिति । ॥ य एतद्वायात्पशुमानेव सोऽसदस्मानु च
 स वायुं च देवानामृच्छाद्य एवं विद्वांसमेतद्वायन्तमुपवदादिति ॥४॥
 अथ मजापतिरब्रवीदहमनुवरिष्य इति ॥५॥ सोऽब्रवीदनिरुक्तं
 साज्जो ह्ये स्वर्ग्यमिति । स य एतद्वायात्स्वर्गलोक एव सोऽसन्मासु
 स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वांसमेतद्वायन्तमुपवदादिति ॥६॥
 अथ वरुणमब्रवीन्मनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्रवीद्यदो न कश्चना-
 ऽहत तदहम्परिहरिष्य इति । किमिति । अपधान्तं साज्जो ह्येऽयस-
 म्यमिति । स य एतद्वायादपशुरेव सोऽसन्मासु स देवानामृच्छाद्य
 एतद्वायादिति ॥८॥ तानि वा एतान्यष्टौ भीतागीतानि साज्जः ।
 इमान्यु इ वै सप्तगीतानि । अथेयमेव वरुणस्वर्ग्यमिति ॥९॥ स
 त्वं इ कां चैवं विद्वावेतासां सप्तनामागामां गायति गीतमेवास्व
 सन्त्येतानु कामाश्चाप्नोति य एतासु कामाः । अथेयामेव वारुणी-
 तगां न गायेत ॥१०॥ १॥५२॥

सोऽब्रवीदनुवाके तृतीयः अयसः । सोऽब्रवीदनुवाकरत्नमातः ।

— २० —

१-युयु । २-इति तर्क दोष नहीं प्रिय । ७-ति । ८-स्वर्गम ।

९-समुत् । १०-इत्य-क, यत । ११-अपयजतिभ, अपयजतिभ । १२

प्रीति-१३-प्रजाद । १४-य, यत् । १५-य । १६-कामा । १७-गीत-

निम्नमेति ॥

द्वयं धावेदमग्न आसीत्सच्चैवासच ॥२॥ तयोर्यत् सत्
 तत्साम तन्मनस्स प्राणः । अथ यदसत्सर्कं सा वाक् सोऽपानः ॥३॥
 तद्यन्मनश्चप्राणश्च तत्समानम् । अथ या वाक् चापानश्च तत्समानम् ।
 इदमायतनम्नश्च प्राणश्चेदमायतनं वाक् चापानश्च । तस्मात्पुम-
 न्दाक्षिणतो योषामुपक्षेते ॥४॥ सेयमृगस्मिन् सायन् मिथुनै-
 च्छत । तामपुच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् । अथ वा
 ब्रह्मसोऽस्मीति ॥५॥ तद्यत्सा चाऽमश्नत सासाऽभवेत्
 तत्साम्नस्सामत्वम् ॥६॥ तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा
 वै मम त्वमस्यन्यत्र मिथुनमिच्छस्वेति ॥६॥ साऽब्रवीन्न वै तं विन्दा-
 मि येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति । सा वै पुनीष्वेत्यब्रवीत् ।
 अपूता वा असीति ॥७॥ साऽपुनीत यदिदं विप्रा वदन्ति तेन ।
 साऽब्रवीत्स्वर्वेदम्भविष्यतीति । प्रत्यूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां
 प्रीवनं वा एतद्भविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्यूहत् । तस्मादेषाधीरेष
 प्रजानां जीवनमेव ॥८॥ पुनीष्वेत्यब्रवीत् । साऽपुनीत मायया
 साऽपुनीत कुम्भयया साऽपुनीत तारावस्या साऽपुनीत पुराणेति-

१ मयम्-अस्म्यद्वयं सञ्चितेऽति, (अस्त्य) मयितेति । २ पुनीत ।

३ उपपद्यते । ४-स । ५ तन्मनश्च । यम् । ६ 'वा' अधिक है । ७ प्रा-
 स्त्रिणा । ८ त्वे । ९ त्यक् । १०-स्तम्, 'वा' अधिक है ।

हासेन साऽपुनीत यदिदमादाय नाऽऽगायन्ति तेन ॥१॥ साऽब्र-
वीत्केदम्भविष्यतीति । प्रत्युद्देत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां
जीविने वा एतद्भविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्युद्देत् । तस्माद्देष्टा
वीर्वेव प्रजानां जीवनम्वेव ॥१०॥ पुनीष्वेवेत्यब्रवीत् ॥११॥ १॥५३॥

सप्तदशोऽनुवाके प्रथमः सप्तदशः ।

सा मधुनाऽपुनीत । तस्माद्भुत ब्रह्मचारी मधुनाऽश्रीयाद्वेदस्य
पूतान् इति । कामं ह त्वाचार्यदत्तमश्रीयात् ॥१॥ अथर्कं सामा-
ब्रवीद्ब्रह्म वै किं च किं च पुमांश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स
भरणदकेष्योनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः
पूतानि यजूषि पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति च एवं वेद ॥२॥ ताभ्यां
सदो मिथुनाय पर्याश्रयन् । तस्मादुपवसथीयां रात्रिं सदसि न
श्रयीत । अत्र होताष्टकसामे उपवसथीयां रात्रिं सदसि सम्भवतः ।
अथ यथा श्रेय स उपद्रष्टव्यं हि शत्रुदीश्वरोऽनुलब्धः पराभवितोः
॥३॥ अथो - आहुरुद्रातुर्मुखे सम्भवतः । उद्रातुरेव मुखं नैवे-

११ इमम् । १२ मादायना, आदायना ॥

१. सारे पद का पुनर्लेख है । २ स 'कामम्' के स्थान में ।
मा सर्वत्र है । ३ हरणदकेष्योना, मरणद, भरणदकोदयोना । ४-मद ।
५-वीषाक, -दीयाम् । ६-ई । ७-सीत, येत । ८-अ- । ९-अद् ।
१० अनुलब्ध, अनुलुब्ध- ।

तेति ॥४॥ तदु वा आहुः काममेवोद्गातुर्मुखमीक्षेत । उपवसथीयामे-
 वैतां रात्रिं सदसि नं ज्ञयीत । अत्र हेवैताष्टकसामे उपवसथीयां^{१२}
 रात्रिं सदसि सम्भवत इति ॥५॥ तां सम्भविष्यन्नाहाऽमोऽहम-^{१३}
 स्मि सा त्वं सा त्वमस्यमोऽहम् । सा मामनुव्रता भूत्वा प्रजाः प्रज-^{१४}
 नयावहे । एहि सम्भवावहा इति ॥६॥ तां सम्भवन्नत्यरिच्यत^{१५}
 सोऽब्रवीन्न वै त्वाऽनुभवामि । विराड् भूत्वा प्रजनयावेति ।^{१६}
 तथेति ॥७॥ तौ विराड्भूत्वा प्राजनयताम् । हिङ्गारश्चाऽऽहावश्च
 प्रस्तावश्च प्रथमा चोद्गीथश्च मध्यमा च प्रतिहारश्चोत्तमा च निधनं
 च षडङ्कारश्चैव विराड् भूत्वा प्राजनयताम् । ते अमुमजनयतां^{१७}
 योऽसौ तपति । ते व्यद्रवताम् ॥८॥ १।५४॥

सप्तश्लोऽनुषाके द्वितीयः खण्डः ।

मदध्यमूश्मदध्यमूश्मदिति । तस्मादाहुर्मधुपुत्र इति ॥१॥
 तस्मादुतस्त्रियो मधु नाऽश्रन्ति पुत्राणामिदं व्रतं चराम इति वदन्तीः
 ॥२॥ तदयं तृचोऽनूदश्रयत । इयमेव गायत्र्यन्तरिक्षं त्रिष्टुबसौ
 जगती । तस्यैतत्तृचः ॥३॥ स उपरिष्ठात्सामाऽव्याहितं तपति ।

११ न । १२-थी- । १३ 'रणा' अधिक है । १४-म- । १५ सम्भवत ।

१६ अत्यरिच्यते । १७-ह- । १८ च । पथम् । १९ प्रज- ।

२० व्यहृताम्, न्यहृताम्, व्यहृताम् (?) ॥

१-आ । २ इवम् । ३-ईत्- ।

सोऽधुव इवासीदलेलायदिव । स नोर्ध्वोऽतपत् ॥४॥ स देवा-
 नब्रवीदुन्मा गायतेति । किं ततस्स्यादिति । अयं वः प्रयच्छेयम् ।
 मामिह हरेतेति ॥५॥ तयेति । तमुदगायन् । तमेतदब्राह्मणं ।
 तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा देवानां श्रीः ॥६॥ तत एतदूर्ध्वस्तपति ।
 स नार्वाञ्जतपत् ॥७॥ स ऋषीनब्रवीदनु मा गायतेति । किं
 ततस्स्यादिति । अयं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हरेतेति ॥८॥ तयेति ।
 तमन्वगायन् । तमेतदब्राह्मणं । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा ऋषीणां
 श्रीः ॥९॥ तत एतदर्वाङ् तपति । स न तिर्यक् अतपत् ॥१०॥
 स गन्धर्वाप्सरसोऽब्रवीदामा गायतेति । किं ततस्स्यादिति ।
 अयं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हरेतेति ॥११॥ तयेति । तमागायन् ।
 तमेतदब्राह्मणं । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा गन्धर्वाप्सरसां
 श्रीः ॥१२॥ तत एतत् तिर्यक् तपति ॥१३॥ तानि वा एतानि
 त्रीणि साम्ना उद्गीतमनुगीतमागीतम् । तद्यथेदं वयमागायाद्वाक्यम्
 एतदुद्गीतम् । अथ यद्यथागीतं तदनुगीतम् । अथ यत्किंचेति सा-
 स्तसाम्नागीतम् । एतानि त्रैव त्रीणि साम्नः ॥१४॥ १५॥

सतदशोऽनुषाके तृतीयः खण्डः । सतदशोऽनुषाकस्तमाप्तः ।

—:०:—

४ ख-ध-१ ५ हुहेते । ६ उदगात् । ७-हत् । ८ तप-१-६ तिर्यक् ।
 १० स । ११ तिर्यक् । १२ आगयो, प्रागेयो-१ १३-खम् ॥

आपो वा इदमग्रे महत्सलिलमासीत् । स ऊर्मिरुर्मिमस्कन्दत् ।
 ततो हिरण्यमथो कुक्ष्या^२ समभवतां ते एवर्कसामे ॥१॥ सेयमुगिदं
 सामाऽभ्यप्लवत् । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् ।
 अथ वा अहममोऽस्मीति । तद्यत्सा चाऽमश्च तत्साम्नस्सामत्वम् ॥२॥
 तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा वै मम त्वमसि । अन्यत्र
 मिथुनमिच्छस्वेति ॥३॥ सा पराप्लवत् मिथुनमिच्छमाना । सा
 समास्तहर्षं सप्ततीः पर्यप्लवत् ॥४॥ तद्देशः श्लोकः—

श्री त्वेवाऽग्रे संचरतीच्छन्ती सलिले पतिम् ।

समास्तहर्षं सप्तती स्वतोऽजायत पश्यतः, इति ॥५॥

असौ वा आदित्यः पश्यतः । एष एव तदजायत । एतेन
 हि पश्यति ॥६॥ साऽविश्वान्यप्लवत् । साऽब्रवीन्नवैतं विन्दामि-
 येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति ॥७॥ सा वै द्वितीयाभिच्छ-
 स्वेत्यब्रवीन्नवै मैकोऽयं स्यसीति । सा द्वितीयां विश्वा^{१३} न्यप्लवत्
 ॥८॥ (तृतीयाम्) इच्छस्वैवेत्यब्रवीन्नो वाव मा^{१४} द्वे^{१५} उयंस्यथ^{१६}
 इति । सा तृतीयां विश्वा^{१७} न्यप्लवत् । सोऽब्रवीदन्नवै मोऽयं स्यथेति^{१८}

१-व । २ कुक्ष्या । ३ येप । ४ कसामे । ५ ह्यम् । ६ परप्रा-
 ७ सप्तती । ८-ति । ९ पश्यतः । १० तम् । ११ पित्वा । १२ जायति
 सा । १३-न्यप्लवत् । १४-यम् । १५ वै । १६ वा । १७-जानः कोका
 इत्यादि, ये । १८-अहम् । १९-स्यसीति ।

॥६॥ स यदेकपात्रे समवदत्^{१९} तस्मादेकै^{२०} साम । अथ यद्वै अपा-
 सेधत्तस्माद्वयोर्न^{२१} कुर्वन्ति । अथ यत् तिसृभिस्समपादयत्^{२२} तस्मादु-
 वचेसाम ॥१०॥ सा अन्नवीत्पुनीर्ध्वं न पूता वै स्येति ॥११॥ १।५६॥

अष्टादशोऽनुवाके प्रथमः अष्टकः ।

सा गायत्री गाययाऽपुनीत नाराशंसयात्रिष्टुत्रैभ्या जगती ।
 भीमम्बत्^२ मलमपावधिषतेति । तस्माद्भीमलाधियो वा एताः । धियो
 वा इमा मलमपावधिषतेति । तस्मादु भीमलाः । तस्मादु गायतां
 नाऽश्रीयात्^५ । मलेन श्लेते जीवन्ति ॥१॥ अथर्कु^६ सामाऽन्नवीद्गु वै
 किं च किं च पुमोश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स ऊर्ध्वगणेना-
 ऽपुनीत ॥२॥ पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः पूतानि
 यजुषि पूतमनुक्तं स्पृत्^१ सर्वम्भवति य एवं वेद ॥३॥ ताभ्यां
 विष्णो मिथुनाय पर्यौहत् । तां सम्मविध्यन्नह्वयताऽमोऽहमस्मि सा
 त्वं सा त्वमस्पमोऽहमिति ॥४॥ तामेतदुभयतो वाचाऽसरिच्यत्^{१५}
 विस्तारेण पुरस्तादस्तोभेन मध्यतो निधनेनोपरिष्ठात् । अतितिस्रो-
 ब्राह्मणायनीस्सदृशी रिच्यते य एवं वेद ॥५॥ तयोर्यस्सम्भवतो-

१६-यद्वै- २० तिस्र- २१ सम्प्र-॥

१-स्योत् । २-व । ३-ये । ४-ता । ५-अग्नी- ६-कै । ७-तामी ।

८-ता । ९-नूक्- १०-स्यन्त् । ११-अवचयत्, अह्वयन्त् । १२-सामं

१३-वै । १४-त्यह्वयते ।

रुध्वश्च^{१५}पोऽद्रव (प्राणाश्च) ते । ते प्राणा एवोर्ध्वा^{१६} अद्रवन् ॥६॥
 सोऽसावादिसस् एष एव उदगिरेव गी चन्द्रमा एव थम् ।
 सामान्येव उदच एव गी यजूंष्वेव थमित्यधिदेवतम् ॥७॥ अथा-
 ऽध्यात्मम्^{१७} । प्राण एव उदगागेव गी मन एव थम् । स एषोऽधिदेवतं
 चाऽध्यात्मं चोद्गीथः^{१८} ॥८॥ स य एवमेतदधिदेवतं चाऽध्यात्मं
 चोद्गीथं वेदैतेन हास्य सर्वेणोद्गीतम्भवत्येतस्माद् एव सर्वस्मादा-
 दृश्यते य एवं विद्वत्समुपवदति ॥९॥ १।५७॥

अष्टादशोऽनुवाके द्वितीयः अष्टः ।

तद्यदिदमाहुः क उदगासीरिति क एतमादिसमगासीरिति
 ह वा एतत्पृच्छन्ति ॥१॥ एतं ह वा एतं त्रय्या^२ विद्यया गायन्ति ।
 यथा वीणागायिनो गाययेयुरेवम् ॥२॥ स एष हृदः कामानाम्पूर्यो
 यन्मनः । तस्यैषा कुल्या यद्वाक् ॥३॥ तद्यथा वा अपो हृदात्कु-
 ल्ययोऽपराभुपनयन्येवमेवैतन्मनसोऽधि वाचोद्गाता यजमानम्^{१२}
 यस्य कामान् प्रयच्छति ॥४॥ स य उद्गातारं दक्षिणाभिराराधयति^{१३}

१५ कुं- १६ द्र- १७ ऽद्रा- १८ गीथ- १९ गीथ-
 २० भवत्येति, भवन्ति ॥

१-सी । २ प्रच्छेन्त्य । ३ त्रय्या । ४-गायिनो, गायय- ५ हृद्-
 ६ कुल- ७ यत् । ८ वाक् । ९-अ । १० अदो । ११-यैन्य, -यन्ते,
 -यस्य । १२-ना । १३ दक्षिणाभि । १४ राध-

तं सा कुर्व्योऽपधावति । य उ एनं नाऽऽराधयति स उ तामपि-
 हन्ति ॥५॥ अथ वा अतः^{१५} प्रत्तिश्चैव^{१६} प्रतिग्रहश्च^{१७} । तद्धूममिति वै
 प्रदीयते । तद्वाचा यजमानाय प्रदेयम्मनसाऽऽत्मने । तथा ह सर्वं^{१८}
 न प्रयच्छति ॥६॥ तद्यदिदं सम्भवतो रेतोऽसिच्यतं^{१९} तदशयत्^{२०} ।
 यथा हिरण्यमविकृतं^{२१} लेलायदेवम् ॥७॥ तस्य सर्वे देवा ममत्विन
 आसन्मम ममेति । तेऽब्रुवन्वीदं करवामहा इति । तेऽब्रुवञ्छ्रेयो वा^{२२}
 इदमस्मत् । आत्मभिरेवैनद्विकरवामहा इति ॥८॥ तदात्मभिरेव
 व्यकुर्वत । तेषां वायुरेव हिङ्गार आसाऽग्निः प्रस्ताव इन्द्र आदि-
 स्सोमवृहस्पती उद्गीयोऽश्विनौ प्रतिहारो विश्वे देवा उपद्रवः^{२३}
 प्रजापतिरेव निधनम् ॥९॥ एता वै सर्वा देवता एता हिरण्यम्^{२४} ।
 अस्य सर्वाभिर्देवताभिस्तुतम्भवति य एवं वेद । एताभ्य उ एव स
 सर्वाभ्यो देवताभ्य आहूच्यते य एवं विद्वांसमुपवदति ॥१०॥ १।५८॥

अष्टादशोऽनुषाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तश्चैकितानेयः कुरुजगामाऽभिमतारिणं काक्ष-
 सोनिम् । स हाऽस्मै मधुपर्कं यथाच ॥१॥ अथ हास्य वैप्रथमं पुरो-

१५ अधः । १६ प्रतिशः । १७ जु- । १८ आत- । १९ सिच्य- ।
 २० वया- । २१ अपि- । अपि- । २२ या- । २३ सोमाह- । २४ हिरण्यम् ॥
 १ क- । आरि- । २ एक मे यहां हि समाप्ति है । ३-य ।

हितोऽन्ते निषसाद शौनकः । तं हाऽनामन्थ्य मधुपर्कम्पयौ ॥२॥
 तं होवाच किं विद्वाभो दालभ्याऽनामन्थ्य मधुपर्कम्पिवसीति ।
 सामवैर्यम्पपद्येति होवाच ॥३॥ तं ह तत्रैव पप्रच्छ यद्वा यौ
 तद्वेत्या३इति । हिङ्गारो वा अस्य स इति ॥४॥ यदग्रौ तद्वेत्या३-
 इति । प्रस्तावो वा अस्य स इति ॥५॥ यदिन्द्रे तद्वेत्या३इति ।
 आदिर्वा अस्य स इति ॥६॥ यत्सोमबृहस्पतौस्तद्वेत्या३इति । उद-
 गीथो वा अस्य स इति ॥७॥ यदश्विनोस्तद्वेत्या३इति । प्रतिहारो
 वा अस्य स इति ॥८॥ यद्विश्वेषु देवेषु तद्वेत्या३इति । उपद्रवो
 वा अस्य स इति ॥९॥ यत्प्रजापतौ तद्वेत्या३इति । निधनं वा
 अस्य तदिति होवाच । आर्षेयं वा अस्य तद्वन्धुता वा अस्य
 सेति ॥१०॥ स होवाच नमस्तेऽस्तु भगवो विद्वानप्य मधुपर्कमिति
 ॥११॥ अथ हेवरः पप्रच्छ किं देवसं सामवैर्यम्पपद्येति । यदेवसा-
 नु स्तुवत इति होवाच तदेवसमिति ॥१२॥ तदेतत्वा साध्वेव
 प्रत्युक्तम् । व्याप्तिर्या अस्यैवेति होवाच श्रोतेति । मेदं ते नमो-
 ऽकमेति होवाच । मैव नोऽतिमाक्षीरिति ॥१३॥ स होवाचाऽप्रच्छं

४-मन्त्रः । ५ सामवैर्यम्, '२' रहित । ६ तत् । ७ सोमाव-
 न् '६' का पुनस्तुति । ८ नास्ति । ९ अन्व । १०-वत्या ।
 ११ सामवैर्यम् । १३-उत्तम ।

वाव. त्वा देवताममर्त्यं वाव त्वा देवतायै देवताः । वामदेवस्य साय
 वाचो मनो देवता मनसः पशवः पशूनामोषधय ओषधीनामायः ।
 तदेतद्दृष्ट्वा^{१४} जातं सामाप्सु प्रतिष्ठितमिति ॥१४॥ १।५६॥

अष्टादशोऽनुवाके चतुर्यः श्रवणः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवा मनसोदगायन् । तदेषामसुरा
 अभिदुस्तं पाप्मना समसृजन् । तस्माद्बहु किं च किं च मनसा
 ध्यायति । पुरयं चैनेन ध्यायति पापं च ॥१॥ ते वाचोदगायन् ।
 तां तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च किं च वाचा वदति । सत्यं
 चैनया वदसन्तुतं च ॥२॥ ते चक्षुषोदगायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन्
 तस्माद्बहु किं च किं च चक्षुषा पश्यति । दर्शनीयं चैनेन पश्यत
 दर्शनीयं च ॥३॥ ते श्रोत्रेणोदगायन् । तत्तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु
 किं च किं च श्रोत्रेण शृणोति । श्रवणीयं चैनेन शृणोत्यश्रवणीयं
 च ॥४॥ तेषानेनोदगायन् । तं तथैवाऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च
 किं चाऽपानेन जिघ्रति । सुरभि चैनेन जिघ्रति दुर्मेन्धि च ॥५॥
 ते प्राणोदगायन् । अथासुरा आद्रवस्तथा करिष्याम इति
 मन्यमानाः ॥६॥ स यथाऽऽमानमृत्वा लोष्टो विध्वंसेतैवमेवाऽसुरा

१४ भ्यो ।

१ उगायन् । २-द्रव्य अथवा-द्रव्य । ३-सृजन् । ४ च । ५ कूरन्
 द-स्य । ६ च । ८ नास्ति । ९-गायन् ।

व्यध्वँसन्तं । स एषोऽवमाऽऽस्वरां यत्प्राणाः ॥७॥ ॥ यथाऽश्मान-
 रास्त्रणमृत्वा लोष्टो विध्वँसत एवमेव स विध्वँसते य एवं विद्रो-
 समुपवदति ॥८॥ १६०॥

अष्टादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टादशोऽनुवाकस्तमातः ।

[इति प्रथमोऽध्यायः ।]

—१०—

१० सते, यन्ता । ११-शौ । १२ आशेष ।

[अथ द्वितीयोऽध्यायः ।]

देवानां वै षडुद्गातार आसन् वाक् च मनश्च चक्षुश्च
 श्रोत्रं चाऽपानश्च प्राणश्च ॥१॥ तेऽभ्रियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहे
 येनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गलोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्
 वाचोद्गात्रा दीक्षामहा इति । ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव
 वाचा वदति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥३॥
 ताम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स
 पाप्मा ॥४॥ तेऽब्रुवन् न वै नोऽयम् मृत्युं न पाप्मानमलवाक्षीद ।
 मनसोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥५॥ ते मनसोद्गात्राऽदीक्षन्त । स
 यदेव मनसा ध्यायति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवे-
 भ्यः ॥६॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति
 स एव पाप्मा ॥७॥ तेऽब्रुवन् नो न्वाव नोऽयम् मृत्युं न
 पाप्मानमलवाक्षीद । चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥८॥ ते चक्षुषो-
 द्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव चक्षुषा पश्यति तदात्मन आगायदथ य
 इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥९॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव
 चक्षुषा पश्यन्पश्यति (स एव स पाप्मा) ॥१०॥ तेऽब्रुवन् नो न्वाव

'नोऽयमृत्युं न पाप्मानमखयाक्षीत् । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति
 ॥११॥ ते श्रोत्रेणोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव श्रोत्रेण मृणोति
 तदात्मन आगायदथ य इतरे कामस्तान्देहेभ्यः ॥१२॥ तत्पाप्मा-
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव श्रोत्रेण पापं मृणोति स एव स पाप्मा
 ॥१३॥ तेऽब्रुवन् नो न्वाय नोऽयम मृत्युं न पाप्मानमखयाक्षीत् ।
 अगनेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१४॥ तेऽगनेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ।
 स यदेवाऽगनेनाऽपानिति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामा-
 स्तान्देहेभ्यः ॥१५॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेवाऽपानेन पापं
 मृणोति स एव स पाप्मा ॥१६॥ तेऽब्रुवन् नो न्वाय नोऽयम-
 मृत्युं न पाप्मानमखयाक्षीत् । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१७॥
 ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव प्राणेन प्राणिति तदात्मन
 आगायदथ य इतरे कामस्तान्देहेभ्यः ॥१८॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत ।
 न ह्येतेन प्राणेन पापं वदति न पापं ध्यायति न पापमपश्यति न
 पापं मृणोति न पापं मन्त्रमपानिति ॥१९॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य
 पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन । अपहस्य ह्येव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं
 लोकमिति य एवं वेद ॥२०॥ २।१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा या सा वागासीत्सोऽग्निरभवत् ॥१॥ अथ यत्तन्यन
 आसीत् स चन्द्रमा अभवत् ॥२॥ अथ यत्तच्चतुरासीत् स
 आदिसोऽभवत् ॥३॥ अथ यत्तच्छ्रोत्रमासीत्ता इमा दिशोऽभवन् ।
 ता उ एव विश्वेदेवाः ॥४॥ अथ यत्तसोऽपान आसीत्स बृहस्पतिरभवत् ।
 यदस्यै वाचो बृहत्तै पतिस्रस्माद्बृहस्पतिः ॥५॥ अथ यस्त प्राणा
 आसीत्स प्रजापतिरभवत् । स एव पुत्री प्रजावानुद्गीथो यः प्राणः ।
 तस्य स्वर एव प्रजाः । प्रजावान्भवाति य एवं वेद ॥६॥ तंहैतमेके
 मसत्त्वमेव गायन्ति प्राणाः ३ प्राणाः ३ प्राणाः ३ हुम्भा ओवा इति ॥७॥
 तद् होवाच आध्यापनिस्रत एतमर्हति मसत्त्वं गातुम् । यद्वाच
 वाचा करोति तदेतदेवाऽस्य कृतम्भवतीति ॥८॥ अथ वा अत
 आत्सालोरेव प्रजातिः । स यदिङ्कुरोस्त्वभ्येव तेन क्रन्दति । अथ
 यत्प्रस्रासैव तेन पुत्रते । अथ यदादिमादत्ते रेत एव तेन सिञ्चति ।
 अथ यदुद्रायति रेत एव तेन सिक्तं सम्भावयति । अथ यत्प्राप्ति-
 त्हरति रेत एव तेन सम्भूतम्भवर्थयति । अथ यदुपद्रवति रेत एव
 तेन महर्द्धं विकरोति । अथ यन्निधनमुपैति रेत एव तेन विकृतम्भज-

नयति । सैर्षसाज्ञोः प्रजातिः ॥६॥ स य एवमेवामृकसाज्ञोः
प्रजातिं वेत्त प्र हैनमृकसामनी जनयतः ॥१०॥ २।२॥

प्रथमोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्तथाहः ॥

—:०:—

एष एवेदमग्र आसीद्य एष तपति । स एष सर्वेषांभूतानां
तेजो हर इन्द्रियं वीर्यमादायोर्ध्व उदक्रामत् ॥१॥ सोऽक्रामयते-
कमेवाऽक्षरं स्वादु मृदु देवानां वनामेति ॥२॥ स तपोऽतप्यत ।
स तपत्तप्तैकमेवाऽक्षरमभक्त ॥३॥ तं देवाश्चर्ययश्चोपसमैप्सन् ।
अथैषोऽक्षुरान्भूतहनोऽसृजतैतस्य पाप्मनोऽनन्वागमाय ॥४॥ ते
वाचोपसमैप्सन् । ते वाचं समारोहन् । तेषां वाचमपर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादत्ता वाक् । सखं च ह्येनया वदसन्तुते च ॥५॥ तम्म-
नसोपसमैप्सन् । ते मनस्समारोहन् । तेषाम्मनः पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादत्तम्मनः[ः]स् । पुरयं च ह्येनेन ध्यायति पापं च ॥६॥
तं चक्षुःोपसमैप्सन् । ते चक्षुस्समारोहन् । तेषां चक्षुः पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादत्तं चक्षुः । दर्शनीयं च ह्येनेन पश्यत्यदर्शनीयं च ॥७॥

६ साज्ञोः, कसाज्ञोः ।

१-स २-मृक ३-मृदु ४-मस्तु ५-प्रति ६-देवा ।

७ ' उदेवानाम ' पूर्वं सो पुनः है । ८ पर्ययं ।

तं श्रोत्रेणोपसमैप्सन् । ते श्रोत्रं समारोहन् । तेषां श्रोत्रम्पर्यादत्त ।
 तस्मात्पर्याचं श्रोत्रम् । श्रवणीयं चेनेन शृणोसश्रवणीयं च ॥८॥
 तमपानेनोपसमैप्सन् । तेऽपानं समारोहन् । तेषामपानम्पर्यादत्त ।
 तस्मात्पर्याचोऽपानः । सुरभि च ह्येनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥९॥
 तन्मात्रेणोपसमैप्सन् । तन्मात्रेणोपसमाप्नुवन् ॥१०॥ अथाऽसुरा
 भूतहन् आद्रवामोऽहमिष्याम इति दन्दमानाः ॥११॥ स यथा-
 ऽज्मत्सृज्वा लोष्टो विध्वंसतेवमेवऽसुरा व्यध्वंसन्त । स एषोऽस्मा-
 ऽस्वयो दत्पाणः ॥१२॥ स यथाऽदमानगारुदत्ता लोष्टो
 विध्वंसते एवमेव स विध्वंसते य एरं विद्वांसमुपवदति ॥१३॥ ॥१॥

ह्यं तीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स एष वशी दीप्ताग्र उद्गीथो यत्पाणः । एष हीदं सर्वं वनेकुस्ते
 ॥१॥ वशी भवति वने स्नात्कुस्ते य एवं वेद । अस्य असावग्रे
 दीप्यते ३ अमुष्य वासः ॥२॥ तं हेतमुद्गीथं शाश्वत्यायनिराचष्टे वशी
 दीप्ताग्र इति । दीप्ताग्रा ह वा अस्य कीर्तिरभवति य एवं वेद ॥३॥
 आभूतिरिति कारीरादयः प्राणं वा अनुमजाः पशव आभवन्ति ।
 स य एवमेतमाभूतिरिन्दुपास्त एव प्राणेन प्रजयापशुभिर्भवति ॥४॥

८ पर्याच, पर्याप्त ।

१० यथा तं हृदं सर्वं वनेकुस्ते दिला पाठ दंते हैं । २-शो ।
 ३ अमुष्य-४ अतः ।

सम्भूतिरिति सात्त्विकः । माणं वा अनुजः पशवस्सम्भवन्ति ।
 स य एवमेतं सम्भूतिरित्युपास्ते समे [व] माणेन प्रजया पशुभि-
 र्भजति ॥१॥ प्रभूतिरिति क्षेत्रज्ञः । माणं वा अनुजः पशवः
 सम्भवन्ति । स य एवमेतं सम्भूतिरित्युपास्ते प्रैव माणेन प्रजया
 पशुभिर्भजति ॥६॥ भूतिरिति भास्त्रविन्दः । माणं वा अनुजः
 पशवो भजन्ति । स य एवमेतं भूतिरित्युपास्ते भात्येव माणेन
 प्रजया पशुभिः ॥७॥ अरोधोऽनपहृद् इति पार्ष्णशैलनः ।
 एष ह्यन्यमपरणादि नैतमन्यः । एष ह वाऽस्य द्विषन्तम्भ्रातृव्यम-
 परणादि य एव वेद ॥८॥ ॥॥

द्विषन्तम्भ्रातृव्यमपरणादि नैतमन्यः ।

एकरोध इत्याख्योऽयः । एको ह्येव वीरो यस्यायः । आ हा
 ऽस्यैको वीरो वायंवाजायते य एव वेद ॥९॥ एकपुत्र इति चैकितानेयः ।
 एको ह्येव पुत्रो यस्यायः ॥१०॥ स उ एव द्विपुत्र इति । द्वौ हि
 माणापानो ॥११॥ स उ एव त्रिपुत्र इति । त्रयो हि माणोऽपानो
 व्यपानः ॥१२॥ स उ एव चतुष्पुत्र इति । चत्वारो हि माणोऽपानो

१-सूर्यः २-शक्तिः ३-प्रजया अजिक है । ४-भू । ५-अरोधः ।
 ६-पात्रि । ७-से । ८-स । ९-वर्जः ।

१-ह । २-त्या । ३-एव । ४-को । कोस्थान मे सर्वत्र 'यका' । ५-य ।
 ६-विष्टः ।

ध्यानस्समानः ॥५॥ स उ एव पञ्चपुत्र इति । पञ्च हि मासोऽपानो
 ध्यानस्समानोऽवानः ॥६॥ स उ एव षट्पुत्र इति । षट् हि मासो-
 ऽपानो ध्यानस्समानोऽवान उदानः ॥७॥ स उ एव सप्तपुत्र इति
 सप्त हीमे शीर्षययाः प्राणाः ॥८॥ स उ एव नवपुत्र इति सप्त हि
 शीर्षययाः प्राणा द्वात्रिंशौ ॥९॥ स उ एव दशपुत्र इति । सप्त-
 शीर्षययाः प्राणा द्वात्रिंशौ नाभ्यां दशमः ॥१०॥ स उ एव
 षड्पुत्र इति । एतस्य हीयं सर्वाः भजाः ॥११॥ एतं ह स्म वैतदुद्गीथं
 विद्वोःसः पूर्वैर्ब्राह्मणाः कामागायिनं आहुः कति ते पुत्रानागास्याम
 इति ॥१२॥ २॥५॥

द्विस्तयेऽनुवाके तृतीयः अष्टकः ।

स यदि ब्रूयादेकमन्त्रं आगायेति प्राण उद्गीथ इति विद्वानेकमन्त्रसा
 ध्यायेत् । एको हि प्राणः । एको ह्यस्याऽऽजायते ॥१॥ स यदि
 ब्रूयाद्वो म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्द्वौ मनसा ध्यायेत् ।
 द्वौ हि प्राणापानौ द्वौ हेवाऽस्याऽऽजायेते ॥२॥ स यदि ब्रूयाद्वीन्म आ-
 गायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वोस्त्रीन्मनसा ध्यायेत् । त्रयो हि प्राणो

६-ना । ७-अभि । ८-आ । ९-षट्पुत्र । १०-यम, दयम ।

११-नेन ॥

१-येकम् । २-त्रयो । ३-‘कामः’ अधिक है । ४-‘स’ हेवाऽस्याऽऽजा-
 यते अधिक है । ५-मन ।

ऽपानोऽव्यानः । अथो हेवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥३॥ स यदि ब्रूयात्तुरो म
 आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान्श्चतुरो मनसा ध्यायेत् । चत्वारो
 हि प्राणोऽपानो व्यानस्समानः । चत्वारो हेवास्याऽऽजायन्ते ॥४॥

स यदि ब्रूयात्पञ्च म आगायेति प्राणउद्गीथ इत्येव विद्वानपञ्चमनसा
 ध्यायेत् । पञ्च हि प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽवानः । पञ्च हेवाऽस्या
 ऽऽजायन्ते ॥५॥ स यदि ब्रूयात् षष्ठम आगायेति प्राणउद्गीथ इत्येव
 विद्वान् षष्ठमनसा ध्यायेत् । षड् प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽवान्
 उदानः । षड् हेवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥६॥ ॥ यदि ब्रूयात्सप्तम आगा-

येति प्राणउद्गीथ इत्येव विद्वान् सप्तमनसा ध्यायेत् । सप्त हीमे
 क्षीर्षण्याः प्राणाः । सप्त हेवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥७॥ स यदि ब्रूयात्त
 म आगायेति प्राणउद्गीथ इत्येव विद्वान्मनसा ध्यायेत् । सप्त
 क्षीर्षण्याः मन्त्रा द्वाववाञ्छौ । नव हेवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥८॥ स

यदि ब्रूयादश म आगायेति प्राणउद्गीथ इत्येव विद्वान् दशमनसा
 ध्यायेत् । सप्त क्षीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्छौ नाभ्यां दशमः दश हेवा
 ऽस्याऽऽजायन्ते ॥९॥ स यदि ब्रूयात्सहस्रम् आगायेति प्राणउद्गीथ

इत्येव विद्वान् सहस्रमनसा ध्यायेत् । सहस्रं हेत आदित्यरश्मयः ।

तेऽस्य पुत्राः । सहस्रं हेवाऽस्याऽऽजायन्ते ॥१०॥ एवं हेतमुद्गीथ

१ नास्ति । स यदि व्यानम् ॥ ७ भा ८ हे १५ अ १ २० व १ २१ ह १

अथ आद्वारः कर्त्तव्योऽस्त्रसदस्युरिति पूर्वे महाराजाः श्रोत्रियास्तु-
 त्तु पुत्रसुयज्ञेषु दुः । ते ह सर्व एव सहस्रपुत्रा आसुः ॥ ११ ॥ तत्र एवै-
 वेद सहस्रं हेवाऽस्य पुत्रा भवन्ति ॥ १२ ॥ २०६ ॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः अष्टकः । द्वितीयेऽनुवाकरसमाप्तः ।

शर्मातो वै मानवः प्राच्यां स्थल्यामयजत । तस्मिन् इ भूता-
 न्युक्षीयेऽपित्रमोषरे ॥ १ ॥ तं देवा बृहस्पतिनोद्गात्रा दीक्षामहा-
 हति पुरस्तादागच्छन्त्यं त उद्गायत्विति । धन्वेनाऽऽजद्विषेण
 पित्रो दक्षिणतोऽग्ने त उद्गायत्वित्युशनसा काव्येनाऽनु-
 पश्चादयं त उद्गायत्वित्यासोनाऽऽहिरसेन मनुष्या उत्तरतो-
 ऽग्ने त उद्गायत्विति ॥ २ ॥ स होवाच हे धेनोऽ पृच्छानि-
 कियतो वा एक इति कियत् एकः कियत् एक इति ॥ ३ ॥ स होवाच
 बृहस्पति धन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति ॥ ४ ॥ स होवाच देवे-
 ष्वेव श्रीस्स्याद्देवेष्वीशा स्वर्गमुत्वांनोकं गमयेच्चमिति ॥ ५ ॥ अथ
 होवाच बभूवमजद्विषधन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति ॥ ६ ॥ स

१२ अग्ने । १३ यद् ।

१ शोभ्या- २ स्थल्यामय । ३ अत्रैषत । ४ ऽग्निसम्यक् ।
 ५ ऐक्षिते । ६ विष्म- ७ दक्षिणातो । ८ काव्येना । ९-१० इवातः ।
 ११ अ-संश्लेषेण, अयद्विषेण । १२ कियं । १३-तिः । १४ अयमेव अधिक-
 है । १५ नास्तिक, होवाच ततस्स्यादिति ।

होवाच पितृष्वेव श्रीस्स्यात्पितृष्वीशा स्वर्गसु त्वां लोकं गमयेयमिति
 ॥७॥ अथ होवाचोन्नतसं कार्यं यन्मे त्वमुद्गमयेः किं तत्तस्स्यादिति
 ॥८॥ स होवाचाऽमुरेष्वेव श्रीस्स्यादमुरेष्वीशा स्वर्गसु त्वां लोकं
 गमयेयमिति ॥९॥ अथ होवाचाऽयास्यमाक्षिरसं यन्मे त्वमुद्गमयेः किं
 तत्तस्स्यादिति ॥१०॥ स होवाच देवानेव देवलोकं दध्यान्मनुष्या-
 न्मनुष्यलोके पितॄन् पितृलोके भुदेयाऽस्माह्मोकादमुरान् स्वर्गसु त्वां
 लोकं गमयेयमिति ॥११॥॥१॥॥॥

तृतीयेऽध्यायके प्रथमः अष्टकः ।

स होवाच त्वं मे भगव उद्गाय य एतस्य सर्वस्य यज्ञोऽसीति
 ॥१॥ तस्य हाऽयास्य एवोज्जगौ । तस्मादुद्गाता हत उत्तरतो
 निवेशनं लिप्सेत । एतद् नाऽऽरूढ निवेशनं यदुत्तरतः ॥२॥
 उत्तरत आगतौ वास्य आक्षिरसश्शर्यातस्य मानवस्योज्जगौ । ■
 माथेन देवान्देवलोकं दधादपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्याप्तेन
 पितॄन् पितृलोके विष्णुरेण वज्रेशाऽस्माह्मोकादमुरान्नुवत ॥३॥
 तस्य होवाच दूरं गच्छतेति । स दूरो ह नाम लोकः । तं ह जग्मुः ।
 त एतेऽमुरा असम्भाव्यम्पराभूताः ॥४॥ छन्दोभिरेव भाष्य

१८ य । १७ जे । १८ शक्ति । १९ न्वे । २० व्याप्त । २१-द्वे ।
 २२ 'ह' अधिक है । २३ द्वे ।
 १-हास । २-द्वे । ३-असंभवम्-।

अर्थात्तन्मानवं स्वर्गं लोकं गमयांचकार ॥१॥ ते होचुरसुरा एत तं
वेदाम यो नोऽयमिथमधत्तेति । तत् आगच्छन् । तमेसाऽपश्यन् ॥६॥
तेऽब्रुवन्नयं वा आस्य इति । यदब्रुवन्नयं वा आस्य इति तस्मादय-
मास्यः । अयमास्यो ह वै नामैषः । तमयास्य इति परोक्षमाच-
क्षते ॥७॥ स प्राणो वा अयास्यः । प्राणो ह वा एनान् स
मुनुदे ॥८॥ स य एवं विद्वानुद्रायति प्राणेनैव देवान्देवलोके
दधातपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन पितॄन् पितृलोके
हिङ्गुरेणैव वज्रेणाऽस्माज्जोकाद्विषन्तम्भ्रातृव्यं नुदते ॥९॥ १०॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः सप्तः ।

तं ह मूयाद्दूरं गच्छेति । स यमेव लोकमसुरा अगच्छन्तं ह वै
गच्छति ॥१॥ कुन्दोभिरेव वाचा यजमानं स्वर्गं लोकं गमयति ॥२॥
ता एतां व्याहृतयः । प्रेतोति वाग् इति । भूर्भुवस्स्वरित्युदिति ॥३॥
तथत्येति तत्प्राणस्तदयं लोकस्तदिमं लोकमस्मिँल्लोक अभजति ॥४॥
एतपानस्तदसौ लोकस्तदमुं लोकममुष्मिँल्लोक अभजति ॥५॥
वागिति तद्वाक् तदिदमन्तरिक्षम् ॥६॥ भूर्भुवस्स्वरिति सा अग्नी-
विद्या ॥७॥ उदिति सोऽसावादित्यः । तथदुदित्युदिव स्तेष-

४ शय्या-१ ५ त-१ ६-कस्त-१ ७-असो-१ ८ पाद-१ ९ पक्षि-१
१०-व्यान् ॥

१-आ । २-स्या-१ ३-स्त-१

यतिं ॥८॥ तद्यदेकमेवाऽभिसम्पद्यते तस्मादेकवीरः । एको ह तु
सन्वीरो वीर्यवान् भवति । आहाऽस्यैको वीरो वीर्यवान् जायते
य एवं वेद ॥९॥ तद्गु होवाच शाक्यायनिर्बहुपुत्र एव उद्गीय इत्ये-
वोपासितव्यम् । बहवो ह्येत आदित्य रश्मयस्तेऽस्य पुत्राः । तस्मा-
द्बहुपुत्र एव उद्गीय इत्येवोपासितव्यमिति ॥१०॥११॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्तमातः ।

देवामुरास्समयतन्तेसाहुः । न ह वै तदेवामुरास्सम्येतिरे ।
प्रजापतिश्च ह वै तन्मृत्युश्च सम्येताते ॥१॥ तस्य ह प्रजापतेर्देवाः
प्रियाः पुत्रा अन्त आमुः । तेऽधियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै येना-
ऽपहस मृत्युमपहस पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्वा-
चोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥३॥ ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य
इदं वागागायद्यदिदं वाचा वदति यदिदं वाचा भुञ्जते ॥४॥
ताभ्याप्याऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स पाप्मा ॥५॥
तेऽब्रुवन् न वै नोऽयममृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् । मनसोद्गात्रा
दीक्षामहा इति ॥६॥ ते मनसोद्गात्रा दीक्षन्त । तेभ्य इदममन

४ इत्येष्ट-१५-५ । ६-यावान् । ७-य (इत्य) । ८-आदित्यस्य । ९-त ॥

१-वाच । २ 'नोद्गात्रा दीक्षामहा इति' अधिक है पर 'ते'
और 'न्य' के बीच आख दृष्टि से काटा गया है । ३ अयत्- ।

आगायद्यदिदम्भनसा ध्यायति यदिदम्भनसा भुञ्जते ॥७॥ तत्पा-
 प्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति स एव स
 पाप्मा ॥८॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाचीव ।
 ब्रह्मणेद्वात्रा दीक्षामहा इति ॥९॥ ते चक्षुषोद्वात्राऽदीक्षन्त ।
 तेभ्य इदं चक्षुरागायद्यदिदं चक्षुषा पश्यति यदिदं चक्षुषा
 भुञ्जते ॥१०॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव चक्षुषा पापम्पश्यति
 स एव स पाप्मा ॥११॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मा-
 नमसवाचीव । श्रोत्रेणोद्वात्रा दीक्षामहा इति ॥१२॥ ते श्रोत्रेणो-
 द्वात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं श्रोत्रमागायद्यदिदं श्रोत्रेण शृणोति
 यदिदं श्रोत्रेण भुञ्जते ॥१३॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव
 श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा ॥१४॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव
 नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाचीव । प्राणेनोद्वात्रा दीक्षामहा
 इति ॥१५॥ ते प्राणेनोद्वात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं प्राण आगाय-
 द्यदिदं प्राणेन प्राणिति यदिदं प्राणेन भुञ्जते ॥१६॥ तत्पाप्मा-
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव प्राणेन [पापं] प्राणिति स एव स
 पाप्मा ॥१७॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाचीव ।
 अग्नेन सूर्येन प्राणेनोद्वात्रा दीक्षामहा इति ॥१८॥ तेनेन

मुख्येन प्राप्तेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ॥१६॥ सोऽब्रवीन्मृत्युरेष एषां स
सद्गता येन मृत्युमस्येव्यन्तीति ॥२०॥ न ह्येतेन प्राप्तेन एषां
वदति न पापं ध्यायति न पापम्पश्यति न पापं कृणोति न पापं
गन्धमपानिति ॥२१॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं
लोकमायन् । अपहस्य ह्येव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य
एवं वेद ॥२२॥२१०॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स यथा हत्वा प्रमृष्टाऽतीयादेवमेवैतन्मृत्युमत्यायन् ॥१॥
स वाचंस्पृश्यामत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं न्यदधात् । सोऽग्निर-
भवत् ॥२॥ अथ मनोऽत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं न्यदधात् । स
चन्द्रमाभवत् ॥३॥ अथ चक्षुरत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं न्यदधात् ।
स आदित्योऽभवत् ॥४॥ अथ श्रोत्रमत्यवहत् । तत्परेण
मृत्युं न्यदधात् । ता इमा दिव्योऽभवन् । ता उ एव विभे देवाः
॥५॥ अथ प्राणमत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं न्यदधात् । स वायुर-
भवत् ॥६॥ अथाऽऽत्माने केवलमेवाऽभाधमागायत् ॥७॥ स एष

७-यस्य । ८-गमयन् ।

१ स अधिक है, 'आत्यायन्' के स्थान में-कस्य । २-सु । ३-न ।

४-देवाः ।

एवाऽयास्यः । आस्ये^१ धीयते^२ । तस्मदयास्यः । यद्वेवा^३ [ऽयम्]
 आस्य^४ रमते तस्माद्वेवाऽयास्यः ॥८॥ स एष एवाऽऽङ्गिरसः ।
 अतो^५ हीमान्यङ्गानि रसं समन्ते । तस्मादाङ्गिरसः^६ । यद्वेवैषा-
 मङ्गानां रसस्तस्मा द्वेवाऽऽङ्गिरसः ॥९॥ तं देवा अनुवन् केवसं^७
 वा आत्मनेऽप्राथभागासीः । अनु न एतास्मिन्नाद्य आभजं^८ ।
 एतदस्याऽनामयत्वमस्तीति ॥१०॥ तं वै प्रविशतेति । स वा
 आकाशान् कुरुष्वेति । स इमान् मायास्माकं शान् कुरुत ॥११॥
 तं वागेव भूत्वाऽग्निः प्राविशन्मनो भूत्वा चन्द्रमाश्चक्षुर्भूत्वा
 ऽऽदित्यश्चोत्रम्भूत्वा विश्वः प्राणो भूत्वा वायुः ॥१२॥ एषा वै
 दैवी परिषदैवी सभा दैवी संसत् ॥१३॥ गच्छति ह वा एतां^९
 दैवीन्परिषदं दैवीं सभां दैवीं संसदं य एवं वेद ॥१४॥ १॥१॥

अनुपेक्षुषाके त्रितीयः खण्डः ।

यत्रो ह वैक चैता देवता निस्पृशन्ति न ह वै तत्र कश्चन
 पाप्मान्यङ्गः परिशिष्यते ॥१॥ स विद्यामेह कश्चन पाप्मान्यङ्गः
 परिशेष्यते सर्वमेवैता देवताः पाप्मानं निधक्ष्यन्तीति । तथा ह वै

१ आसे । २ धीयति । ३ एते । ४ स्ये । ५-ऽयास्यः । ६ अङ्ग-
 ११ अः । १२ आनयत्वम् । १३ असी । १४ आकाशात् ।
 १५ आकासनम् । १६ कुरुत । १७ 'न' नास्ति । १८ प्रेषी-
 १९ वे । २ खले । ३ पवम् । ४ पता ।

भवति ॥२॥ य उ ह वा एवंविदमृच्छति^१ यथैता देवता ऋत्वा
नीयादेवं न्येति^२ । एतासु ह्येवेन देवतासु प्रपन्नमेतासु वसन्तमुप-
वदति ॥३॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽऽर्तिरस्ति य एवं वेद । य
एवैनमुपवदति स आर्तिमार्च्छति^३ ॥४॥ स य एनमृच्छदेव तादेवता
उपसृत्य ब्रूयादयम्माऽऽरत्त^४ स इमामार्ति^५ न्येत्विति । तां ह्येवाऽऽर्ति
न्येति ॥५॥ यावदावासा उ हाऽस्येमे माया अस्मिँलोक एतावदा-
वासा उ हाऽस्यैता देवता अमुष्मिँलोके भवन्ति ॥६॥ तस्माद्
ह्येवं विद्वाभवाऽगृह्णतायै विभीषाभाऽलोकतायै । एता मे देवता
अस्मिँलोके गृहान् करिष्यन्ति । एता अमुष्मिँलोके भवन्ति ।
तस्माद् लोकम्पदास्यन्तीति ॥७॥ तस्माद् ह्येवं विद्वाभवाऽगृह्णतायै
विभीषाभाऽलोकतायै । एता मे देवता अस्मिँलोके गृहेभ्यो
गृहान् करिष्यन्ति स्वेभ्य आयतनेभ्य इति ह्येवं विद्याद् [एता]
देवता अमुष्मिँलोके लोकम्पदास्यन्तीति ॥८॥ तस्माद् ह्येवं

१-विद् वा विद् । २-पुच्छति । ३-मेति । ४-तीर । ५-आकृति ।

१०-यम् । ११-रात् । १२-अस्ति । १३-दावता । १४-प्रह । १५-अस्मिन् ।

१६-प्रवदा- । १७-‘आयतनेभ्य’ अचिक है । १८-यष ता ॥

विद्वाभैवाऽऽहतायै विभीषाभाऽलोकतायै एता म एतदुभयं
संनस्यन्तीति हैव विद्यात् । तथा हैव भवति ॥६॥२॥१२॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्तमातः ।

देवा वै ब्रह्मणो वत्सेन^१ वाचमदुहन् । अग्निर्है वै ब्रह्मणो
वत्सः ॥१॥ सा या सावाग्ब्रह्मैव तत् । अथ योऽग्निर्मृत्युस्तः ॥२॥
तापेतां वाचं यथा वेजुं वत्सेनोपसृज्य^२ भक्षां दुहीतैवमेव देवा वाचं
सर्वान्कामानदुहन् ॥३॥ दुहे ह वै वाचं सर्वान्कामान्य एवं वेत् ।
स हैनोऽनामृतो वाचं देवीमुदिम्ये^३ वद वद वदेति ॥४॥ तथादिह
पुरुषस्य पापं कृतम्भवति तदाविष्करोति । यदिहैनदपि रहसीव
कुर्वन्मन्यतेऽयं हैवदाविरेव करोति । तस्माद्वाचं पापं न
कुर्वति ॥५॥२॥१३॥

पञ्चमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एष उ ह वाच देवानां नेदिष्ठमुपचर्यो यदग्निः ॥१॥ तं
साधूपचरेत् । य एनमस्मिलोके साधूपचरति तमेधोऽमुष्मिलोके

१ पत्सेन, पत्सेन । २ वज्र- । ३-२ । ४ अहे । ५ उदिम्ये ।
६ अग्निह । ७-त । ८ अथ- । ९ 'एष उ ह वा' दूसरे अनुवाक का
अन्तर्गत् अन्तिक है ॥

१ चरति ।

साधूपचरति । अथ य एनयस्मिंलोके नाऽऽद्रियते तमेवोऽमुष्मिं-
लोके नाऽऽद्रियते । तस्माद्वा अग्निं साधूपचरेत् ॥२॥ तं नैव
हस्ताभ्यां स्पृशेत् पादाभ्यां न दधेनै ॥३॥ हस्ताभ्यां स्पृशति
यदस्याऽन्तिकमवनेनित्ते । अथ यदीभिसारयति तत्पादा-
भ्याम् ॥४॥ स एनमास्पृष्ट ईश्वरो दुर्भायां घातोः ॥ तस्माद्वा
अग्निं साधूपचरति । सुभायां हवैर्न दधाति ॥५॥ ॥२॥ ॥४॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः अष्टकः ।

एष उ ह वाव देवानाम्यज्ञश्चतस्रो यदाग्नेः ॥१॥ तत्र
अत्यमददानोऽग्नीयात् । यो वै महाशनेऽनमत्यश्नातीश्वरो हैम-
भिषक्तोः । पूतेमिव हाऽग्नीयात् ॥२॥ अथो ह शोक्तेऽग्ने ब्रूयात्
समिन्त्वाग्निमिति । स यथा शोक्तेऽग्ने श्रेयोसम्परिवेष्टवै
ब्रूयात्तादृक् तत् ॥३॥ एतद् उ वाव साम यद्राक् । यो वै चक्षु-
स्साम श्रोत्रं सामेत्युपास्ते न ह तेन करोति ॥४॥ अथ य
आदित्यस्साम चन्द्रमास्सामेत्युपास्ते न ह वै तेन करोति ॥५॥
अथ यो वाक् सामेत्युपास्ते स एवाऽनुष्ठथा साम वेदं । वाचा हि

२ तद्वदेनम, तद्यदेनम ।

१ अ- २ देवास्तीजो । ३ अग्निम् (अ) अग्निः ।

४-५ । ५ इषमिव । ६ अग्नि- ७ तम् । ८ वा । ९ यद् ।

साम्नाऽऽर्त्विज्यं क्रियते ॥६॥ स यो वाचस्वरो जायते सोऽ
 मिर्वाग्वेव वाक् । तदत्रैकधा साम भवति ॥७॥ स य एवमेतदे-
 कधा साम भवद्देवैर्ब्रह्मैतदेकधा साम भवतीत्येकधेव श्रेष्ठस्त्वा-
 नान्भवति ॥८॥ तस्माद्ब्रह्मैवविदमेव साम्नाऽऽर्त्विज्यं कारयेत् ।
 स ह वाच साम वेद य एवं वेद ॥९॥१०॥११॥

पञ्चमोऽनुवाकस्तस्मात्तः ॥

[तृतीयोऽध्यायः ।]

एका ह वाक् कृत्वा देवताऽर्धदेवता एवाऽन्याः । अयमेव
 योऽयम्यवते ॥१॥ एष एव सर्वेषां देवानां ब्रह्मः ॥२॥ स द्विषो-
 ऽस्य नाम । अस्तमिति हेह पश्चाद्ब्रह्मनाचक्षते ॥३॥ स यदादिसो-
 ऽस्तमगादिति ब्रह्मनागादिति हेतव । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवा-
 ऽप्येति ॥४॥ अस्य चन्द्रमा एति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्ये-
 ति ॥५॥ अस्य नक्षत्राणि यन्ति । तेन तान्यसर्वाणि ।
 तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥६॥ अन्वभिर्गच्छति । तेन सोऽसर्वः । स
 एतमेवाऽप्येति ॥७॥ एतदहः । एति रात्रिः । तेन ते असर्वे । ते
 एतमेवाऽपीतः ॥८॥ मुञ्चन्ति दिव्यो न वै ता रात्रिम्यज्ञायन्ते ।
 तेन ता असर्वाः । ता एतमेवाऽपियन्ति ॥९॥ वर्षति च पर्जन्य
 उच गृह्णाति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्येति ॥१०॥ वीयन्त
 आप एवमोषधय एवं मजस्यतयः । तेन तान्यसर्वाणि ।
 तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥११॥ तद्यदेतस्सर्व बाहुमेवाऽप्येति तस्माद्ब्र-

१ वैषा २-२ ३-ताः ४-सर्वा ५-स ताम वेद' यन्ति' हे ।

६-वै, शोषा-

शुरेव साम ॥१२॥ स ह वै सामवित्स [कुत्स] साम वेद य एवं
 वेद ॥१३॥ अथाऽध्यात्मम् । न वै स्वप्न वाचा वदेति । सेयमेव
 प्राणमप्येति ॥१४॥ न मनसा ध्यायति । तदिदमेव प्राणमप्ये-
 ति ॥१५॥ न चक्षुषा पश्यति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१६॥
 न श्रोत्रेण शृणोति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१७॥ तद्यदेतत्सर्व-
 म्प्राणमिवाऽभिसृजेति तस्मात्प्राण एव साम ॥१८॥ स ह वै
 सामवित्स कुत्स साम वेद य एवं वेद ॥१९॥ तद्यदिदमाहुर्न
 वताऽद्य व्रतीति[स] हैतत्पुरुषेऽन्तर्निर्मते स पूर्णस्त्वेदमान
 भवति ॥२०॥ तद् शौनके^{११} च कापेयमभिप्रतारिणं च[काशसेनिम्]
 ब्रह्मणः^{१२} परिवेविष्यमाणा उपवव्राज ॥२१॥११॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः उपनिषद् ।

तौ ह विभिन्ने । तौ ह नाऽऽदद्राते को वा कोवेति मन्यमानौ
 ॥१॥ तौ होपजगौ ।

सहस्रमन्यहुरो देव एकः कस्य जगार मुवन्त्य गोपाः ।

तौ कापेय न विजानन्त्यकेऽभिप्रतारिन् बहुधा निविष्टम् ।

७-आम । ८-यति । ९-मिमे । १०-या । ११-काश । १२-विष्वा ।

१३-प्राजा न

१-विन् । २-प्राते । ३-स्ते । ४-काशपेय । ५-निविष्टम् ।

इति ॥२॥ स होवाचाऽभिमतारिभं चोव मपद्यः मतिम्वहीति ।

त्वया वा अयम्प्रत्युच्य इति ॥३॥ तं ह मत्तुवाच—

आत्मा देवानामुत मर्त्यानां हिरण्यदन्तो रपसो न सुतुः ।

महान्तमस्य महिमानमाहुरनक्षरानो यदवन्तमिति ॥

इति ॥४॥ महात्मनश्चतुरो [देव] एक इति । वाग्वा अभिः ।

स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तद्वाचम्पाणो गिरति ॥५॥

मन्त्रश्चन्द्रमास्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तन्मनः पाणो

गिरति ॥६॥ चक्षुरादित्यस्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति

तच्चक्षुः पाणो गिरति ॥७॥ ओषधं दिशस्तां महात्मानो देवाः ।

स यत्र स्वपिति तच्छ्रोत्रं पाणो गिरति ॥८॥ तद्यन्महात्मनश्चतुरो

देव एक इत्येतद् वत् ॥९॥ कस्स जगारेति । मजापतिर्वै क्रः । स

हैतज्जगार ॥१०॥ भुवनस्य गोपा इति । स उवाच भुवनस्य गोपाः

॥११॥ तं कापेय न विजानन्त्येक इति । न ह्येतमेके विजानन्ति ॥१२॥

अभिमतारिन् बहुधा निविष्टमिति । बहुधा ह्येवैष निविष्टो यत्पायः

॥१३॥ आत्मा देवानामुत मर्त्यानामिति । आत्मा ह्येष देवाना-

६-म(स)म, मा । ७-वय्या, यय्या । ८-अया । ९-वाय । १०-युच्ये ।

११-उति । १२-याच । १३-मत्य- १४-परसो । १५-तु । १६-मभि-

१७-यदि । १८-दत्तम, दैतम । १९-अति । २०-पाय, वा । २१-यान

२२-स्वतिपिति । २३-न, इति के पश्चात् प्रा । २४-अर् । २५-महात्मा

अधिक है । २६-क । २७-सो । २८-जगैर- २९-यय । ३०-अ ।

सुखं सर्वानाम् ॥१४॥ शिरण्यदन्तो रपसो न स्तुरिति । न केच
स्तुः । स्तुरूपो शेष स्तुः ॥१५॥ महान्तमस्य महिमानमा-
हुरिति । महान्तं श्रेयस्य महिमानमाहुः ॥१६॥ अनघमानो
यददन्तमपीति । अनघमानो श्रेयोऽदन्तमपि ॥१७॥३२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः अयम् ॥

तस्यैव श्रीरात्मा समुद्भूतो यदसावादितः । तस्माद्वायवस्य स्तोत्रे
कऽवान्यामेष्विष्ट्या अवशिष्टा इति ॥१॥ स एव एवोक्तम् ।
यत्पुरस्तादयानिति तदेतदुक्तस्य शिरो यदक्षिणतस्तस दाक्षिणः पक्षो
यदुत्तरतस्त उत्तरः पक्षो यत्पश्चाद[त्त]पुच्छम् ॥२॥ अथमेव
माद्य उक्तस्याऽऽत्मा । स य एवमेतमुक्तस्याऽऽत्मानमात्मन्यतिष्ठितं
वेद स हाऽमुष्मिँ लोके साङ्गस्ततनुस्[सर्वम्] सम्भवति ॥३॥
अथ वा अमुष्मिँलोके यदिदम्पुरुषस्याऽऽरादौ शिञ्जं कर्णौ नासिके
यत्किं चाऽनस्यिकं न सम्भवति ॥४॥ अथ य एवमेतमुक्तस्या-
ऽऽत्मानमात्मन्यतिष्ठितं वेद स हाऽमुष्मिँलोके साङ्गस्ततनुस्सर्व-
सम्भवति ॥५॥ तदेतद्वैश्वामित्रमुक्तम् । तदक्षं वै विश्वमाणो विश्वम्

३१-से । ३२ तस् । ३३ स् । ३४ आहुः । और इति महात्स
लोक्तस्य महिमाहुः अधिक है । ३५ अन्तस्य । ३६ स्तुः ॥

१ समग्र- । २ यत्तु- । ३ का इति । ४-स्य । ५ सङ्गः । ६ तनु-
७-सर्वम् । ८-तनु- । ९-सर्वम् ।

॥४॥ तद विन्नामित्रप्रमैला तपसा व्रतचर्येणोन्मस्य भिषं कर्मो-
 वनमाय ॥७॥ तस्या उ हैतत्प्रोवाच यदिदम्मुष्णानामवय ॥८॥
 तद स उपनिषसाद ज्योतिरेतदुक्तमिति ॥९॥ ज्योतिरिति द्वे
 अक्षरे मास इति द्वे अक्षमिति द्वे । तदेतदक्ष एव प्रतिष्ठितम् ॥१०॥
 अथ हैनं जमदग्निरुपनिषसादाऽऽधुरेतदुक्तमिति ॥११॥ आधुरिति
 द्वे अक्षरे मास इति द्वे अक्षमिति द्वे । तदेतदक्ष एव प्रतिष्ठितम् ॥१२॥
 अथ हैनं वसिष्ठ उपनिषसाद गौरेतदुक्तमिति । तदेतदक्षमेव ।
 अथ हि गौः ॥१३॥ तदाहुर्यदस्य मासस्य पुरुषश्चरीरमथ केन-
 ऽमेव मासाश्चरीरवन्तो भवन्तीति ॥१४॥ स ब्रूयाद्यद्वाचा वदति
 तद्वाचश्चरीरं यन्मनसा ध्यायति तन्मनसाश्चरीरं यच्चक्षुषा पश्यति
 तच्चक्षुषश्चरीरं यच्छ्रोत्रेण शृणोति तच्छ्रोत्रस्य चरीरम् । एवमु-
 ऽऽमेव मासाश्चरीरवन्तो भवन्तीति ॥१५॥ १॥१॥

अथनेऽनुक्तमने हृतीयः अयम् ।

तदेतदुक्तं, सप्तविधम् । अस्म्यते स्तोत्रियोऽनुरूपो अयथा
 यथासम्भक्तं निविधिरिधानीया ॥ १ ॥ इयमेव स्तोत्रियो

१० अ- १३ तद । १४ उत्तर- १३ (-साव) गौः, आधुरीर ।
 १४-६ । १५ उत्तर । १६ अमेव ।

१ अतिर । २ अतिर । ३ अतिर ।

प्रधिरनुरूपो वायुर्धातव्याऽन्तरिक्षमगाथो यौस्तुक्तमादित्यो निविदः ।
 तस्माद्ब्रह्म वा उदिते निविदमधीयन्ते । आदित्यो हि निविदः ।
 दिशः परिधानीयेत्यधिदेवतम् ॥२॥ अथाध्यात्मम् । आत्मैव
 सोमियः प्रजाञ्जुरूपः प्राणो धातव्या मनः प्रगाथश्चिरस्सुन्द
 रस्तु निविच्छोमभ्यपरिधानीयः ॥३॥ तद्वैतदेके त्रिष्टुभा परिदधत्य-
 शुभ्रमेके । त्रिष्टुभात्वेव परिदध्यात् ॥४॥ तद्वैतदेक एता व्यावृत्ती-
 रभिव्यावृत्य संसन्ति महान्महा समधत्त देवो देव्या समधत्त
 ब्रह्म आकाशया समधत्त । तद्यत्समधत्त समधत्तेति ॥५॥ तस्मा-
 दिदानीमपुरुषस्य क्षीराणि प्रतिसंहितानि । पुरुषो ह्येतदुपधत्त
 ॥६॥ महान्महा समधत्तेति । अधिदेव महानियमेव मही ॥७॥
 देवो देव्या समधत्तेति । वासुदेवो देवोऽन्तरिक्षं देवी । भव्या ब्रह्मा
 आकाशया समधत्तेति । आदित्यो वै ब्रह्म धौआकाशणी ॥८॥ तासां
 वा एतासां देवतानां द्वयोर्देवोर्देवतयोर्नव-नवाऽक्षराणि सम्पद्यन्ते ।
 एतादिमे लोकास्त्रिणवा भवन्ति ॥९॥ तद्ब्रह्म वै श्रित्व ।
 तद्ब्रह्मभिव्यावृत्य संसन्ति । एष उ एव सोमस्सोऽनुचरः ॥१०॥

४ आस्या, आर्या । ५ प्राण- । ६ आर्या । ७ धातवी- ।
 ८ तदुपधत्त अधिक हे (हाशिमे मे) । ९-य । १०-महा । ११ इदानी ।
 १२-वा । १३-सो । १४-यो । १५-यो । १६-को । १७-वा । १८-ता ।

यदिममहुरेकसोम इत्ययमेव योऽयम्यवते । एषोऽभिदेवतम् ।
 मानोऽध्यात्मम् । तस्य शरीरमनुचरः ॥१२॥ तद्यस ह वै भवौ
 मयिभूतं सम्प्राप्तं स्याद्-॥१३॥४॥

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

—एवं हेतस्मिन्सर्वमिदं सम्प्राप्तं गन्धर्वाप्सरसः पक्षवो
 मनुष्याः ॥१॥ तद् मुञ्जस्सामश्रवसः मययौ । तस्मै ह श्वाजनिर्वै-
 श्वः प्रेयाय ॥२॥ तस्य हाऽन्तरिक्षात्पतित्वा नवनीतपिण्ड उरसि
 निपपात । तं हाऽऽदायाऽनुदधौ ॥३॥ ततो ह वै स्तोमं ददर्शाऽन्तरिक्षे
 धिततम्बहुशोभमानम् । तस्यो ह युक्तिं ददर्श ॥४॥ बहिष्पवमान-
 दासद्य दीत्रं विधिं प्रायय इति कुर्यात् दीत्रं गृहित्रं अपान्य इति
 वाचा । दिदक्षेतैवाऽन्तिभ्यं शुश्रूषेतैव कर्णाभ्याम् । स्वयामेदम्म-
 नोयुक्तम् ॥५॥ तद्यत्र वा इषुरत्यग्रो भवति न वै स ततो
 दिनस्ति तद् वा एतं नोपाप्नुयात् । प इत्येवाऽपान्यात् । तद्यथा
 बिम्बेन युगमानयेदेवमेवैनमेतथा देवतयाऽऽनयति । स युक्तः
 करोति । एष एवापि युक्तः ॥६॥१॥५॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्तत्रातः ॥

११-रत्नम् ॥

१ एवम् (एधा) के पक्षे पञ्चम क० का द्वि० वाक्य । २ मीऽज- ३
 साहस- ४ तमस्मै । ५ प्रेयाय । ६ तेतो ७-अ । ८-ह । ९ टीत्वा, पक्ष्वा
 अक्षर ल मी हो । १० गृहित्वा । ११ अस्ति । दिनस्ति । १२ यद् । १३ क्के । १४-ति ॥

मोऽसौ साम्नः प्रक्षि वेद प्र हास्मै दीयते ॥१॥ ददा इति ह वा
अयमग्नेर्दीप्यते तथेति वायुः पवते हन्तेति चन्द्रमा ओमित्या-
दित्यः ॥२॥ एषा ह वै साम्नः प्रक्षिः । एतां ह वै साम्नः प्रक्षि
मुदक्षिणः क्षैमिर्विदां चकार ॥३॥ तां हैतां होतुर्वाऽज्ये गावेन्मै-
त्रावरुणस्य वा तां ददा^१ तथा^२ हन्ता^३ हिम्भा ओवा इति ।
प्र ह वा अस्मै दीयते ॥४॥ [सो] ऽप्यन्यान् बहुनुपर्युपरि^४ य
एवमेतां साम्नः प्रक्षि वेद ॥५॥ य उ ह ॥ अबन्धुर्वन्धुमत्साम
वेद यत्र हाऽप्येनं न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीवचक्षते तदाऽपि
अष्टयमाधिपत्यमन्वायम्पुरोधाम्पर्येति ॥६॥ आग्नेर् वा
अबन्धुर्वन्धुमत्साम । कस्माद्वा ह्येनं दावोः कस्माद्वा पर्यहित्य
मन्थन्ति स अष्टयायाऽऽधिपत्यायाऽन्वायाय पुरोवाये जायते
॥७॥ स यत्र ह वा अप्येवेदि न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीव-
चक्षते तदाऽपि अष्टयमाधिपत्यमन्वायम्पुरोधाम्पर्येति ॥८॥ ॥९॥
द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स्वयमु तत्र यज्ञेन विदुः ॥१॥ मुदक्षिणो ह वै क्षैमिः प्रचक्षिणा-
लिर्जाबालौ ते ह सन्नस्यचारिण आसुः ॥२॥ ते हैमे बहु जप्यस्व

१ प्रति । २ तदान्, ददान् । ३ प्रक्षि, प्रवृत्तिः । ४ तौ ।
५ 'हन्ता' अधिक है । ७ नास्ति । ८ अप्य । ९-हन्त्य । १०-उप ।
११-धु । १२-वा । १३ ओह- । १४-आये । १५ परि ॥
१६-साःखि । २ है ।

चाऽन्यस्य चाऽनुचिरे^१ प्राचीनशालिश्च^२ जाबालौ च ॥३॥ अथ ह
 स्म सुदक्षिणः^३ क्षैमिर्यदेव यज्ञस्याज्जो यत्सुविदितं तद्वै स्म
 पृच्छति ॥४॥ त उ ह वा अपोदिता व्याक्रोशमाना^४ ये^५ ह्यथो
 दुरनुचाम इति ह स्म सुदक्षिणं क्षैमिमाक्रोशन्ति प्राचीनशालिश्च
 जाबालौ च ॥५॥ स ह स्माऽह सुदक्षिणः क्षैमिर्यं^६ भूविष्ठा
 कुरुषश्वालास्मागता भवितारस्तत्र एव संवादो नाऽनुपदधे राक्ष
 इव संवदिष्यामह^७ इति ॥६॥ ता उ ह वै जाबालौ दिदीक्षते^८ उक्तं
 गोश्रुक्ष^९ । तयोर्ह प्राचीनशालिर्द्वे^{१०} उद्गाता ॥७॥ स तद्व सुदक्षिणो
 स्तुक्तुधे जाबालौ हाऽदीक्षितातामिति^{११} । स ह संग्रहीतारमुवाच-
 ऽन्यस्वा^{१२} जे जाबालौ हाऽदीक्षितातां तद्वमिष्याव इति ॥८॥ ॥७॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तस्य ह ज्ञातिका अश्रुमुखा इवाऽऽसुरन्यतरां वा
 अविमुखादिति ॥९॥ अथ ह स्म वै यः पुराजज्ञवाचं वदत्यन्य-
 तरामुपागादिति ह स्मेनम्भन्यन्ते । अथो ह स्मैनम्भनिरिवोभयस्ते
 ॥१०॥ तं ह संग्रहीतोवाचाऽथ यद्गवस्ते ताभ्यां न कुम्भं

१-है । २-अस्त्य । ३-अस्त्यार । ४-या । ५-पृ- । ६-आ । ७-चोरुग ।
 ८-जा । ९-अथोक्षि । १०-अथो । ११-अथोक्षि । १२-अथोक्षि ।
 १३-अथोक्षि । १४-अथोक्षि । १५-अथोक्षि । १६-अथोक्षि ।

कथेत्यभात्येति ॥३॥ ओमिति होवाच गन्तव्यम् आचार्यस्तुय-
 यानमन्यतेति ॥४॥ ■ इ रयमास्थाय प्रधावयाचकार । तं ह स्म
 प्रतीक्षन्ते ॥५॥ कं जानीतेति । मुदक्षिण इति । न वै तूर्न स
 हृदयभ्यवेवादिति । स एवेति ॥६॥ स ह सोपानादेवाऽन्तर्वेद्यव-
 स्थायोवाचाऽङ्गन्वित्थं गृहपता^२ इति । तं ह नाऽनुदतिष्ठा-
 सत् । स होवाचाऽनृत्याता^३ म एवे । कुष्णाजिनोऽसी[ति] ।
 तदिमे कुरुष्वाला अविदुरनृत्यातैव त इति होचुः ॥७॥ तं ह
 क्लीबान्प्रातोवाचाऽनुशिष्ट^४ । भगव उद्गातारमिति । तं हा
 ऽनृत्यत्वा^५ ॥८॥ स होवाच त्रिवे^६ गृहपते पुरुषो जायते ।
 पितुरेवाग्ने^७षि जायतेऽय मातुरथ यज्ञात् ॥९॥ त्रिवे^८व त्रियत्^९
 इति । स यद् वा एममेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति-॥१०॥१॥८॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

—तत्प्रथमम्विद्यते ॥१॥ अन्धमिव वै तमो योनिः । सोहि-
 तस्तोको वा वै स तदाभवत्यथा वा स्तोत्रः । किं हि स तदा-
 भवति ॥२॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या

२-त- ३-अर्च- ४-सूय- ५-हृ- ६-ऊ- ७-अ- ८-अ- ९-अ-
 १०-वा । ११-वा । १२-अ- १३-अ- १४-अ- १५-अ- १६-अ- १७-अ- १८-अ- १९-अ-
 २०-अ- २१-अ- २२-अ- २३-अ- २४-अ- २५-अ- २६-अ- २७-अ- २८-अ- २९-अ- ३०-अ-
 ३१-अ- ३२-अ- ३३-अ- ३४-अ- ३५-अ- ३६-अ- ३७-अ- ३८-अ- ३९-अ- ४०-अ-
 ४१-अ- ४२-अ- ४३-अ- ४४-अ- ४५-अ- ४६-अ- ४७-अ- ४८-अ- ४९-अ- ५०-अ-
 ५१-अ- ५२-अ- ५३-अ- ५४-अ- ५५-अ- ५६-अ- ५७-अ- ५८-अ- ५९-अ- ६०-अ-
 ६१-अ- ६२-अ- ६३-अ- ६४-अ- ६५-अ- ६६-अ- ६७-अ- ६८-अ- ६९-अ- ७०-अ-
 ७१-अ- ७२-अ- ७३-अ- ७४-अ- ७५-अ- ७६-अ- ७७-अ- ७८-अ- ७९-अ- ८०-अ-
 ८१-अ- ८२-अ- ८३-अ- ८४-अ- ८५-अ- ८६-अ- ८७-अ- ८८-अ- ८९-अ- ९०-अ-
 ९१-अ- ९२-अ- ९३-अ- ९४-अ- ९५-अ- ९६-अ- ९७-अ- ९८-अ- ९९-अ- १००-अ-

चैनं तम्भृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥३॥ अथ
 य एनमेतदीक्षयन्ति ताद्वितीयम्विधायते । वपन्ति केचमश्रुषि ।
 निकुन्तन्ति नखान् । मत्पञ्चन्त्यङ्गानि । मत्पचत्यङ्गुलीः ।
 अपहतोऽपवेष्टित आस्ते । न जुहोति । न यजते । न योषितं
 चरति । अमानुषीं वाचं वदति । मृतस्य वावैष^{१०} तदा रूपम्भवति
 ॥४॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं
 तम्भृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥५॥ अथ च
 एनमेतदस्माह्लोकात्पेतचित्यामादधाति तद् तृतीयम्विधायते ॥६॥ स
 यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं तम्भृत्यु-
 मतिवहति^{११} स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥७॥ एतावदेवोक्त्या
 रयमास्थाय प्रधावयांचकार ॥८॥ तं ह जाबालमत्येतं कनीयान्
 भ्रातोवाच^{१२} काम्भवाञ्छूद्रको वाचमवादीति । हस्तिना गाधयैषी-
 रिति ॥९॥ प्र हैवेनं तच्छूद्रस्यः कथमवोषद्भव इति । यश्चमासा-
 मृत्युनां साम्नाऽतिवाहं वेद स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥१०॥ ॥३॥ ॥६॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः अर्वाः ।

४ ये । ५ दि-१६-अजत्य । ७ यज-१ ८ अथ-१ ९ योष-११-स ।
 ११ का अधिक है । १२ यन्तु । १३-तीति । १४ वा । १५ वदतीति
 अधिक है । १६-वच ।

ते वाच भगवस्ते पितोद्गातारममन्यतेति होवाच । तदु ह
 माचीनशाला विदुर्य एषामयं वृत् । उद्गाताऽऽस^१ । तस्मिन् ह ना-
 ऽनुविदुः ॥१॥ ते होतुरनुधावत् काण्डवियमिति । तं हाऽनु-
 सक्तुः^२ । ते ह काण्डवियमुद्गातारं चक्रिरे ब्रह्माण्म्राचीन-
 शसिम् ॥२॥ तं हाऽभ्यवेक्ष्योवाचैवमेव ब्राह्मणो मोक्षाय
 वादाय नाऽस्त्वस्मिन् । स नाऽणु सास्त्रोऽन्विच्छतीति । अति ह वै न
 कृच्छ्रे ॥३॥ स यद् वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्च-
 त्यादित्यो हर्न तथोन्वां रेतो भूतं^३ सिञ्चति । स हाऽस्य तत्र
 मृत्योरीक्षे^४ ॥४॥ अथो यदेवैनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति^५
 तद् वाच स ततोऽनुसम्भवति प्राणो च । यदा ह्येव रेतस्सिक्तं
 आस्य आविस्तप्य तत्सम्भवति^६ ॥५॥ अथो यदेवैनमेतत्पिता योन्यां
 रेतो भूतं सिञ्चति । स ह वाऽस्य तत्र
 मृत्योरीक्षे^७ ॥६॥ अथो यामेवैतां वैसर्जनीयामाहुतिमध्वर्युर्जुहोति
 तमिव स ततोऽनुसम्भवति कुन्दांसे चैव ॥७॥ अथ य एनमे-

१-य । २ विदुर् । ३ सः । ४ कान्त्यावयम् । ५-सः ।

६ ब्राह्मणम् । ७-वेक्ष्य । ८ न्वीक्ष- । ९ रणम् । १० नास्ति । ११ रत- ।
 १२-को । १३ अथोवाच । अधिक है । १४ अथो य एनमेतद्दी-
 क्षयम् तत्रमृत्योरीक्षे' अधिक है । १५ अथो यदेवैनमे-
 तद्दीक्षयन्ति' अधिक है । १६ आसि ।

तदस्माद्धोकात्पेतं चित्यामादधति चन्द्रमा हैवेनं तस्मै न्याः स्तो-
भृतं सिञ्चति । स उ हैवाऽस्य तज मृत्वोरीषे ॥८॥ धयो यदेवैन-
मेतदस्माद्धोकात् पेतं चित्यामादधत्यथो या एवैता अवोक्षणी-
या आपस्ता एव स ततोऽनुसम्भवति प्राणम्बेव । प्राणो ह्यपः ॥९॥
तं ह वा एवंविदुद्गाता यजमानमोमित्येतेनाक्षरेणाऽऽदित्यभ्यस्त्यु-
भतिवहति वायित्यग्निं हुमिति वायुम्भा इति चन्द्रमसम् ॥१०॥
तान् वा एतान्मृत्यून साधोद्गाताऽऽत्मानं च यजमानं चाऽति-
वहत्योमित्येतेनाक्षरेण प्राणेनाऽमुनाऽऽदित्येन ॥११॥

तस्यैष श्लोकः—

उतैषा ज्येष्ठ उत वा किञ्च उतैषाम्भुव उत वा पितैषाम् ।

एको ह देवो मनसि प्रविष्टः पूर्वो ह जज्ञे स उ गर्भेऽन्तः—

इति ॥१२॥ तद्यदेशोऽभ्युक्त इममेव पुरुषं योऽयमाह्वस्यो
ऽन्तरोमित्येतेनैवाक्षरेण प्राणेनैवाऽमुनैवाऽऽदित्येन[...] ॥१३॥१॥१०

द्वितीयेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्तमासः ॥

अिहै वै पुरुषो अियते अिर्जायते ॥१॥ स हैतदेव प्रथममिजयते
यदितस्सिक्तं सम्भूतम्भवति । स प्राणमेवाऽभिसम्भवति । प्राणाय-

१०-आयः । ११-वन्तीति । १२-सा । १३-ज्येष्ठ । १४-सम्भूतः ।

१५-आयः ।

१६-१२ 'स हैतदेव प्रथममिजयते अिर्जायते' अधिक है । १७-सम्भूतः ।

भिजायते ॥२॥ अथैतद्वितीयमभिजायते यदीक्षते । स छन्दोऽस्यैवा-
 ऽभिसम्भवति । दक्षिणामभिजायते ॥३॥ अथैतत् तृतीयमभिजायते
 यमभिजायते । स श्रद्धामेवाऽभिसम्भवति । लोकमभिजायते ॥४॥
 तदेतत् व्याहृतायत्र गायति । तस्य प्रथमयाऽऽहतेयमेव लोकं जयति
 यद्वाऽऽस्मिन्लोके । तदेतेन चैनम्प्राणेन समर्पयति यमभिसम्भवसेतां
 चाऽस्मा आशाम् प्रयच्छति यामभिजायते ॥५॥ अथ द्वितीययाऽऽहते-
 दमेवाऽन्तरिक्षं जयति यद्वा चान्तरिक्षे । तदेतैश्चैनं छन्दोभिस्स-
 र्पयति यान्यभिसम्भवति । एतां चास्मै दक्षिणाम्प्रयच्छति याम-
 भिजायते ॥६॥ अथ तृतीययाऽऽहताऽमुमेव लोकम् जयति यद्वा
 चाऽमुष्मिन्लोके । तदेतया चैनं श्रद्धया समर्पयति ययैवैनमेतच्छ्रद्ध-
 याऽऽमात्रम्यादधाति समयमितो भविष्यतीति । एतं चास्मै लो-
 कम्प्रयच्छति यमभिजायते ॥७॥ ३११॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतद्वै तिस्रभिराहृद्भिरिमाँश्च लोकाजयतेतैश्चैनम्भूतैस्समर्पय-
 ति यान्यभिसम्भवति ॥१॥ अथ वा अतो हिङ्गारस्यैव । ते ह स्वर्गे
 लोके सन्तम्भस्त्युरन्वेसशनवा ॥२॥ श्रीर्वा एवा मजापतिस्साश्वो

४ अथैव । ५-मृ- । ६ अयि- । ७-अस्ति । ८ इम- (१) । ९-मृ- ।
 १० 'न्यभिसम्भवति' अत्रिक है जाय रंग से कटा हुआ । ११ अ ।
 १२ अत्राह । १३-आ ।
 १ लोक- । २-मृ- । ३ नस्ति । ४ सितम् । ५ अतेति । ६ श्री ।

यादिद्वारः । तमिदुहाता श्रिया प्रजापतिना हिङ्गारेण सृत्पुमपसेध-
 र्त्वि ॥३॥ हुम्मेखाह माऽत्र नु गा यत्रैतद्यजमान इति हैतत् ॥४॥
 स यथा श्रेयसा सिद्धः पाप्मिना प्रतिविजते एवं हैवाऽस्मान्पुत्सुः
 पाप्मा प्रतिविजते ॥५॥ यन्नेत्याह चन्द्रमा वै मा मासः । एष
 ह वै मा मासः । तस्मान्मेखाह । भा इति हैतत्परोक्षेणैव । यस्मादेव
 मेखाह यदेव मेखाहैतानि त्रीणि । तस्मान्मेति ह्यात् ॥६॥ ११२॥

सुतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

हुम्भा इति ब्रह्मवर्चसकामस्य । भातीति हि ब्रह्मवर्चसम् ॥१॥
 हुम्बो इति पशुकामस्य । वो इति ह पशवो वाच्यन्ते ॥२॥ हुम्
 चगिति श्रीकामस्य । चगिति ह श्रियम्यगायन्ति ॥३॥ हुम्
 भा भोवा इत्येतदेवोपगीतम् ॥४॥ महदिवाऽभिपरिवर्तयन् भाये-
 दिति ह स्माऽऽह नाको महाब्रामो महानिवेशो भवतीति । स यथा
 स्थाण्ड्यमर्पयित्वेतरेण वेतरेण वा परियायात् तादृक्तत् ॥५॥ तदु
 होवाच श्राव्यायनिः कस्मै कामाय स्थाण्ड्यमर्पयेत् । अथोपगीतमे-
 वैतत् । नैवैतदाद्रियेतेति ॥६॥ [इति] नु हिङ्गाराणाम् । अथ वा

७ पदम् । ८ इति अधिक है । ९-विच- । १० प पदम् ।
 ११ भाग । १२ वेदा ।

१ वो । २ शिङ्क-,-सु । ३-वा, अयित्वा । ४-वेत् । ५ पदम् ।
 ६ अर्त्तम् । ७ अर्त्तम् । ८ हिङ्गारम् ।

मन्त्रो नियन्मयेद । शोभा इति द्वे अक्षरे । अन्तो वै साजो नियन्-
 मन्त्रस्त्वर्गो लोकान्ममन्त्रो मन्त्रस्य निष्पत् ॥७॥ अमेतकुहात्
 यजमानोमिसेतोनाक्षरेणान्तो स्वर्गे लोके दधाति ॥८॥ इ
 इ वा अक्षरे द्वायं यजमान वै स तस्य पश्यते । अथ यद्वै पत्नी
 कृत्वा अक्षरेणारायां पाशुरपारायामासो न वै स तस्यप्रपश्यते ।
 पञ्चम्यां हि लिखते अन्तो ॥९॥ अमेतकुहात् यजमान-
 नयोमिसेतोनाक्षरेण सारपत्तं कृत्वाऽन्ते स्वर्गे लोके दधाति । स
 यजमानोऽक्षरेणारायां पाशुरपारायामासोऽन्तोऽक्षरेण
 ॥१०॥ ते इ वा अक्षरे देवलोकेऽथैव मनुष्यलोकेऽथ । आदि-
 कृत्वा इ वा एते अक्षरे अन्तमाथ ॥११॥ आदिषु एव देवलोके-
 ऽथैव मनुष्यलोके । ओमित्तादिर्गो सान्ति च अन्तमाः ॥१२॥
 अमेतकुहात् यजमानोमिसेतोनाक्षरेणाऽऽदित्यं देवलोकं गम्य-
 ति । १३॥१३॥१३॥

पुत्रीचेऽनुकाले पुत्रीयः कथयः ।

ईहऽऽन्तमाऽक्षरे कस्तमप्तीति । स सो इ नञा च सो-
 नेक वा मन्त्रे तं हाऽऽन्तं यस्तोऽयम्यस्यात्माऽमुदेव वे स इति ॥१॥

तस्मिन् हाऽऽत्मन मतिम् । तद्यतवस्तम्पदार्बणदुःखीतयप्रकर्षन्ति ।
 तस्य हाऽहोरात्रे लोकेत्याप्नुतः ॥२॥ तस्मा च हेवेन मकुची को
 ऽहमस्मि सुवस्तव । स त्वां स्वर्ग्ये स्वरगायामिति ॥३॥ को ह वै
 प्रजापतिरस्य हेवंविदेव सुवर्गः । स हि सुवर्मञ्छति ॥४॥ तं स-
 ऽऽह अस्तमसि सोऽहमस्मि योऽहमस्मि स त्वमस्येहीति ॥५॥
 स एतमेव मुकुवरसम्पविशति । यदु ह वा अस्मिंज्जोके मनुष्या
 यजन्ते यत्साधु कुर्वन्ति तदेष्टामूर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदन्ति । तदमुं
 चन्द्रमसम्बनुष्यलोकम्पविशति ॥६॥ तस्येदम्मानुषचिकान्न-
 यण्डमुदरेऽन्तस्सम्भवति । तस्योर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदन्ति स्तनावभि ।
 स यदाजायतेऽथाऽस्मै माता स्तनमन्नाद्यम्प्रयच्छति ॥७॥ प्रजातो
 ह वै तावत्पुरुषो यावन्न यजते स यदेनैव जायते । स यथाऽऽह
 मयमनिभिरणमेवमेव ॥८॥ तदा तं ह वा एवंविदुद्राता यज-
 मानमोमित्येतेनाऽक्षरेणाऽऽदित्यं देवलोकं गमयति । वाणि-
 त्यस्मा उत्तरेणाऽक्षरेण चन्द्रमसमन्नाद्यमदितिम्प्रयच्छति ॥९॥
 अथ यस्यैतद्विद्वानुद्रायति न हेवेन देवलोकं गमयति नो

२-स । ३-तम । ४-जम् । ५-गम् । ६-सुस्वर । ७-य ।
 ८-जायते । ९-स । १०-य । ११-यिम् । १२-के पश्चात् । १३-यवरे ।
 १४-यव । १५-नाम् । १६-जायते । १७-स । १८-प्रयच्छति । १९-य ।

एतमन्नाद्येन समर्धयति ॥१०॥ स यथाऽग्रहं विदिग्धं जयीता-
 ऽन्नाद्यमलभमानमेवमेव विदिग्धश्चेत्तेऽन्नाद्यमलभमानः ॥११॥
 तस्माद्दुःखं विदिग्धमेवोद्गापयेत् । एवंविदिग्धमेवोद्गातरिति हृतः
 प्रतिशृणुयात् ॥१२॥१॥१४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्तस्मात्तः ।

—००—

वागिति इन्द्रो विश्वामिप्रापोक्यमुवाच । तदेतद्विश्वामिप्रा-
 उपासते वाचमेव ॥१॥ मनुर्हं वसिष्ठाय ब्रह्मत्वमुवाच । तस्मादा-
 हुर्वसिष्ठमेव ब्रह्मेति ॥२॥ तदु वा आदुरेवंविदेव ब्रह्मा । क उ
 एवंविदं वासिष्ठमर्हतीति ॥३॥ प्रजापतिः प्राजिजनिषत् । स
 तपोऽतप्यत् । स देवव इन्त नु प्रतिष्ठां जनयै ततो याः प्रजास्सृज्ये
 ता एतदेव प्रतिष्ठास्यन्ति नाऽप्रतिष्ठाश्चरन्तीः प्रदधिष्वन्त इति ॥४॥
 स इमं लोकमजनयदन्तरिक्षलोकमधुं लोकमिति । तानिभ्रांस्त्री-
 लोकाजनयित्वाऽभ्यश्राम्यत् ॥५॥ तान् समतपत् । तेभ्यस्सं तक्षे-
 भ्यस्त्रीणि शुक्राण्युदायन्नाग्निः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षादादितो
 दिवः ॥६॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्यस्सं तक्षे-

१८-सृष्ट- । १९-आ । २०-आः । २१-सृष्ट- ॥

१ हे । २ उत्प- । ३ जाये, जनये । ४ अह- । ५ ताम् । ६-ह ।
 ७ संतमपत् । ८-स्त । ९-ह ।

स्त्रीरयेव शुक्रायुदायन्नुग्दे एवाग्नेर्यजुर्वेदो वायोस्सामवेद
 आदित्यात् ॥७॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्य-
 स्संतप्तेभ्यस्त्रीरयेव शुक्रायुदायन्भूरिसेववेदाद्बुव इति यजुर्वेदा-
 त्स्वरिति सामवेदात्तदेव ॥८॥ तद्ध वै अय्यै विद्यायै शुक्रम ।
 एतावदिदं सर्वम् । स यो वै अर्यां विद्यां विदुषो लोकस्सोऽस्य
 लोको भवति य एवं वेद ॥९॥११५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अयं वाक् यज्ञो योऽयम्भवते । तस्य वाक् च मनश्च वर्तन्यौ ।
 वाचा च शेष एतन्मनसा च वर्तते ॥१॥ तस्य होताऽध्वर्युरुक्ताते-
 तन्यतरां वाचा वर्तन्ति संस्कुर्वन्ति । तस्मात्ते वात्रा कुर्वन्ति ।
 अथैव मनसाऽन्यतराम् । तस्मात्स तूष्णीमास्ते ॥२॥ स यद्ध सो-
 ऽपि स्तूयमाने वा शंस्यमाने वा वाचद्यमान आसीताऽन्यतरामेवा-
 ऽस्यापि तर्हि वाचा वर्तन्ति संस्कुर्वन्ति ॥३॥ स यथा पुरुष
 एकपाद्यन् श्रेयमेति रथो वैजचक्रो वर्तमान एवमेव तर्हि वाक्
 श्रेयमेति ॥४॥ एतद्ध तद्विद्वान् ब्राह्मण उवाच ब्रह्माण्मातरनु-

वाक उपाकृते वा वक्ष्यानमासीनमर्थं वा इमे तर्हि यद्वस्वाऽन्तर-
 गुरिति । अथ हि ते तर्हि यद्वस्वान्तरीयुः ॥५॥ तस्याद्वा
 अन्तरमुवाक उपाकृते वाच्यम आसीताऽऽपरिधानीयाया आ वपद
 अन्तरादितरेषां स्तुतञ्चस्वाध्यामेवाऽऽसैस्यायै पवमानानाम् ॥६॥
 स यथा पुरुष उभवा पायनं भेषं न भ्येति रथो बोधमानको-
 वर्तमान एवमेतर्हि यज्ञो भेषं न भ्येति ॥७॥ ३।१६॥

चतुर्थेऽनुषाङ्गे द्वितीयः अण्डः ।

स यदि यज्ञं श्रुत्वा भेषाभियाद्वाभयो मन्त्रतेत्याहुः । अथ यदि
 यज्ञं श्रुत्वा मन्त्रतेत्याहुः । अथ यदि सामतो ब्रह्मणे मन्त्रतेत्याहुः ।
 अथ यद्यनुपस्पृताव कुत इदमजनीति ब्रह्मणे मन्त्रतेत्येवाऽऽहुः ॥१॥
 स ब्रह्मा माह उदेत सुविद्याऽऽसीध आत्मे जुहुयाद्भुवस्त्वारिषे-
 तामिन्द्राहोमिः ॥२॥ एता वै व्याहृतयस्सर्वप्रथमश्चित्तयः । तयथा
 सवर्णेन सुवर्णे सदध्यात् सुवर्णेन रजवं रजतेन अपु जपुषा
 लोहायसे लोहायसेन कार्णिशायसे कार्णिशायसेन दारु दारु च चर्म

३-अथ । ४-आस- द्विषाद प्रज्ञा तया हे । ७-३ । ८-अ-

करः । ९-अन्तर्युः । १०-अ । ११-पाद । १२-यद् । १३-मं ।

१४-१२-यो । १५-अ । १६-अ । १७-विद्यया । १८-हु-

७-कर-

न शोभनीयमेवैवं विद्वांसस्तर्ह्य मियज्यति ॥२॥ तदाहुर्पदहीनीन्मे
 ग्रहान्मेऽग्रहीदित्थं येष दक्षिणानयन्तश्चसीन्मे यषः^{१२} यषः^{१३} इति
 शेष उदगासीन्म इत्युद्गाथेऽथ किं यजुषे ब्रह्मणे इत्युद्गासीन्म
 सप्तमसीन्मेतेहैर्वातिमिदं दक्षिणा नयन्तीति ॥३॥ स इत्युद्गाथे
^{१४ १५ १६ १७}
 यजुषे स यजुस्याऽथ शेष यजुस्य यजरीति । यषः इत्युद्गाथे
 पुनः यजुषे दक्षिणा नयन्तीति । यषः इत्युद्गाथे यजुषिभ्यः ॥४॥
 तन्मैव शोभते—

ययीदग्मन्ये भुवनानि सर्वम्, ययि लोकान् ययि निरुपमम् ।

^{१८}
 ययीदग्मन्ये निमिषयदेजति, यय्याय शोभयाम्य सर्वा, इति ॥५॥

ययीदग्मन्ये भुवनानि सर्वमित्येवंविदं इ वावेदं सर्वम्भुवनम्भ्या-
 यजुषः ॥७॥ ययि लोकां ययि दिशश्चतस्र इत्येवंविदि इ सप्तलोक
 एवंविदि दिशश्चतस्रः ॥८॥ ययीदग्मन्ये निमिषयदेजति यय्याय
 शोभयाम्य सर्वा इत्येवंविदि इ वावेदं सर्वम्भुवनम्भ्यातिष्ठितम् ॥९॥
 तस्माद्दु हेर्वविदेयं ब्रह्माद्यं कुर्वीत । स इ वायं ब्रह्मा य एवं
 वेद ॥१०॥११॥१२॥१३॥

ययुर्देवभुवनो ययुर्देवः ययुर्देवः ।

८ इत्येवम् (सिद्ध्यात्) स कोष्ठ वाच रंग में कटा हुआ । ९ ययु ।
 १० ययु । ११ ययु । १२ 'ययु' नास्ति । १३ ययुर्देव । १४-१५ ।
 १६-१७ । १८ नास्ति । १९ वै । २० य । २१ यतिही । २२-२३ ।
 २४ ययु । २५ नास्ति । २६ वै । २७ य । २८ यतिही । २९-३० । ३१ ययु ।

अथ वा अतस्तोमभागानामेवऽनुमन्त्राः ॥१॥ तदैतदेके
 स्तोमभागेरेवानुमन्त्रयन्ते । तच्चथा न कुर्यात् ॥२॥ देवेन सवित्रा
 प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्येत्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्ते सविता वै
 देवानाम्यसविता सवित्रा प्रसूता इदमनु मन्त्रयामह इति वदन्तः ।
 बहु तथा न कुर्यात् ॥३॥ भूर्भुवस्स्वरित्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्त एषा
 वै अवीषिद्या प्रथ्यै वेदं विद्ययाऽनुमन्त्रयामह इति वदन्तः । तदु
 तथा नो एव कुर्यात् ॥४॥ ओमिसेवानुमन्त्रयेत् ॥५॥ अथैव
 वसिष्ठस्यैकस्तोमभागानुमन्त्रः । तेन हैतेन वसिष्ठः मजाजिकायो-
 ऽनुमन्त्रयां चक्रे देवेन सवित्रा प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्य
 भूर्भुवस्स्वरोमिति । ततो वै स बहुः पञ्जया पशुभिः मजायत ॥६॥
 स एव तेन वसिष्ठस्यैकस्तोम भागानुमन्त्रेणाऽनुमन्त्रयेत् बहुरव
 मंजया पशुभिः मजायते । इयं त्वेवस्वितिरोमिसेवानुमन्त्रयेत्
 ॥७॥ १॥ २॥ ३॥

अतुर्येऽनुवाके अतुर्यः उपरः ।

१-स्तोम- २-नु । ३-कुर्यात् । ४-है । ५-ने 'ए' साव मे कटा,
 ६- ६-है । ७-मैष्ये । ८-एव । ९-याया । १०-हु । ११-जाया ।
 १२-माज- १३-स्तोम- १४-येते । १५-इय । १६-पञ्जयः ।
 १७-स्वतः ॥

अथैव वाचा वज्रमुदह्नुति । यदाह सोमः पथत इति वेद्यापत्ति-
 ध्वमिति वा वाचेव तद्वाचो वज्रं विमुञ्चते वाचस्सत्येनातिमुच्यते ।
 तस्मादोमित्येवाऽनुमन्येत ॥१॥ देवा वा अनया अय्य
 [विद्यया] सरसयोर्ध्वास्वर्गं लोकमुदक्रामन् । ते धनुष्या-
 क्षामन्नागमाद्विभ्यतस्त्रयं वेदमपीक्षयन् ॥२॥ तस्य पीलयन्त
 एकमेवाक्षरं नाऽक्षं भुवन्पीक्षयितुमोमिति यदेतत् ॥३॥ एष उ
 ह वाच सरसः । सरसा इ वा एवविदस्त्रयी विद्या भवति ॥४॥
 स या इ वै अय्या विद्यया सरसया जिति जयति यावद्विदुमोति
 जयति तां जितिविदुमोति तावद्वि य एवं वेद ॥५॥ एतद् वा
 अक्षरं अय्यै विद्यायै प्रतिष्ठा । ओमिति वै होता प्रतिष्ठित ओमित्य-
 यैयुरोमित्युद्गता ॥६॥ एतद् वा अक्षरं वेदानां विविष्टमम् ।
 एतस्मिन्वा अक्षरं अस्मिन्नेव तत्तमान्नाभ्यस्य स्मर्त्ते लोके समुदहन्ति
 तस्मादोमित्येवाऽनुमन्येत ॥७॥ १२-६॥

चतुर्थेऽनुवाके मन्त्रमः अक्षरः । अतुमोऽनुवाकस्तथा

॥०॥

गुहासि देवीऽस्युपवा स्युप त वायस्व सोऽस्मान्दोष्टि य च वथे
 द्विष्यः ॥१॥ माहेनासि बहुलासि मृहस्पसि रोहिण्यस्यमभाऽसि ॥२॥

१ य । २-य । ३ विम्- । ४ अय- । ५ प्रतिष्ठ । ६-य ।

१ देवास्मि । २ य । ३ वयस्मि । ४ अक्षिका ।

सम्भूदेवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
 भूयासम् ॥३॥ यास्ते भजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येभि । उप ते
 ता दिशामि ॥४॥ नाम ये शरीरम्ये प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि
 तन्मे योऽपहृया इतीभाम्पृथिवीमबोचत् ॥५॥ तमियमागतम्पृथिवी
 प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो शोकः । स ह नावयं शोक इति ॥६॥
 यदाह मे त्वयीत्याह तदाह मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति ।
 नाम मे शरीरम्ये प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति ।
 तदस्मा^{१४} इयम्पृथिवी पुनर्ददाति ॥८॥ तामाह म मा वहेति ।
 किममीति । अभिमिति तमभिमभिभवहति ॥९॥ सोऽग्निमाहा-
 ऽभिभिदस्यभिजय्यासम्^{१०} । लोकाजिदसि शोकं जन्मासम् ।
 भूतिरस्यभमयासम् । भजादो भजति यस्त्वेवं वेद ॥१०॥
 सम्भूदेवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
 भूयासम् ॥११॥ यास्ते भजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येभि ।
 उप ते ता दिशामि ॥१२॥ तपो मे तेजो मेऽग्न्ये वाक् मे । तन्मे
 त्वयि । तन्मे योऽपहृया^{१२} इत्यभिमबोचत् ॥१३॥ तं तयैवाऽऽगत-

१ आभूतिरिति । २ स । ३ भवी । ४ म । ५ इति ।

६ अभिजिदस्य' दोषात् आया है । ७ जन्म- । ८ वाक् ।

९ तस्मा । १० अस्मात् ।

वाग्नेः प्रतिनन्दत्यर्थं ते भगवो लोकस्सह नावयं लोक इति ॥१४॥
 यद्वाव मे त्वयीत्याहु तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१५॥ किं नु ते
 भयीति । तपो मे तेजो मेऽश्रमे वाह मे । तन्मे त्वयि । तन्मे
 पुनर्देहीति । [तद्] अस्मां^१ आधिर्पुनर्ददाति ॥१६॥ तयाह व वा
 वदेति ॥१७॥१२०॥

पञ्चमऽध्याये प्रथमः अष्टकः ।

किममीति । वायुमिति । तं वायुमभिप्रवहति ॥१॥ स वायु-
 माह यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रो राजा भूतो वासि । यदक्षिणतो वासीमानो
 भूतो वासि । यत्पश्चाद्वासि वरुणो राजा भूतो वासि । यदुत्तरतो
 वासि सोमो राजा भूतो वासि । यदुपरिष्ठादववासि वज्रापतिर्भूतो-
 ऽववासि ॥२॥ वासोऽस्येकवासोऽनवष्टौ देवानाम्बिसमन्ववा ॥३॥
 तव मजास्तनौषधयस्तस्यो विचक्षितमनुविचक्षन्ति ॥४॥ सम्भू-
 र्देवोऽसि समम्भुयासम् । आभूतिरस्थाम्भुयासम् । भूतिरसि
 भुयासम् ॥५॥ आस्ते मजा उपदिष्टानाहं तव ताः पर्येमि । उप
 ते ता दिशामि ॥६॥ मातामार्गो मे भुतम्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे
 भोऽपहृषा इति वायुमबोधत् ॥७॥ तं त्वेवागते वायुः प्रतिनन्दत्यर्थं
 ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥८॥ यद्वाव मे त्वयी-

यदाह तदाह मे पुनर्देहीति ॥१६॥ किं नु ते मयीति । मायापानौ
 मे श्रुतम्ये । तन्ये त्वयि । तन्ये पुनर्देहीति । तदस्मै वायुः पुन-
 र्देहाति ॥१७॥ तदाह य या वहेति । किमभीति । अन्तरिक्षलोक-
 मिति । तमन्तरिक्षलोकमभिवदति ॥१८॥ तं तथैवाऽऽगतमन्तरिक्ष
 लोकः प्रति नन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नायं लोक
 इति ॥१९॥ यदाह मे त्वयीत्याह तदाह मे पुनर्देहीति ॥२०॥ किं
 नु ते मयीति । अयम् आकाशः स मे त्वयि । तन्ये पुनर्देहीति ।
 आकाशमन्तरिक्ष लोकः पुनर्देहाति ॥२१॥ तदाह य या
 वहेति ॥२२॥ ॥२३॥

अथमेऽनुवाके त्रितीयः सर्गः ।

किमभीति । दिश इति । तं विश्वोऽभिवदति ॥२४॥ तं तथै-
 वाऽऽगतं दिशः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक
 इति ॥२५॥ यदाह मे युष्मास्वित्याह तदाह मे पुनर्देहेति ॥२६॥ किं
 नु तेऽस्मास्विति । अत्रैवमिति । तदस्मै अत्रैव दिशः पुनर्देहाति ॥२७॥
 किं वाक्यं । वा तद्वहेति । किमभीति । महोरानयोर्लोकमिति ।
 तमहोरात्रयोर्लोकमभिवदन्ति ॥२८॥ तं तथैवाऽऽगतमहोरात्रे प्रति-
 नन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२९॥ यदाह

मे पुनर्योरेखाह तद्वाच मे पुनर्दत्तमिति ॥७॥ किं नु तस्मात्तथैवेति ।
 अस्त्विति रिति । तामस्मा अद्वितियहोरात्रे पुनर्दत्तः ॥८॥ ते अस्मा
 प्र मा वहतमिति ॥९॥ ११२२॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

किमभीति । अर्धमासानिति । तमर्धमासानभिषवहन्तः ॥१॥
 तं तथैवागतमर्धमासाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह
 नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाच मे युष्मास्त्वित्याह तद्वाच मे पुनर्दत्ते-
 ति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्त्विति । इमानि क्षुद्राणि पर्वाणि । तानि
 मे युष्मासु । तानि मे प्रति संघचेति । तान्यस्यार्धमासाः पुनः
 प्रति संदधति ॥४॥ तान्नाह प्र मा वहतेति । किमभीति । मासा-
 निति । तम्मासानभिषवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतम्मासाः
 प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥
 यद्वाच मे युष्मास्त्वित्याह तद्वाच मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मा-
 स्त्विति । इमानि स्यूतानि पर्वाणि । तानि मे युष्मासु । तानि मे
 प्रति संघचेति । तान्यस्य मासाः पुनः प्रति संदधति ॥८॥
 तान्नाह प्र मा वहतेति ॥९॥ ११२३॥

पञ्चमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

किमभीति । श्रुत्वा निवि । तमुदनाभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं
 तथैवाऽऽगतमृतवः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं
 लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति
 ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि ज्यायांसि पर्वाणि । तानि मे
 युष्मास्तु तानि मे प्रतिसंघत्तेति । तान्यस्यर्तवः पुनः प्रतिसंघत्ति
 ॥४॥ तानाह म मा वहतेति । किमभीति । संवत्सरमिति । तं
 संवत्सरमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं संवत्सरः प्रतिनन्द-
 न्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे
 त्वयोस्त्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु ते मयीति । अयम्
 आत्मा । स मे त्वायि तन्मे पुनर्दत्तेति । तमस्मा आत्मानं
 संवत्सरः पुनर्ददाति ॥८॥ तथाह म मा वहति ॥९॥ १२४॥

पञ्चमेऽनुवाके पञ्चमः अक्षरः ।

किमभीति । दिव्यान् गन्धर्वानिति तं दिव्यान् गन्धर्वानभि-
 प्रवहति ॥१॥ तं तथैवाऽऽगतं दिव्या गन्धर्वाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मा-
 स्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति ।

गन्धर्वो मे मोदो मे प्रमोदो मे । तन्मे युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति
 तदस्मै दिव्या गन्धर्वाः पुनर्ददति ॥४॥ तानाह प्र मा वहेति ।
 किमभीति । अप्सरस इति । तमपसरसोऽभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं
 तथैवाऽऽगतमपसरसः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं
 लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति
 ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । हसो मे क्रीळ्य मे मिथुनम्मे । तन्मे
 युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति । तदस्मा अप्सरसः पुनर्ददति ॥८॥
 वा आह प्र मा वहेति ॥९॥१०॥११॥

पञ्चमेऽनुवाके षष्ठः अण्ड ।

किमभीति । दिवामिति । तं दिवमभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं
 तथैवाऽऽगतं द्यौः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं
 लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे त्वयीसाह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥
 किं नु ते मयीति । वृत्तिरिव । सकृद्वृत्तेव येषां । तानस्मै दत्ति
 द्यौः पुनर्ददति ॥४॥ तानाह प्र मा वहेति । किमभीति । वेदानिति ।
 तं वेदानभिप्रवहति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं देवाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे युष्मासु

२ गन्धर्वो । ३ युष्मासु ।

४ अहं ।

खाह तद्वाच मे पुनर्देयेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्त्विति । अमुकमिति ।
तदस्मा अमुकं देवाः पुनर्देदति ॥८॥ तानाह प्रमावहेति ॥६॥ ३१२६॥

पश्चमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

किमभीति । आदित्यमिति । तमादित्यमभिप्रवहन्ति । १॥ स
आदित्यमाह त्रिभूः पुरस्तात्सम्पत् पश्चात् । सम्पद् त्वमसि ।
समीचो अनुष्मानरोषी रूपतस्तु श्रुतिः पाप्मानं हन्ति । अपहत-
पाप्मा भवति यस्तैवं वेद ॥२॥ सम्भूदेवोऽसि समहम्भूयासस्य ।
आभूतिरस्याभूयासस्य । भूतिरसि भूयासस्य ॥३॥ आस्ते यथा
अपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येभि । उप ते ता दिशामि ॥४॥ ओजो
मे वलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे त्वयि तन्मे भोऽपहृता इत्यादित्यमयोक्तव्यम् ॥५॥
ते तयोवाऽऽगतमादित्यः मतिनन्दनस्य ते मन्त्रो लोकाः । स ह
आमयं लोक इति ॥६॥ यद्वाच मे त्वयीत्वाह तद्वाच मे पुनर्दे-
यि ॥७॥ किं नु ते मयीति । ओजो मे वलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे
त्वयि । तन्मे पुनर्देयि । तदस्मा आदित्यः पुनर्देयि ॥८॥
तानाह प्रमावहेति । किमभीति । चन्द्रपसमिति । ते चन्द्रपसमभि-

२-वाति ॥

१-यत् । २-सम्पद् । ३-अपरोतिषि 'ति' शब्द से कटा हुआ है ।
४-उत्प । ५-पथम् । ६-भूति । ७-भूति । ८-अंगत् । ९-मास्ति ।
१०-त्वयी, त्वी यीति । ११-यत् ।

भवति ॥१॥ स चन्द्रमसमाह सत्यस्य पन्था न त्वा जहाति^{१४} ।
 अमृतस्य^{१५} पन्था न त्वा जहाति ॥१०॥ नवो नवो भवसि जाय-
 मानो भरो नाम ब्राह्मणं उपास्से । तस्माच्च सखा उभये देवमनुष्या
 ब्रह्माद्यम्भरन्ति । अथादो भवति यस्त्वेवं वेद ॥११॥ सम्भूर्देवी-
 ऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
 भूयासम् ॥१२॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पथेभि ।
 उष ते ता दिशामि ॥१३॥ मनो मे रतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भू-
 तिर्मे तन्मे त्वयि तन्मे सोऽपहृषा इति चन्द्रमसमवीचत् ॥१४॥ तं
 तथैवाऽऽगतं चन्द्रमाः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । सह नावयं
 लोक इति ॥१५॥ यद्वाव मे त्वयीसाह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१६॥
 किं नु ते मयीति । मनो मे रतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भूतिर्मे । तन्मे
 त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै चन्द्रमाः पुनर्ददति ॥१७॥
 तमाह म मा वहेति ॥१८॥ ११२७॥

पञ्चमोऽनुवाके ऽष्टमः खण्डः ।

किमभीति । ब्रह्मणो लोकमिति । तमादित्यमभिभवति ॥१॥
 तमादित्यमाह म मा वहेति । किमभीति । ब्रह्मणो लोकमिति ।

११ चन्द्र- १२ वा । १३-आस । १४ नास्ति, अमृतस्य पन्था
 देवोऽसि समहम् । १५-ति । १६ मे, म । १७ किं नु ॥

१ प्रथमो । २ आह-॥

तं चन्द्रमसमभिप्रवहति । स एवमेते देवते अनुसंचरति ॥२॥
 एषोऽन्तोऽतः परः प्रवाहो नास्ति । यानु कौंभ्याऽतः प्राचो लोका-
 नभ्यवादिष्व ते सर्वे आप्ता भवन्ति ते जितास्तेष्वस्य सर्वेषु काम-
 चारो भवति य एवं वेद ॥३॥ स यदि कामयेत पुनरिहाऽऽजाये-
 येति यस्मिन् कुलोऽभिध्यायेद्यदि ब्राह्मणकुले यदि राजकुले
 तस्मिन्नाजायते । स एतमेव लोकम्पुनः प्रजानन्नभ्यारोहयेति ॥४॥
 तद् होवाच शाक्यायनिर्बहुव्याहितो वा अयम्बहुशो लोकः । एतस्य
 वै कामास नु भुवते [वा] श्राम्यन्ति वा क एतत्प्रास्य पुनरिहेया-
 कश्चैव स्यादिति ॥५॥११२८॥

पञ्चमेऽनुवाके नवमः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकस्तस्मात् ।

०:

लुचैश्चवा इ कौपयेयः कौरव्यो राजाऽऽस । तस्य इ केशी
 दार्भ्यः पाञ्चालो राजा स्वस्तीय आस । तौ हाऽन्योन्यस्य मिया-
 वासतुः ॥१॥ स होचैश्चवाः कौपयेयोऽस्माज्जोकात् प्रेषाव ।
 तस्मिन् इ प्रेतं केशी दार्भ्योऽरण्ये मृगर्या चचाराऽमिगं विनिनी-

३-अन्ति । ४ 'एषोऽन्तमभिप्रवहति । ५ मा वहेति । किमसीति ।
 प्रह्वयो लोकमिति देवते अनु संचरति' अधिक है । ५ अस्मि ।
 इ-विष्ट । ७ तेषु । ८ 'वा' अधिक है । ९ भूवते । १० 'वा' अधिक है ।
 १-प्रेष- २ कौष- ३ केशी, केशा । ४ स्वस्ती- ५ 'गा' ताक रङ्ग
 में कता हुआ अधिक है ।

वमाणाः ॥२॥ स ह तथैव पश्ययमानो मुनान् प्रसरन्तरेणै-
 बोधैश्चरन्तं कौपयेयमधिजगाम ॥३॥ तं होवाच हृष्यामि स्वी-
 ज्ञानामीति । न हृष्यसीति होवाच ज्ञानासि । स एवास्मि यस्मा
 मन्यस इति ॥४॥ अय यद्गव आहुरिति होवाच य आविर्भव-
 स्यन्येऽस्य लोकमुपयन्तीत्यय कथमशको म आविर्भवितामिति ॥५॥
 ओमिति होवाच यदा वै तस्य लोकस्य गोप्तारमविदेऽतस्त आवि-
 रभूवभाषियं चास्य विनेष्याम्यनु चैनं शसिष्यामीति ॥६॥ तथा
 भगव इति होवाच । तं वै नुत्वा परिष्वजा इति । त इ स्म
 परिष्वजमानो यथा घृमे वापीयाद्वायुं वाकाशं वाग्न्यर्चि वाऽपोवैव
 इ स्मैनं ज्येति । न ह स्मैनम्परिष्वङ्गायोपसभते ॥७॥ ११२-६॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स होवाच यद्वे ते पुरा रूपमासीत्तत्ते रूपम् । न तु त्वा परि-
 ष्वङ्गायोपनभ इति ॥१॥ ओमिति होवाच ब्राह्मणो वै मे साम
 विद्वान् साम्नोद्गायत । स मेऽशरीरेण साम्ना शरीराययधूनोत् ।
 तयस्य वै किल साम विद्वान् साम्नोद्गायति देवतानामेव सलोकतां
 गमयसीति ॥२॥ पतङ्गः प्राजापत्य इति होवाच प्राजापतेः प्रियः

६ प्रस्तव-१ ७ ऽप्येव-१, ८ ऽप्येव-१ ९ य-१ १० अत-१ ११ य-१

११ हे । १२ वै ॥

१ ऽय-१ २ ने । ३-य-१ ४ ऽय-१ ५-वापय-१

पुत्र भ्रास । स तस्मा एतत् सामाब्रवीत् । तेन स ऋषीणामुद-
गायत् । त एत ऋषयो धृतशरीरा इति ॥३॥ एतेनो एव
सान्नेति होवाच मजापतिर्देवानामुदगायत् । त एत उपरि देवा
धृतशरीरा इति । ४॥ तस्मिन् हैनमनुशशास । तं हानुशिष्यो-
वाच यस्मैवैतत् साम विधातु स स्मैव त उद्गायत्विति ॥५॥ स
हानुशिष्ट आजग्रास । स ह स्म कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणानुप-
चक्षमानश्चरति ॥६॥ ३।३०॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

व्यूढच्छन्दसा वै द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि । स यौ
वस्तत्साम वेदं यदहं वेद स एव म उद्गास्यति । मीमांसध्वमिति
॥१॥ तस्मै ह मीमांसमानानामेकश्चन [न] सम्प्रत्यभिदधाति
॥२॥ स ह त्वैव पश्ययमानश्मशाने वा वने वाऽऽवृत्तिशया-
नमुपाधावर्माचकार । तं ह चायमानः प्रजहौ ॥३॥ तं हो-
वाच कोऽसीति । ब्राह्मणोऽस्मि प्रातृदो माह्व इति ॥४॥ स किं
वेत्येति । सामेति ॥५॥ ओमिति होवाच । व्यूढच्छन्दसा वै
द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि । स यदि तत्साम वेत्स्य यदहं वेदं त्व-

हं वा । ७ तं । ८ वे । ९ द्वा । १०-पाजे-॥

१-व्युढ-२ यद्वि । ३ त्वम । ४ वेत्य । ५ श्मशानम् । ६ वा वः साध ७ न ।

८ वद, उप । ९ द्वायः न, जायान । १०-व्युढ-११ यदहं वेदं अभिषा हे ।

मेव म उद्गास्यासि । श्रीमांसस्वेति ॥६॥ तस्मै ह श्रीमांसमांसस्व-
 देव सम्प्रत्यभिदधौ ॥७॥ तं हीवाचाऽयम् उद्गास्यतीति ॥८॥
 तस्मै ह कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणा असूयन्त आहुरेषु ह वा अयं
 कुर्येषु सत्सुद्गास्यति । कस्मा अयमलमिति ॥ ६ ॥ अलम् नै
 मशमिति हस्माऽह । सैवाऽलम्भस्याऽलम् मतायैद्वतस्य हाऽल-
 मवोज्जगौ । तस्मादालम्बैलाजोद्गातेत्याख्यापयन्ति ॥१०॥ १११॥

षष्ठेऽनुष्ठाके तृतीयः खण्डः ।

तद् सात्यकीर्ता आहुर्यां अयं देवत्तमुपमस्मह एकमेव अयं तस्यै
 देवत्तायै रूपं गन्वादिश्वस एका वाहन एकं हस्तिन्येकम्पुरुष एकं
 सर्वेषु भूतेषु । तस्या एवेदं देवतायै सर्वं रूपमिति ॥१॥ तदेतदेकमेव
 रूपम्याग एव । यावदथैव प्राणेन प्राणिति तावदूपमभवति तद-
 उपमवती ॥२॥ तदयं यदा प्राण उत्क्रामति दार्वेवैव भूतोऽनर्ण्यः
 परिश्रिप्यते न किंचन रूपम् ॥३॥ तस्यान्तरात्मा तथः । तस्या-
 सप्यमाप्तस्योष्णतरः प्राणो भवति ॥४॥ तपसोऽन्तरात्मा
 स विदुक्तः । तत्मात्स दहति ॥५॥ अथाधिदेवतम् । इत्येवैव

१२-ति स एके किया हुआ । १३ 'स' अधिक है । १४-नास्ति 'ति' ।
 १५-पातन- । १६-आस- । १७-कुजेषु । १८-आस- । १९-अयम् । २०-यै
 इसके लिये 'म' जोड़ रग में कटा हुआ है । २१ 'म' अधिक है । २२-एवौ ॥
 १-मह । २-एवो । ३-ए । ४-यः । ५-दति । ६-वैव- । ७-ए- ।

देवता योऽयम्यवते । तस्मिन्नेतास्मिन्नापोऽन्तः । तदग्रम् । सो-
ऽरुक्ष उपासितव्यः । यदस्मिन्नापोऽन्तस्तेनाऽरुक्षः ॥६॥ तस्या-
न्तरात्मा तपस् । तस्मादेव आतपस्युष्मतरः पवते ॥७॥ तपसो-
ऽन्तरात्मा विद्युत् । स निरुक्तः । तस्मात्सोऽपि दहति ॥८॥ तानि
वा एतानि चत्वारि साम प्राणो वाङ्मनस्स्वरः । स एष प्राणो
वाचा करोति मनो नेत्रः । तस्य स्वर एष ग्राहः । ग्राहवान्
भवति य एवं वेद ॥६॥३॥३२॥

अष्टोऽनुवाके धतुर्धः कवचः ।

स यो वायुः प्राण एव सः । योऽग्निर्वागैव सः । यश्चन्द्रमा
मन एव तद् । य आदित्यस्स्वर एव सः । तस्मादेतमादित्यमाहु-
स्स्वर एतीति ॥१॥ स यो ह वा अमूर्देवता उपास्ते या अमूरधि-
देवतं दूरुपा वा एता दुरनुसम्प्राप्या इव । कस्तद्वेद्ययेता अनु-
वा सम्प्राप्नुयाच्च वा ॥२॥ अथ य एता अध्यात्ममुपास्ते स हा-
न्तिदेवो भवति । निर्जीर्यन्तीव वा इत एता । [त] अस्य वा
एतादृशरीरस्य सह प्राणेन निर्जीर्यन्ति । क उ एव तद्वेद ययेता
अनु वा सम्प्राप्नुयाच्च वा ॥३॥ अथ य एता उन्मयीरेकवा भव-

तानि वासितव्यो (१) यदस्मिन्नापोऽन्तस्तेनाऽरुक्षः-तस्मात्सोऽपि
दहति वाचरा प्राप्या हे ॥

१ कवा । २-कवै । ३-प्राप्या । ४ वा । ५ हे । ६ उन्मयीरेक

सम्भवति यदि वै पुरुषस्य पुरुष एव यदि गोर्गौरेव यद्यश्वस्याश्व
एव यदि मृगस्य मृगएव । यस्यैव रेतो भवति तदेव सम्भवति ॥५॥
तद्यथा हे वै सुवर्णी हिरण्यमग्नौ प्रास्यमानं कल्याणतरं कल्याण-
तरम्भवति एवमेव कल्याणतरेण कल्याणतरेणात्मना सम्भवति
य एव वेद ॥६॥ तदेतदचाभ्यनूच्यते ॥७॥ १।३५॥

षष्ठेऽनुवाके षष्ठः अष्टः ।

पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा
विपश्चितः । समुद्रे अन्तः कवयो विचक्षते मरीची-
नाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ॥१॥ पतङ्गमक्तमिति । माणी
वै पतङ्गः । पतङ्गिव क्षेप्यक्षेप्यति रथमुदीक्षते । पतङ्ग इवाचक्षते
॥२॥ असुरस्य माययेति । मनो वा असुरस्य । तदयमुपु रमति ।
कस्यैव माययाक्तः ॥३॥ हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चित इति ।
हृदैव हेते पश्यन्ति यन्मनसा विपश्चितः ॥४॥ समुद्रे अन्तः कवयो
विचक्षते इति । पुरुषो वै समुद्र एवंविद उ कवयः । त इमाम्पु-
रुषेऽन्तर्वाचं विचक्षते ॥५॥ मरीचीनाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ।
मरीच्य इव वा पता देवता यदाग्निर्वायुरादिसम्पन्नाः ॥६॥ न इ

चा एतासां देवतानाम्पदमस्ति । पदेनो ह वै पुनर्यत्युरन्वेति ॥७॥
तदेतदनन्वितं साम पुनर्यत्युना । अति पुनर्यत्युं तरति य एवं
वेद ॥८॥१॥१५॥

षष्ठेऽध्याये सप्तमः खण्डः ।

पतङ्गो वाचम्भनसा विभर्ति तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः ।
तां द्योतमानां स्वर्गम्भनीषामृतस्य पदे कवयो निपान्ति
इति ॥१॥ पतङ्गो वाचम्भनसा विभर्ति ॥ प्राचो वै पतङ्गः । स
इमां वाचम्भनसा विभर्ति ॥२॥ तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तरिति ।
प्राणै वै गन्धर्वः पुरुष उ गर्भः । स इमाम्पुरुषेऽन्तर्वाचं वदति ॥३॥
तां द्योतमानां स्वर्गम्भनीषामिति । स्वर्गो शेषा मनीषा वदति ॥४॥
अमृतस्य पदे कवयो निपान्तीति । मनो वा अमृतमेवंविद उ कवयः ।
ओमित्येतदेवाक्षरमृतम् । तेन यद्वचमीकृतं सन्ने यद्यजुर्वेदस्य
तदेनां निपान्ति ॥५॥१॥१६॥

षष्ठेऽध्यायेऽष्टमः खण्डः ।

८ वै ।

१-चो । २-आ । ३-वदति । ४-अन्तः । ५-अ । ६-यस्ताम्
के आगे 'ओमित्ये-अमृतम्' हे ॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तरम् ।

स सध्रीचीस्त विपूचीर्वसान आ वरीवर्ति मुवनेभ्यन्तर इति ॥१॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमिति । प्राणो वै गोपाः । स शीर्दं सर्वम-
निपद्यमानो गोपायति ॥२॥ आ च परा च पथिभिश्चरन्तमिति ।

तथे च ह वा इमे प्राणा अमी च रश्मय एतैर्ह वा एष एतदा च
परा च पथिभिश्चरति ॥३॥ स सध्रीचीस्त विपूचीर्वसान इति ।

सध्रीचीश्च होम एताद्विपूचीश्च प्रजा यजे ॥४॥ आ वरीवर्ति मुवने-
भ्यन्तरिति । एत खेवैषु सुवनेभ्यन्तरावरीवर्ति ॥५॥ स एष इन्द्र

करीषः । स करीष इन्द्र उद्गीथ आत्यज्यते । त्रिवोद्गातुश्चोपगातृणां
न विद्यान्ते इव यथोर्ध्वसंख्येति । स सपदि भूमौ केषापति ॥६॥

स विद्यावाक्पदिन्द्रो मेरुः कश्चन कश्चन कश्चन परिशिष्यते इति ।
परिशिष्यते इति । स कश्चन कश्चन कश्चन परिशिष्यते ॥७॥ तदेव

आतृष्यं साम । स ह वा इन्द्रः कंचन आतृष्यन्मयमे । स
यथेन्द्रो न कंचन आतृष्यन्मयत एषोम्य [स] कंचन आतृष्य-

न्मयते य एतदेवं वेदाश्चो कस्मैव विद्वत्पुत्रायति ॥८॥३॥७॥
पष्ठोऽनुवाके नवमः अष्टः । पष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१-रीक-इस-पाद के प्रारम्भ में 'अति' कला अधिक है । २-सस्ते ।
३-तृष्या-४-भ्य । ५-आगात् । ६-परिषे-७-कश्चन । ८-अनुवाक ।

मञ्जापातिम्व्रह्माऽऽसृजत । तमपप्रथममुखमसृजत ॥१॥ तमप-
 र्पश्यममुखं मञ्जानम्व्रह्माऽऽविशत । पुरुषं ततः । प्राणी वै ब्रह्म ।
 मंत्राणि वाचैर्न तदाविशत ॥२॥ स उदतिष्ठत मञ्जानां जनयिता ।
 तं रक्षास्यन्वसचन्त ॥३॥ तमेतदेव साम गायमभायत । यद्वाग्रस्य
 जायत तद्वाग्रस्य गायत्रयम् ॥४॥ जायत एनं सर्वस्मार्थांश्चनी
 मुच्यते य एवं वेद ॥५॥ तमुपाऽस्मै गायता नर इत्युचाऽऽश्वेव-
 र्वायिनोपागायन् ॥६॥ यदुपाऽस्मै गावता नर इति श्वेत् । गायत्र्या
 भवत । तस्मादेवैव प्रतिपत्स्वर्ग्या ॥७॥ पवमानयिन्दावा अभि
 देवमिया-दुम-भास्ताता इति षोडशाक्षराण्यग्यायन्तः । षोडशकसं
 वै ब्रह्म । कलाश्च एवेनं तदब्रह्माऽऽविशत ॥८॥ तदेतच्चतुर्विंशत्यक्षरं
 गायत्रम् । अष्टाक्षरः प्रस्तावः । षोडशाक्षरं मीति तच्चतुर्विंशतिस्त-
 मयन्ते । चतुर्विंशत्यक्षमास्सर्वसरः । सप्तसरस्तस्य ॥९॥ तं
 अथशरीरेण सृष्टुरन्वैतत । तथच्छरीरेण चन्द्रसारेण । अथ शरी-
 रीरं तदभूतम् । तस्याऽक्षरिणः सप्तस्य शरीराण्यभून्ते ॥१०॥
 ३॥१॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

ओवा३चोवा३चोवा३च् इम्मा ओवा इति षोडशाक्षरा-
 वयम्यगायत । षोडशकसो वै पुरुषः । कलाश्च एवास्य तच्छरी-
 रावयधूनोद ॥१॥ स एषोऽपहतपाप्मा धृतशरीरः । तदेविक्रया-
 दितियुदासंगायसो इत्युदास । आ इति आहृद्यात् । वागिति
 तद्वक्त्रम् । तदिदन्तरिक्षं सोऽयं वायुः पवते । इमिति चन्द्रमाः ।
 भा इत्यादिसः ॥२॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भातीत्याच-
 क्षते ॥३॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भ्रमितीत्याचक्षते ॥४॥
 एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोः कुभ्रमितीत्याचक्षते ॥५॥ एतस्य
 ह वा इदमक्षरस्य क्रतोश्शुभ्रमितीत्याचक्षते ॥६॥ एतस्य ह वा
 इदमक्षरस्य क्रतोर्वृषभ इत्याचक्षते ॥७॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य
 क्रतोर्देव इत्याचक्षते ॥८॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्वो
 भतीत्याचक्षते ॥९॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोस्सम्भती-
 त्याचक्षते ॥१०॥ तथर्त्वि च भा३ इति च भा३ इति च तथैत-
 निमधुनं गायत्रम् । प्र मिथुनेन जायते य एवं वेद ॥११॥
 ११३-६॥

सप्तमोऽनुवाके द्वितीयः अष्टकः ।

१-भा । २ कृत्-न ३ सर्वत्र ऐसा पाठ । ४-स्य । ५ इदम्-
 ह वम, सम्भवती । ७ य मैती । ८ भू ॥

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन
 देवा एतेनर्षयः ॥१॥ तदेतदमृतं प्रजापतयेऽज्जवीत प्रजापतिः
 परमेष्ठिने प्रजापत्याय परमेष्ठी प्रजापसो देवाय सवित्रे देवस्सविता-
 ऽग्नयेऽग्निरिन्द्रायेन्द्रः काश्यपाय काश्यप ऋश्यभृक्काय काश्यपाय
 ऋश्यभृक्काश्यपो देवतरसे श्यावसायन्ताय काश्यपाय देवतरा श्या-
 वसायनः काश्यपश्शुभाय वाहेयाय काश्यपाय शुभो वाहेयः का-
 श्यप इन्द्रोताय देवापाय शौनकायेन्द्रोतो देवापश्शौनको इत्य-
 पेन्द्रोतये शौनकाय हतिरैन्द्रोतिश्शौनकः पुलुषाय प्राचीनयोग्याय
 पुलुषः प्राचीनयोग्यस्सत्यज्ञाय पौलुषये प्राचीनयोग्याय सत्य-
 यज्ञः पौलुषिः प्राचीनयोग्यस्सोमशुष्माय सात्यज्ञाय प्राचीन-
 योग्याय सोमशुष्मस्सात्ययज्ञिः प्राचीनयोग्यो हत्स्वाक्षयायाऽऽक्ष-
 केपाय माहाक्षाय राज्ञे हत्स्वाक्षय आक्षकेयो माहाक्षो राजा
 जनश्रुताय कारिद्वयाय जनश्रुतः कारिद्वयस्सायकाय जानश्रुते-
 याय कारिद्वयाय सायको जानश्रुतेयः कारिद्वयो नगरिषो
 जानश्रुतेषाय कारिद्वयाय नगरी जानश्रुतेयः कारिद्वयश्शक्राय

१. 'काश्यपो' अधिक है । २ श्यावसाय । ३ शुभो, शुभे ।
 ४, वाहे । ५ इन्द्रोत- । ६-पिण् । ७ जोक्- । ८ स सात्ययज्ञिः
 प्राचीनयोग्यो हत्स्वा अधिक है । ९ जानुश्, जानश्- ।
 १० शिश- ।

११
 आध्यायनय आभेयाय सङ्गज्ञाध्यायनिरात्रेयो रामाय कातुजाते-
 याय वैद्याग्रपद्याय रामः कातुजातियो वैद्याग्रपद्यः—॥२॥३॥४०॥

सप्तमेश्नुषाके तृतीयः खण्डः ।

—सङ्गाय बाभ्रव्याय सङ्गो बाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनय
 आध्याय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कैसाय वारक्ये कैसो वारक्यः
 मोष्ठपादाय वारक्याय मोष्ठपादो वारक्यः कैसाय वारक्यस्य
 कैसो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यः कुबेराय
 वारक्याय कुबेरो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो
 जनश्रुताय वारक्याय जनश्रुतो वारक्यस्सुदत्ताय पाराशर्याय
 सुदत्तः पाराशर्योऽषाढायोचराय पाराशर्यायाऽषाढ उचरः पारा-
 शर्यो विपाश्र्यो नकुनिमित्राय पाराशर्याय विपाश्र्यन्कुनिमित्रः
 पाराशर्यो जयन्ताय पाराशर्याय जयन्तः पाराशर्यः—॥१॥२॥३॥४॥

सप्तमेश्नुषाके चतुर्थः खण्डः ।

—श्यामजयन्ताय लौहिताय श्यामजयन्तो लौहितः पञ्चि-
 मुक्त लौहिताय पञ्चिमुक्तो लौहितस्सुदत्ताय लौहितस्य सुद-
 तः—॥१॥२॥३॥४॥

११-नाब ।

२-नार्य, कात्याजयन् ३ वर- ३ ५- ३ सुदत्ता, सुदत्ताय

३ जय (), आश- ४

५ खो- ६

अवा लौहितः कृष्णधृतये सामकये कृष्णधृतिस्तत्सामकिश्याम-
 मुजयन्ताय लौहिताय श्याममुजयन्तो लौहितः कृष्णदत्ताय
 लौहिताय कृष्णदत्तो लौहितो मिश्रभूतये लौहिताय मिश्रभूति
 लौहितश्श्यामजयन्ताय लौहिताय श्यामजयन्तो लौहितस्त्रि-
 वेदाय कृष्णराताय लौहिताय त्रिवेदः कृष्णरातो लौहित्यो
 यशस्विने जयन्ताय लौहित्याय यशस्वी जयन्तो लौहित्यो जयकाय
 लौहित्याय जयको लौहित्यः कृष्णराताय लौहित्याय कृष्णरातो
 लौहित्यो दत्तजयन्ताय लौहित्याय दत्तजयन्तो लौहित्यो
 विपश्चिते दृढजयन्ताय लौहित्याय विपश्चिदृढजयन्तो लौहित्यो
 वैपश्चिताय दार्ढजयन्तये दृढजयन्ताय लौहित्याय वैपश्चितो दार्ढ-
 जयन्तिदृढजयन्तो लौहित्यो वैपश्चिताय दार्ढजयन्तये शुभाय
 लौहित्याय ॥१॥ तदेतदमृतं गायत्रमय यान्यन्यानि गीतानि
 काम्यान्त्येव तानि काम्यान्त्येव हवि ॥३॥१॥४॥५॥

तत्सामोऽनुवाके प्रथमः अष्टादः । तत्सामोऽनुवाकस्तत्सामः ॥

२-ति । ३ 'श्यामजयन्तो लौहित्याय' अत्रिक ३ । ४ वैपश्चि-

[चतुर्थोऽध्यायः]

चेताभ्यो दर्शतो हरिनीलोऽसि हरितस्पृशस्समानबुद्धो मा
हिंसीः । न मां त्वं वेत्थ प्रद्वव ॥१॥ यदभ्यवचरणोऽभ्यवैषि
स्वपन्तम्पुरुषमकोविदमन्मयेन^२ वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥२॥
यदभ्यवचरणोऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमको विदमयस्मयेन वर्मणा
वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥३॥ यदभ्यवचरणोऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पु-
रुषमकोविदं लोहमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥४॥
यदभ्यवचरणोऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमकोविदं रजतमयेन वर्मणा
वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥५॥ यदभ्यवचरणोऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरु-
षमकोविदं सुवर्णमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥६॥

आयुर्भूता मतिः मितं नमस्त आविशोषण ।

ग्रहो नामोऽसि विश्वायुस्तस्मै ते विश्वाहा नमो

नमस्ताभ्याय नमो वरुणाय नमो जिघांसते ॥७॥ यक्ष्म राजन्मा मां
हिंसीः । राजन् यक्ष्म मा हिंसीः । तयोस्सेविदानयोस्सर्वमायुर-
याम्यहम् ॥८॥१॥

प्रथमोऽनुवाकस्तस्मात् ।

१-आ । २-इति मन्मयेन । ३-अथायम् । ४-तत्त्वम् है ।
५-मातम् । ६-वाहाय । ७-रुणाय । ८-अम् ॥

पुरुषो वै यज्ञः ॥१॥ तस्य धामि चतुर्विंशतिर्वर्षाणि तत्मात-
 स्सवनम् । चतुर्विंशत्यक्षरा मागधी । मायकम्पातस्सवनम् ॥२॥
 तद्वद्वानाम् । मागधी वै वसवः । मागधा हीदं सर्वं वस्वाददते ॥३॥
 स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत्स ब्रूयात्मागधा वसव इदम्मे
 मातस्सवनं माध्यन्दिमेन सवनेनानुसंतनुतेति । अगदो ह्येव
 भवति ॥४॥ अथ वसति चतुश्चत्वारिंशत् वर्षाणि तन्माध्यन्दिनी
 सवनम् । चतुश्चत्वारिंशदक्षरा त्रिष्टुप् । वैष्टुभं मागधिकां
 सवनम् ॥५॥ तद्वद्वानाम् । मागधा वै रुद्राः । मागधा हीदं सर्वं
 रोदयन्ति ॥६॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत् स
 ब्रूयात्मागधा रुद्रा इदम्मे माध्यन्दिनं सवनं तृतीयसवनेनानुसंत-
 नुतेति । अगदो ह्येव भवति ॥७॥ अथ यान्यष्टाचत्वारिंशत्
 वर्षाणि तत्तृतीयसवनम् । अष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती । जागतं
 तृतीयसवनम् ॥८॥ तदादित्यानाम् । मागधा वा आदित्याः ।
 मागधा हीदं सर्वमाददते ॥९॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदु-
 पद्रवेत्स ब्रूयात्मागधा आदित्या इदम्मे तृतीयसवनमायुषानु-
 संतनुतेति । अगदो ह्येव भवति ॥१०॥ एतद् तद्विद्वान् आसया

उवाच महिदास ऐतरेय उपतपति किमिदमुपतपसि योऽहमनेनो-
पतपता न प्रेक्ष्यामीति । स हं षोडशव्रतं वर्षाणि जिजीव । अ ह
षोडशव्रतं वर्षाणि जीवति नैनम्भाणस्साम्यायुषो जहाति य एवं
वेद ॥११॥४॥२॥

द्वितीयोऽनुवाकस्तमास्तः ।

त्र्यायुषं कश्यपस्य जमदग्नेस्त्र्यायुषम् ।

त्रीण्यमृतस्य पुष्याणि त्रीण्यायुषि मेऽकृणोः ॥१॥

स नो भयोमूः पितृवाविश्रस्य शान्तिको यस्तनुवे स्योनः ॥२॥

यऽमयः पुरीष्याः प्रिविष्टाः पृथिवीमनु ।

तेषां त्वमस्युत्तमः प्र णो जीवातवे सुव ॥३॥४॥३॥

तृतीयोऽनुवाकस्तमास्तः ।

अरयस्य वत्सोऽसि विश्वनामा विश्वाभिरक्ष्णोऽवाम्पक्षो-
ऽसि वरुणस्य दूतोऽन्तर्धिनाम ॥१॥ यया त्वममृतोर्मर्त्येभ्योऽन्तर्हितो-
ऽस्मेवं त्वमस्मानघातुभ्योऽन्तर्धेहि । अन्तर्धिरसि स्तेनेभ्यः ॥२॥४॥४॥

चतुर्थोऽनुवाकस्तमास्तः ।

१ सम्य ॥

१ त्रियायु- २ त्रीण्य । ३ त्र्यायुषि । ४-तो । ५ चतुष्पा ।
६ य । ७-प्रो । ८ प्रा ।

१ विश्वोद्-धौ । २-वमा । ३ अर्धेनाम । ४ त । ५ मर्त्येभ्यो ।

न्युषि सविता भवस्युदेष्यन् विष्णुरुद्यन्पुरुष उदितो बृहस्पति-
 रभिप्रयन्मघवेन्द्रो वैकुण्ठो माध्यन्दिने भगोऽपराह उग्रो देवो सो-
 हिताय भक्तमिते यमो भवसि ॥१॥ अश्वसु सोमो राजा निशाया-
 म्पितृराजस्त्वग्ने मनुष्यान्प्रविशसि पयसा पशून् ॥२॥ विरात्रे
 भवो भवस्य पररात्रेऽङ्गिरा आग्निहोत्रवेलायाम्भृशुः ॥३॥ तस्य तदे-
 तदेव मण्डलमूधः । तस्यैतौ स्तनौ यद्वाक् च प्राणश्च । ताभ्या-
 म्प्रेषुत्वाऽध्यायम्प्रहर्षमभ्रजाम्पशून् स्वर्गं लोकं सजातवन-
 स्याम ॥४॥ एता आशिष आशासे । भूर्भुवस्सः । उदिते शुक्रमा-
 दिश ॥ तदात्मन्दधे ॥५॥४॥५॥

पञ्चमोऽनुवाकस्तस्मात् ।

भगेरथो हैचवाको राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाण आस ॥१॥
 तदु ह कुरूपश्चाक्षानाम्भाक्षणा ऊचुर्भगेरथो ह वा अयमैस्वाको
 राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाणः । एतेन कथो वदिष्याम इति ॥२॥
 तं हाऽभ्येषुः । तेभ्यो हाऽभ्यागतेभ्योऽपचितीक्षकार ॥३॥ अथ
 हेपां स माग आवव्राजोत्वा केशश्मश्रूणि नस्त्राभिकृत्याऽऽभ्य-

१-आ । २ पराहेण । ३-ज । ४ त । ५-य । ६ आशिष ।

७ आशिष ॥

१-पाण्य- २ यक्ष्य- ३ एततेन । ४-मा- ५-अधिक हे ।

५ उपत्वा

नाऽभ्यज्य दण्डोपानहम्बिभ्रत ॥४॥ तान् होवाच ब्राह्मणा
 भगवन्तः कतमो वस्तद्वेद यथाऽऽश्रावितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छत
 इति ॥५॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यद्विदुषस्सूद्राता मुहोता
 स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति ॥६॥ अथ होवाच कतमो
 वस्तद्वेद यच्छन्दांसि प्रयुज्यन्ते यच्चानि सर्वाणि संस्तुतान्यभि-
 सम्पद्यन्त इति ॥७॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यथा गायत्र्या
 उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥८॥ अथ होवाच कतमो
 वस्तद्वेद यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिसन्तीति ॥९॥१०॥११॥

बृहज्जुषाके प्रथमः खण्डः ।

एतान् हैनान् पञ्च मन्त्रान् पमञ्च ॥१॥ तेषां ह कुरूपचा-
 क्षनाम्बको दात्रभ्योऽनूचान आस ॥२॥ स होवाच यथाऽऽश्रा-
 वितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छत इति प्राच्यां वै राजन् दिव्या-
 श्रावितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छतः । तस्मात्प्रावृत्तिष्ठन्नाश्रावयति
 प्रावृत्तिष्ठन्प्रत्याश्रावयतीति ॥३॥ अथ होवाच यद्विदुषस्सूद्राता
 मुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति यो वै मनुष्यस्य
 सम्भूतिं वेदेति होवाच तस्य सूद्राता मुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषवि-

दोजयत इति प्राणा च ह वाव राजन् मनुष्यस्य सम्भूतेरिति
 ॥४॥ अथ होवाच यच्छन्दांसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि
 संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति गायत्रीमु ह वाव राजन् सर्वाणि
 छन्दांसि संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति ॥५॥ अथ होवाच यथा
 गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति वषट्कारेणो ह
 वाव राजन् गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥६॥
 अथ होवाच यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति-॥७॥

यष्टेऽनुवाके द्वितीये संयत्तः ।

—यो वै नायज्यै मुखं वेदेति होवाच तं दक्षिणा प्रतिगृहीता
 न हिंसन्तीति ॥१॥ अग्निर्ह वाव राजन् गायत्रीमुखम् ।
 तस्माद्यदग्निवभ्यादधाति भूयानेव स तेन भवति वर्धते । एव-
 मेवैव विद्वान्ब्राह्मणः प्रतिगृह्णन्भूयानेव भवति वर्धते उ एवेति ॥२॥
 स होवाचाऽनुवाको वै किलाऽयम्ब्राह्मण आस । तामहहर्षेण
 यज्ञेनैमीति ॥३॥ तस्य वै ते तयोद्गास्यामीति होवाच य-
 ष्कारादेव भूत्वा स्वर्गं लोकमिष्यसीति ॥४॥ तस्मा एतेन नाय-
 ज्योद्गीर्धेनोज्जगी । स इकारादेव भूत्वा स्वर्गं लोकमिष्यति ।

४ सम्भूतिद्वयः, सम्भूतिद्वयः । ५ ह ।

१ अक्षरम्-२-यत् । ३ गायत्र्यं सर्वम् ।

तेन हैतेनैकरात्रेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेति [य एवं वेद] ॥५॥ ओं
 वा इति द्वे अक्षरे । ओं वा इति चतुर्थे । ओं वा इति षष्ठे ।
 हुम्भा ओं वागित्यष्टमे ॥६॥ तेन हैतेन प्रतीदृशोऽस्य भयदस्था-
 ऽऽसमात्यस्योज्ज्वलौ ॥७॥ तं होवाच किं त आगास्यामीति । स
 होवाच इरीमे देवाश्वा वागायेति । तयेति । तौ हास्मा आजनी ।
 तौ हैनमाजम्भतुः ॥८॥ स वा एष उद्गीथः कायानां सम्पदो
 वाक्चो वाक्चो वाक्च हुम्भा ओं वागिति । साङ्गो वैष स तदुर-
 म्भस्तस्मभवति य एतदेवं वेदायो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥९॥४॥८॥

अहोऽनुवाकः तृतीयः अष्टकः । अहोऽनुवाकस्तस्मात् ॥

पुरुषो वै यज्ञः पुरुषो होद्गीथः । अथैत एव मृत्युको अद-
 मिर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥१॥ ते ह पुरुषं जायमानमेव मृत्युपाप्मैर-
 भिदधाति । तस्य वाचमेवाग्निरभिदधाति प्राणं वायुश्चक्षुरादित्यश्च-
 श्रोत्रं चन्द्रमाः ॥२॥ तदाहुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणो-
 म्योऽपि मृत्युपाप्मानुन्मुञ्चतीति ॥३॥ तद्यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति
 य एवास्य वाचि मृत्युपाप्मस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥४॥ अथ यस्यैवं

४ तोन । ५-हो । ६ सम्भू ॥

१ अथा । २ यजा- ३ उद्गाता-

विद्वानुद्गायति य एवास्य प्राणो मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥५॥
 अथ यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्य चक्षुषि मृत्युपाशस्तमे-
 वास्योन्मुञ्चति ॥६॥ अथ यस्यैवं विद्वाभिधनमुपैति य एवास्य
 श्रोत्रे मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥७॥ एवं वा एवंविदुस्तान्
 यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुञ्चति ॥८॥ तदामृस्त-
 वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुञ्च्यैवैनं
 सार्द्धं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृशातीति ॥९॥४-९॥

सप्तमोऽनुवाकः प्रथमः अक्षरः ।

तथस्यैवं विद्वानरिहकरोति य एवास्य लोमसु मृत्युपाशस्त-
 स्मादेवैनं स्पृणाति ॥१॥ अथ यस्यैवं विद्वान् मस्तौति य एवास्य
 त्वचि मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥२॥ अथ यस्यैवं विद्वान्
 दिमादधो य एवास्य मूर्ध्नि मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥३॥
 अथ यस्यैवं विद्वानुद्गायति य एवास्य स्नाक्सु मृत्युपाशस्तस्मा-
 देवैनं स्पृणाति ॥४॥ अथ यस्यैवं विद्वान्प्रतिहरति य एवास्य श्रो-
 त्रे मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति य
 एवास्य अस्त्रिषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥६॥ अथ यस्यैवं

४-आ । ५ उद्गायति । ६ प्राणे । ७ नास्ति । ८ प्रतिहरति ॥

९ अथ-१२ वा ।

विद्वान् निधनमुपैति य एवास्य मज्जसु सृत्युपात्रस्त तस्मादेवैनं
स्पृशति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्राता यजमानस्य प्राणोभ्योऽधि-
सृत्युपात्रानुन्मुच्यायैनं साङ्गं सतनुं सर्वसृत्योस्सपृणाति ॥८॥ तदा-
हस्त वा उद्राता यो यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिसृत्युपात्रानुन्मुच्यायैनं
साङ्गं सतनुं सर्वसृत्योस्सृतत्वा स्वर्गे लोके समाधा दधातीति ॥९॥
अथ वा एष इन्द्र वैमथ उग्रश्च भवति सवितोदितो मित्रस्तंगवकाश्च
इन्द्रो वैकुण्डो मध्यन्दिने समार्वर्तमानश्चरु उग्रो देवो सोहिताय च
प्रजापतिरेव संवेष्टेऽस्तमितः ॥१०॥ तद्यस्यैवं विद्वान् हिङ्करोति य
एवास्योक्तस्त्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥११॥ अथ यस्यैवं
विद्वान् प्रस्तौति य एवास्योदिते स्वर्गे लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति
॥१२॥ अथ यस्यैवं विद्यायादिमावचे य एवास्य संगवकाश्च
स्वर्गे लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१३॥ अथ यस्यैवं विदानुद्रायति
य एवास्य मध्यन्दिने स्वर्गे लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१४॥ अथ
यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्यपराहे स्वर्गे लोकस्तस्मिन्ने-
वैनं दधाति ॥१५॥ अथ यस्यैवं विदानुपद्रवति य एवास्यसू-
क्तेस्त्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्

घनमुपैति य एवास्यास्तमिते स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१७॥
 एवं वा एवविदुद्वाता यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिभृत्युपासानुन्मु-
 च्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वभृत्योस्सृष्ट्वा स्वर्गे लोके समुधा
 दधाति ॥१८॥४१०॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः अष्टकः । सप्तमोऽनुवाकस्तमासः ॥

षट् ष वै देवतास्स्वयम्भुषोऽधिर्बासुरसाधादित्यः प्राणोऽन्ने
 वाक् ॥१॥ ताश्चैष्ट्यो व्यवदन्ताऽहं श्रेष्ठाऽस्म्यहं श्रेष्ठाऽस्म्यहं [स्मि]
 मां श्रियमुपाध्वमिति ॥२॥ ता अन्योन्यस्यै श्रेष्ठतायै नाऽतिष्ठन्त ।
 ता अश्रुवन्न वा अन्योन्यस्यै श्रेष्ठतायै तिष्ठामह एतां सम्प्रब्रवामहे
 यथा श्रेष्ठास्सम इति ॥३॥ ता अधिमह्युचन्कथं त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥४॥
 सोऽब्रवीदहं देवानाम्मुखमस्म्यहमन्यासाम्प्रजानाम् । मयाऽऽहुतयो
 हूयन्ते । अहं देवानामन्नं विकरोम्यहमनुष्माणाम् ॥५॥ स यन्न
 स्याममुखा एव देवास्स्युरमुखा अन्याः प्रजाः । नाऽऽहुतयो हूयन्त^{१२} ।
 न देवानामन्नं विक्रियेत न मनुष्याणाम् ॥६॥ तत्र इदं सर्वम्भर-^{१४}

६ सप्त ॥

१-षट् । २-हं । ३-या । ४-ते । ५-ष्ववन् । ६-श्रेष्ठ-
 ७-आम्या- । ८-हं । ९-एत । १०-त्वा । ११-वार- । १२-अ ।
 १३-हूयन्ते (१) विक्र कर हूयन् (१) किया गया । १४-य ।

भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ^{१५} ॥७॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह ^{१६}
 किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥८॥ अथ वायुमब्रुव-
 न्कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥९॥ सोऽब्रवीदहं देवानाम्प्राणोऽस्म्यह-
 मन्मासात्मजानाम् । यस्मादहमुत्क्रामामि ततस्स प्रपुवते ॥१०॥
 स यदहं न स्यां तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येते-
 ति ॥११॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या
 इति ॥१२॥ ॥१४॥ ॥११॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथादित्यमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥१॥ सोऽब्रवीद-
 हमेवोद्यन्नहं भवाम्यहमसंयन्त्रात्रिः । मया चक्षुषा कर्माणि क्रियन्ते ।
 स यदहं न स्यां नैवाहस्यास्य रात्रिः । न कर्माणि क्रियेरन् ॥२॥
 तस्य इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥३॥
 एवमेवेति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥४॥
 अथ प्राणमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥५॥ सोऽब्रवीत्प्राणो
 भूत्वाऽभिदीप्यते । प्राणो भूत्वा वायुराकाशमनुभवति । प्राणो
 भूत्वाऽऽदित्य उदेति । प्राणादन्नम्प्राणाद्वाक् ॥६॥ ॥ यदहं न स्यां तत

१५-प्ये । १६ य । १७ अहहम् । १८ स्व ह ॥

१ इमं । २ य । ३ उक् । ४ अहम्-न ५ तत (१) ।

इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥७॥ एवमेवेति
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥८॥ अथाश्व-
 मब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठमसीति ॥९॥ तदब्रवीन्मयि प्रतिष्ठायाभिर्दी-
 प्यते । मयि प्रतिष्ठाय वायुराकाशमनुविभवति । मयि प्रतिष्ठाया-
 दिस उदेति । मदेव प्राणो मद्भाक् ॥१०॥ स यदहं न स्यां सत
 इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥११॥ एवमेवेति
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१२॥ अथ
 वाचमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठासीति ॥१३॥ साब्रवीन्मयैवेदं विज्ञायते
 मयाऽदः । स यदहं न स्यां नैवेदं विज्ञायेत नाद्दः ॥१४॥ तत
 इदं सर्वम्पराभवेत् नैवेह किञ्चन परिशिष्येतेति ॥१५॥ एवमेवे-
 ति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१६॥ ४१२३॥

अष्टमोऽनुवाके द्वितीयः अष्टमः ।

ता अभ्रुवन्मेता वै किल सर्वा देवताः । एकैकामेवानुस्मः ।
 स यन्तु नस्सर्वासां देवतानामेकाचन न स्यात्तत इदं सर्वम्परा-
 भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येत । इन्तु सार्धं समेत यत्त्वं न

इ संक्षेप करते हैं । 'स (१ न के स्याम में) स्या इति' यहाँ
 तक छोड़ दिया है । ७६-त्य (१) संक्षेप दिया है । ८-शिष्यः । १३-तुर ।
 १-अ । १ साम-१ ।

तदसामेति ॥१॥ ता एतस्मिन् प्राण ओकारे वाच्यकारे समायन् ।
तद्यत्समायन् तत्साम्नस्सामत्वम् ॥२॥ ता अब्रुवन् यानि नो
मर्त्यान्मनपहतपाप्मान्यक्षराणि तान्युद्धृत्यामृतेष्वपहतपाप्मसु शुद्धे-
ष्वक्षरेषु गायत्रं गात्रांमाऽग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽग्ने वाचि ।
तेनापहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥३॥ एसग्नेर-
मृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । शिरिसस्य मर्त्यमनपहतपाप्मा-
ऽक्षरम् ॥४॥ वेति वायोरमृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । सुरित्यस्य
मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥५॥ एत्यादित्यस्यामृतमपहतपाप्म
शुद्धमक्षरम् । त्येत्यस्य मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥६॥ वेति
प्राणस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । शेत्यस्य मर्त्यमनपहत
पाप्माक्षरम् ॥७॥ एत्यस्यमृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । नमित्यस्य
मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥८॥ वेति वाचोऽमृतमपहतपाप्म शुद्ध-
मक्षरम् । गित्यस्य मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥९॥ ता एतानि
मर्त्यान्मनपहतपाप्मान्यक्षराण्युद्धृत्यामृतेष्वपहतपाप्मसु शुद्धेष्व-
क्षरेषु गायत्रमागायत्राग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽग्ने वाचि । तेनाप-

३-यो । ४ वाच्य । ५-त्ये । ६ अम-(१) । ७ येन । ८-त ।
९-न । १० त्य इत्य । ११ ' वेदिवाचो मृत ' अधिक है पर कात्त रङ्ग
से काटा गया है । १२ या इत्य । १३-मासु ॥

हृत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् ॥१०॥ अपहत्य मृत्यु-
मपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य एवं वेद ॥११॥४१३॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः कण्डः ।

ता ब्रह्माऽब्रुवन्त्वयि प्रतिष्ठायैतमुद्यच्छामेति । ता ब्रह्माऽब्रवी-
दास्येन प्राणेन युष्मानास्येन प्राणेन मासुषामवायेति ॥१॥
ता एतेन प्राणेनौकारेण वाच्यकारमभिनिमेष्यन्त्यो हिङ्गारादका-
रमौकारेण वाचमनुस्वरन्त्य उमाभ्याम्माणाभ्यां गायत्रमगायत्रो-
वाश्चोवाश्चोवाश्च इष भा वो वा इति ॥२॥ स यथोमया-
पदी प्रतितिष्ठत्येवमेव स्वर्गे लोके प्रत्यतिष्ठन् । प्रति स्वर्गे लोके
तिष्ठति य एवं वेद ॥३॥ य ज ह वा एवं विदस्माञ्छोकात्त्वैति स
प्राण एव भूत्वा वायुमप्येति वायोरध्यन्नाययन्नेभ्योऽधि वृष्टि
वृष्ट्यैवेवं लोकमनुविभवति ॥४॥ अथ यो ह सध्रमासां चकिरे ।
ते पुनः पुनर्बह्वीभिर्बह्वीभिः प्रतिपाद्विस्वर्गस्य लोकस्य द्वारं
नानुचन कुपुधिरे ॥५॥ न च श्रमेण तपसा व्रतचर्येणेन्द्रमवरु-
धिरे ॥६॥ ते होषुस्वर्गं वै लोकमैप्सिष्म । ते पुनः पुनर्बह्वीभि-
र्बह्वीभिः प्रतिपाद्विस्वर्गस्य लोकस्य द्वारं नानुचनाऽभुत्समहि-

१ आस्येनेन । २-आ, -आन् । ३-अत् । ४ ए- । ५-अ- । ६ ऐप्सिष् ।

७ 'बह्वीभिर्' अधिक है । ८ ऽभुत्- । १० मेवस्त-

तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुमज्ञायाऽनार्तास्त्वस्ति
संवत्सरस्योदचं गत्वा स्वर्गं लोकमियामेति ॥७॥ तान् होवाच
को वस्त्वाविरतम इति ॥८॥४१२४॥

अष्टमोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अहमित्यमस्त्यः ॥१॥ स वा एहीति होवाच तस्मै वै तेऽहं
तद्वक्ष्यामि यदिद्रासस्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुमज्ञायाऽनार्तास्त्वस्ति
संवत्सरस्योदचं गत्वा स्वर्गं लोकमेष्यथेति ॥२॥ तस्मा एतं
गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमुवाचाऽग्नौ वायावादित्ये प्रश्नोऽन्ने
क्षत्रि ॥३॥ ततो वै ते स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुमज्ञायाऽनार्ता-
स्त्वस्ति संवत्सरस्योदचं गत्वा स्वर्गं लोकमायन् ॥४॥ एवमेवैवं
विद्वान् स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुमज्ञायाऽनार्तास्त्वस्ति संवत्सर-
स्योदचं गत्वा स्वर्गं लोकमेति ॥५॥४१२५॥

अष्टमोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकस्तस्मात् ॥

एवं वा एतं गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमिन्द्रोऽगस्त्यायो-
वाचाऽगस्त्य इषाय इषावाश्वय इषइषावाश्विगौषुक्तये गौषुक्ति-

१ 'अहमित्य' (१) अधिक है ॥

१ नास्ति । २-क्षत्रि । ३ 'द्रास्यमेव' अधिक है । ४ आय ॥

१-गीत- । २-आधो- ।

ज्वालायनाय^१ ज्वालायनश्शाठ्यायनये^२ शाठ्यायनी^३ रामाय^४ कातु-
जातेयाय^५ वैयाघ्रपथाय^६ रामः कातुजातेयोवैयाघ्रपथः—॥१॥४॥१६॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः अष्टकः ।

—शङ्खाय^१ बाभ्रव्याय^२ शङ्खो^३ बाभ्रव्यो^४ दत्ताय^५ कात्यायनय^६
भात्रेयाय^७ दत्तः कात्यायनिरात्रेयः^८ कैसाय^९ वारक्याय^{१०} कैसो^{११} वार-
क्यस्सुयज्ञाय^{१२} शारिढल्याय^{१३} सुयज्ञश्शारिढल्योऽग्निदत्ताय^{१४} शारिढ-
ल्यायाऽग्निदत्तश्शारिढल्यस्सुयज्ञाय^{१५} शारिढल्याय^{१६} सुयज्ञश्शारिढ-
ल्यो^{१७} जयन्ताय^{१८} वारक्याय^{१९} जयन्तो^{२०} वारक्यो^{२१} जनश्रुताय^{२२} वारक्याय^{२३}
जनश्रुतो^{२४} वारक्यस्सुदत्ताय^{२५} पाराशर्याय^{२६} ॥१॥ सैषा^{२७} शाठ्यायनी^{२८}
गायत्रस्योपनिषदेवमुपासितव्या ॥२॥४॥१७॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः अष्टकः । नवमोऽनुवाकस्तमासः ॥

केनेषितम्पतति मेषितम्पनः केन प्राणः प्रथमः मतिं युक्तः ।
केनेषितां वाचमिमां वदन्ति चक्षुश्श्रोत्रं क उ देवो मुनक्ति ॥१॥
श्रोत्रस्य श्रोत्रम्पनसो मनो यद् वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्रथमः ।
चक्षुषश्चक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेसाऽस्माज्जोकादमृता भवन्ति ॥२॥

३-वाच-४-वाचये । ५-वाच्य-॥

१-काय । २-प-३-यो, यौर जनश्रुताय वारक्याय
जनश्रुते (१) वारक्यस् अतिशय है । ४-यो ।

न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनः ।

न विद्य न विजानीमो यथैतदनुस्मिष्यात् ॥३॥

अन्यदेव तद् विदितादयो अविदितादधि ।

इति शुश्रुम पूर्वेषां ये नस्तदभ्यासचक्षिरे ॥४॥

यद् वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥५॥

यन्मनसा न मनुते येनाऽऽहुर्मनौ मतम् ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥६॥

यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षुषि पश्यति ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥७॥

यच्छ्रोत्रेण न शृणोति येन श्रोत्रमिदं श्रुतम् ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥८॥

यदग्राणेन न प्राणिति येन प्राणाः प्राणीयते ।

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥९॥१०॥१८॥

दशमोऽनुवाकः प्रथमः अष्टकः ।

यदि मन्यसे सुवेदेति दहमेवाऽपि नूनं त्वं वेत्थ ब्रह्मणो रूपं यदस्य
त्वं सदस्य देवेषु । अथ नु मीमांस्यमेव ते मन्येऽविदितम् ॥ १ ॥

१ विद् । २-अ । ३ इवे अधिक है । ४-शिष्ट- ५-अ-
६ मन्यो । ७ मतेम् । ८ तम् । ९ उक्तानुक्त है । १०-यमिति ॥

नाऽहम्मन्ये सुवेदेति नो न वेदेति वेद च ।

यो नस्तद् वेद तद्वेद नो न वेदेति वेद च ॥२॥

यस्याऽमृतं तस्य मतम्मृतं यस्य न वेदं सः ।

अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम् ॥३॥

प्रतिबोधविदितम्मृतममृतत्वं हि विन्दते ।

आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् ॥४॥

इह चेदवेदीदथ सख्यमस्ति । न चेदिहाऽवेदीन्महतीविनष्टिः ।

भूतेषु-भूतेषु विविच्य धीराः प्रेक्षाऽस्माज्जोकादमृता भवन्ति ॥५॥४१-६

दशमेऽनुषाके द्वितीयः खण्डः ।

ब्रह्म ह देवेभ्यो विजिग्ये । तस्य ह ब्रह्मणो विजये देवा अमहीयन्त ।

त ऐक्षन्ताऽस्माकमेवाऽयं विजयः । अस्माकमेवाऽयं महिमेति ॥१॥

तद्वैषां विजज्ञौ । तेभ्यो ह प्रादुर्बभूव । तस्मै व्यजानन्त किमिदं

यक्षमिति ॥२॥ तेऽग्निमब्रुवजातवेद एतद् विजानीहि किमेतद्

यक्षमिति । तथेति ॥३॥ तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति ।

अग्निर्वा अहमस्मीत्यब्रवीज्जातवेदा वा अहमस्मीति ॥४॥ तस्मिन्-

स्त्वयि किं वीर्यमिति । अपीदं सर्वं दहेयम् यदिदम्पृथिव्यामिति ॥५॥

तस्मै तृणं निदधावेतद्दहेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाकदम्धुम् ।

स तत् एव निवहते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥६॥ अथ

वायुमब्रुवन् वायवेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ॥७॥

तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति । वायुर्वा अहमस्मीत्यब्रवी-

न्मातरिश्वा वा अहमस्मीति ॥८॥ तस्मिंस्त्वयि किं वीर्यमिति ।

अपीदं सर्वमाददीय यदिदम्पृथिव्यामिति ॥९॥ तस्मै तृणं

निदधावेतदादत्सेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाका-

ऽऽदातुम् । स तत् एव निवहते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥१०॥

अथेन्द्रमब्रुवन् मयवेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ।

तदभ्यद्रवत् । तस्मात् तिरोऽदधे ॥११॥ स तस्मिन्नेवाऽऽकाशे

स्त्रियमाजगाम बहु शोभमानासुमां हैमवतीम् । तां होवाच किमेतद्

यत्नमिति ॥१२॥४१२०॥

दशमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अप्तेति होवाच ब्रह्मणो वा एतद् विजये महीयध्व इति । ततो

हैव निदांचकार अप्तेति ॥१॥ तस्माद्वा एते देवा अतितरामि-

चान्पान् देवान् यदग्निर्वायुरिन्द्रः । ते ह्येनोदिष्टुम्पस्पृशुस्स ह्येनव^१
 मथगो विदांचकार ब्रह्मेति ॥२॥ तस्माद् वा इन्द्रोऽप्रतितरामिवा-
 ऽन्यान् देवान् । स ह्येनोदिष्टुम्पस्पर्श स ह्येनव मथगो विदांचकार
 ब्रह्मेति ॥३॥ तस्यैष आदेशो यदेतद् विद्युतो व्यद्युतदा^२ इति^३ ।
 न्यामिषदा^४ । इत्यग्निदेवतम् ॥४॥ अथाऽध्वात्मम् । यदेनद्
 गच्छतीव च मनोऽनेन चैनद्रुपस्मरत्यमीक्ष्यं संकल्पः ॥५॥ तद्
 तद्वनं नाम । तद्वनमित्युपासितव्यम् । स य एतदेवं वेदाऽभिहैनं
 सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति ॥६॥ उपनिषदम्भो ब्रूहीति । उक्ता
 त उपनिषत् । ब्राह्मीं वाच त उपनिषदमब्रूमेति ॥७॥ तस्यै तपो
 दयः कर्मेति प्रतिष्ठा वेदास्सर्वाङ्गाणि ससमायतनम् ॥८॥
 यो^५ वा एतामेवं वेदाऽपहृत्य पाप्मानमनन्ते स्वर्गे लोकेऽज्येयै
 प्रतितिष्ठति ॥९॥४।२१।

दशमेऽनुवाके चतुर्यः खण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१ नेदिष्मा, नेदिषुम् । २ ते । ३ अन् । ४ विद्यु । ५ इती । ६ मी ।
 ७ सुक् । ८ सम्वाञ्छन्ति । ९ ओ । १०-११ ॥

तेन तत्पर्याप्तोत् । इदं ह वा अस्येदं सृष्टमशियिलम्भुवनम्पर्या-
प्तम्भवति य एवं वेद ॥१३॥४।२२॥

एकादशोऽनुवाके अयमः अष्टमः ।

सैषा चतुर्था विहिता श्रीरुद्रीयस्सामाकर्ण्य ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥१॥
प्राणो वाचोद्गागी स उद्गीथः ॥२॥ प्राणो वावागो वाक् सा
तत्साम ॥३॥ प्राणो वाव को वायुक् तदक्यम् ॥४॥ प्राणो वाव
ज्येष्ठो वाग्ब्राह्मणं तज्ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥५॥ उपनिषदम्भो
ब्रूहीति । उक्ता त उपनिषदस्य ते आतव उक्ताः । त्रिधातु विषु
वाव त उपनिषदमब्रूमेति ॥ ६ ॥ एतच्छुक्लं कृष्णं ताम्रं
सामवर्णं इति ह स्माह यदैव शुक्लकृष्णे ताम्रो वर्णोऽभ्यवैति
स वै ते दृष्टे दशमं मानुषमिति त्रिधातु । स ऐक्षत क नुं य
उत्तानाय शयानायैमा देवता बलि हरेयुरिति ॥७॥४।२३॥

एकादशोऽनुवाके द्वितीयः अष्टमः ॥

स पुरुषमेव प्रपदनायाऽष्टमीति ॥१॥ तम्पुरस्तात्पञ्चम्या-

१ स्ताम् । २ विहिता । ३ अगीः, गीः । ४ वा । ५-अग् । ६-यव ।
७-वा । ८-वे । ९-त । १० दशमः । ११ के पूर्व एकः अक्षर एका नहीं
आता, कवाचित् कटा है । १२ उत्तानाय ॥

विश्वः । तस्मा उरुरभवत् । तदुरस उरस्त्वम् ॥२॥ तस्मा अत्रसद्
 एता देवता बलिं हरन्ति ॥३॥ आचमनुहरन्तीमग्निरस्मै बलिं
 हरति ॥४॥ मनोऽनुहरच्चन्द्रमा अस्मै बलिं हरति ॥५॥ चक्षुरनु-
 हरदादिस्रोऽस्मै बलिं हरति ॥६॥ श्रोत्रमनुहरादिस्रोऽस्मै बलिं
 हरन्ति ॥७॥ प्राणमनुहरन्तं वायुरस्मै बलिं हरति ॥८॥ तस्यैते
 निष्खाताः^१ पन्था बलिवाहना^२ इमे प्राणाः । एवं हैतं निष्खाताः
 पन्था बलिवाहनास्सर्वतोऽपियन्ति^३ प्राणा य एवं वेद ॥९॥ सा
 हेवा ब्रह्मासन्दीमारूढा । आ हास्मै ब्रह्मासन्दीं^४ हरन्त्यधि ह
 ब्रह्मासन्दीं रोहति य एवं वेद ॥१०॥ तदेतद् ब्रह्मयज्ञश्च^५ श्रिया
 परिवृढम् । ब्रह्म ह तु सन् यज्ञसा श्रिया परिवृढो भवति य एवं
 वेद ॥११॥ तस्यैष आदेशो^६ योऽयं दत्तिस्रोऽन्तः । तस्य
 यच्छुक्लं तदृचां रूपं यत्कुण्डं तत्साम्नां यदेव ताम्रमिव बभ्रुरिव
 तद्यजुषाम् ॥१२॥ य एवायं चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र एष मजा-
 पतिस्समः पृथिव्या सम आकाशेन समो दिवां समस्सर्वेण
 भूतेन । एष परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासि-
 तव्यम् ॥१३॥१४॥१५॥

एकादशोऽनुवाके सृतीयः खण्डः ।

सच्चाऽसच्चाऽसच्च सच्च वाक् च मनश्च [मनश्च] वाक् च
 चक्षुश्च श्रोत्रं च श्रोत्रं च चक्षुश्च श्रद्धा च तपश्च तपश्च श्रद्धा च
 तानि षोडश ॥१॥ षोडशकलम्ब्रह्म । स य एवमेतत् षोडशकलम्ब्रह्म
 वेद तमेवैतत् षोडशकलम्ब्रह्माऽप्येति ॥२॥ वेदो ब्रह्म तस्य
 सखमायतनं शमः प्रतिष्ठा दमश्च ॥३॥ तद्यथा श्वा प्रैष्यन्
 पापात्कर्मणो जुगुप्सेतैवमेवाऽहरहः पापात्कर्मणो जुगुप्सेताऽऽ
 कालात् ॥४॥ अथैषां दशपदी विराट् ॥५॥ दश पुरुषे स्वर्ग-
 नरकाणि । तान्येनं स्वर्गं गतानि स्वर्गं गमयन्ति नरकं गतानि
 नरकं गमयन्ति ॥६॥ ४।२५॥

एकादशेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

मनो नरको वाक् नरकः प्राणो नरकश्च चक्षुर्नरकश्च श्रोत्रं
 नरकस्त्यक् नरको हस्तौ नरको गुदं नरकश्च शिश्नं नरकः पादौ नरकः
 ॥१॥ मनसा परीक्षयाणि वेदेति वेद ॥२॥ वाचा रसान्वेदेति वेद
 ॥३॥ प्राणेन गन्धान्वेदेति वेद ॥४॥ चक्षुषा रूपाणि वेदेति
 वेद ॥५॥ श्रोत्रेण शब्दान्वेदेति वेद ॥६॥ त्वचा संस्पर्शान्वे-
 देति वेद ॥७॥ हस्ताभ्यां कर्मभूयि वेदेति वेद ॥८॥ उदरेणा-

ऽज्ञनया वेदेति वेद ॥६॥ शिशेन शमान्वेदेति वेद ॥१०॥
 षादाभ्यामध्वनो वेदेति वेद ॥११॥ प्लक्षस्य मासवणस्य
 आदेशमात्रादुदक् तत्पृथिव्यै मध्यम् । अथ यत्रैते सप्तर्षयस्तदिवो
 मध्यम् ॥१२॥ अथ यत्रैत ऊषास्तत्पृथिव्यै हृदयम् । अथ यदे-
 तत्कुष्णं चन्द्रमासी तदिवो हृदयम् ॥१३॥ स य एवमेते यावा-
 पृथिव्योर्मध्ये च हृदये च वेद नाऽकामोऽस्माज्जोकात्मैति ॥१४॥
 नमोऽतिसामायैऽतुरेताय धृतराष्ट्राय पार्थश्रवसाय ये च प्राणं
 रक्षन्ति ते मा रक्षन्तु । स्वास्ति । कर्मेति गार्हपत्यश्चम इत्याह-
 वनीयोदय इत्यन्वाहार्यपचनः ॥१५॥४॥२६॥

एकादशोऽनुवाकः पञ्चमः अष्टमः । एकादशोऽनुवाकस्तत्तमासः ॥

कस्सविता । का सावित्री । अग्निरेव सविता । पृथिवी
 सावित्री ॥१॥ ॥ यत्राऽभिस्तत्पृथिवी यत्र वा पृथिवी तदाग्निः ।
 ते द्वे योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥२॥ कस्सविता । का सावित्री ।
 वरुण एव सविता । आपस्सावित्री ॥३॥ स यत्र वरुणास्तदापो
 यत्र वाऽऽपस्तद्वरुणः । ते द्वेयोनी । [तदेकम्मिथुनम्] ॥४॥

२-वद् । ३-कामो । ४-सामय-सामाय । ५-एतुर ।

६-पार्थश्रव-से ठीक किया हुआ है । ७-मम् ॥

कस्सविता । का सावित्री । वायुरेव सविता । आकाशस्सावित्री
 ॥५॥ स यत्र वायुस्तदाकाशो यत्र वाऽऽकाशस्तदायुः । ते द्वे
 योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥६॥ कस्सविता । का सावित्री । यत्र एव
 सविता । छन्दांसि सावित्री ॥७॥ स यत्र यज्ञस्तच्छन्दांसि यत्र
 वा छन्दांसि तद्यज्ञः । ते द्वे योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥८॥
 कस्सविता । का सावित्री । स्तनयित्सुरेव सविता । विश्वे सावित्री
 ॥९॥ स यत्र स्तनयित्सुस्तद्विश्वे यत्र वा विश्वे तस्तनयित्सुः । ते
 द्वे योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१०॥ कस्सविता । का सावित्री ।
 आदित्य एव सविता । धौस्सावित्री ॥११॥ स यत्रादित्यस्तदधौर्यश्च
 वा धौस्तदादित्यः । ते द्वे योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१२॥
 कस्सविता । का सावित्री । चन्द्र एव सविता । नक्षत्राणि सावित्री
 ॥१३॥ स यत्र चन्द्रस्तन्नक्षत्राणि यत्र वा नक्षत्राणि तच्चन्द्रः ।
 ते द्वे योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१४॥ कस्सविता । का सावित्री ।
 मन एव सविता । वाक् सावित्री ॥१५॥ स यत्र वाक्स्तद्वान
 [वा] वाक् तन्मनः । ते द्वे योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१६॥ कस्स-
 विता । का सावित्री । पुरुष [पुरु] सविता । स्त्री सावित्री । स
 यत्र पुरुषस्तव स्त्री यत्र वा स्त्री तत्पुरुषः । ते द्वे योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१७॥ १८॥

ब्राह्मणेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तस्या एष प्रथमः पादो भूस्तत्सवितुर्वरेण्यमिति । अग्निर्वै
 वरेण्यम् । आषो वै वरेण्यम् । चन्द्रमा वै वरेण्यम् ॥१॥ तस्या
 एष द्वितीयः पादो भर्गमयो भुवो भर्गो देवस्य धीमहीति । अग्निर्वै
 भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः ॥२॥ तस्या एष तृतीयः
 पादस्स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री
 च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥३॥ भूर्भुवस्तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य
 धीमहीति । अग्निर्वै भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः
 ॥४॥ स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री
 च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥५॥ भूर्भुवस्स्वस्तत् सवितुर्वरेण्यम्भर्गो
 देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयादित । यो वा एतां सावित्री-
 मेव वेदाऽप पुनर्मृत्युं तरति सावित्र्या एव संलोकतां जयति
 सावित्र्या एव संलोकतां जयति ॥६॥ १२८॥

आवरोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । आवरोऽनुवाकस्समाप्तः ।

इत्युपनिषद्ब्राह्मणं समाप्तम् ॥

१-सं । २ 'यज्ञो वै प्रचोदयति । स्त्री च वै पुरुषश्च प्रजनयतः'

आधिकं करो ॥

१-ऋषि-नामों की सूची ।

वं० से वंश का अभिप्राय है ।

अगस्त्य, ४।१५।१॥१६।१॥ वं० ।

अतिसाम एतुरेत, ४।२६।१५॥

अनुवका सात्यकीर्त, १।५।४॥

अभयद आसमात्य, ४।८।७॥

अभिप्रतारी, ३।१।२१॥२।२, ३, ९३॥

अभिप्रतारी कादसेनि १।५।६।१॥३।१।२१॥

अयास्य, २।८।७, ८।१।८॥

अयास्य आङ्गिरस, २।७।२, ६।८।३॥

अषाढ उत्तर पाराशर्य ३।४।१॥ वं०

आङ्गिरस, २।२।६॥ देखो अयास्य आ० ।

आजकेशी, १।६।३॥

आज द्विश, देखो बन्ध आ० ।

आङ्गार, देखो पार आ० ।

आत्रेय, देखो वृक्ष कात्यायनि आ०, शक्र शाठ्यायनि आ० ।

आरुणि, १।४।२।१॥

आरुण्य, २।५।१॥

आर्चाकायण, देखो मर्द्धतस आ० ।

आलुकेय, देखो हस्तवाशय आ० ।

आसमात्य, देखो अभयद आ० ।

इन्द्रोत्त वैद्यप शौनक, ३।४।०।१॥ वं० ।

इष दयावाश्वि, ४।१६।१॥ वं०

उद्येदधवल कौपयेय, ३।२५।१, २, ३॥

उत्तर, देखो आषाढ उ० पाराशर्य ।

अमा हेमवती, ३१२०११॥

अशुक्ल (१) जानशुतेय, १६३॥

उशनः काव्य, २१७२, ६॥

अश्वत्थ काव्य, ३१४०११॥ वं० ।

अतरेत (१), देखो अतिसात घ० ।

बेहवाक, देखो भगेरथ घ० ।

बेहवाक वाष्प, ११५॥

बेतरेय, देखो महिवास ।

बेम्बोति, देखो इति घ० शौनक ।

कंस वारकी, ३१४११॥ वं० ।

कंस वारक्य, ३१४११॥ वं० । ३१४११॥ वं० ।

कक्षीवन्त, २१५११॥

कश्यप, ४३१॥

काचसेति, देखा अभिप्रतारी का० ।

कायद्विध, ३१०१२॥ देखो जनशुत का० । नगरी जानशुतेय का० ।

सायक जानशुतेय का० ।

कात्यायनि, देखो दत्त का० आषेय ।

कापेय, ३१२१, १२॥ देखो शौनक का० ।

कासीरादि, २१४॥

काव्य, देखो उशनः का० ।

काश्यप, ३१४०११॥ वं० । देखो अश्वत्थ का० । देवलः द्यावसीवन्त का० । शुष वाहेय का० ।

कुबेर वारक्य, ३१४११॥ वं० ।

कुठ, (एकव०) ११५६१॥ (बहुव०) ११५६१॥ देखो कौरव ।

कुरुपञ्चालः, ३१७३॥ ३०६, ३१७३॥ ३०६॥

कृष्णश्च लौहित्य, ३१४११॥ वं० । देखो निवेद कृष्ण लौहित्य ।

कृष्णभूति स्नात्यकि, ३४२११॥ सं० ।

कृष्णरात लौहित्य, ३४२११॥ सं० । देखो निवेद्य सं० लौहित्य ।

केशी दस्यु, ३१२६१, २॥

कौपयेय, देखो उच्चैदभवः ।

क्रातुजातेय, देखो राम का० वेद्याग्रवध ।

कौमि, देखो सुदक्षिण वै० ।

गाम्भूनस आर्त्ताकायश्वे, ११३५४॥

गाम्भर्वाप्सरसः, १४११॥ ५१२०, ११॥ ३५११॥

गुप्त, देखो वेषम्वित दादेजयन्ति गु० लौहित्य ।

गोवक्ष वाष्प्य, १४११॥

गोक्षु (आवास), ३४७७॥

गौतम (आर्याणि) ११३५४॥

गौधुक्ति, ४११६१॥ सं० ।

चैकितानेय, १३७७॥ २५१२॥ (बहुवच०) १४११॥

देखो ब्रह्मवत्त वै० । वासिष्ठ वै० ।

चैलरथि, देखो सत्याधिवाक वै० ।

जनश्रुत कायङ्घ्रिय, ३४०१२॥ सं० ।

जनश्रुत धारण्य, ३४११॥ सं० । ३४११॥ सं० ।

जमवजि, ३३११॥ ३३१॥

जयक लौहित्य, ३४२१॥ सं० ।

जयन्त, देखो यशस्वी ज० लौहित्य ।

जयन्त पाराशर्य, ३४११॥ सं० ।

जयन्त वादस्त्री, ३४११॥ सं० । (इस नाम के दो व्यक्तियाँ ३४११॥ सं० ।

जानश्रुत, देखो नगरी जा० कायङ्घ्रिय ।

जानश्रुतेय, देखो उत्सुक्य जा० । स्नायक जा० कायङ्घ्रिय ।

जायाज, ३४११॥ (द्विवच०) ३४७२, ३५७, ८॥ देखो गोक्षु गुप्त ।

जैषधि, १।३८।४॥

ज्यासायन, ४।१६।१॥ वं० ।

जसदस्यु, २।५।११॥

जिवेद कण्ठायाल लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

जस कात्यायनि अक्षेय, ३।४१।१॥ वं० ।

जसजयन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

जार्जजयन्ति, देखो वैपश्चित दा० गुप्त लौहित्य, वैपश्चित दा०
जसजयन्त लौहित्य ।

जार्ज्य, देखो केशी दा० ।

जाल्म्य (महावत्त वैकितलेय), १।३८।१॥ वं० ।

जाल्म्य, देखो वन दा० ।

जसजयन्त, देखो विपश्चित दा० लौहित्य, वैपश्चित जार्जजयन्त दा०
लौहित्य ।

जति पेन्द्रोति शौनक, ३।४०।२॥ वं० ।

ज्येतरस् इयावसायन काश्यप, ३।४०।२॥ वं० ।

ज्येष्ठाप, देखो इन्द्रोति दा० शौनक ।

ज्युतराष्ट्र, ४।२६।१॥

जगरी आनभुतेय काश्यप, ३।४०।१॥ वं० ।

जाक, ३।१६।५॥

जपतु प्राजापत्य, ३।३०।३॥

जपमेष्टी प्राजापत्य, ३।४०।२॥ वं० ।

जपिगुप्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

जपार्श्व, देखो अषाढ उत्तर पा० । जयन्त पा० । वैपश्चित शकुनि-
मित्र पा० । सुवत्त पा० ।

जार्ज्यवत्त, ४।२६।१॥

जार्ज्य, देखो, २।५।११॥

पुलुव प्राचीनयोग्य, ३१४०२॥ व०।

पृथु वेम्ब, ११८०६॥३४॥३५॥३६॥

पौलुषि, देखो सत्ययज्ञ पौ० प्राचीनयोग्य ।

पौलुषित, देखो सत्ययज्ञ पौ० ।

प्रतीदर्श, ४८०॥७॥

प्राचीनयोग्य, ११३६१॥ देखो पुलुव प्रा० । सत्ययज्ञ पौलुषि प्रा० ।

सोमशुभ सत्ययज्ञ प्रा० ।

प्राचीनशाख (बहुय०), ३१०११॥

प्राचीनशाखि, ३१७२, ३, ५, ७, १०११॥

प्राजापत्य, देखो परमेष्ठी प्रा० ।

प्रातृद् भाष, ३१३१४॥

प्रासवण, देखो मूल प्रा० ।

प्रोष्ठपाद वारक्य, ३१४११॥ व० ।

मूल प्रासवण, ४१२६१॥

षक वाल्म्य, ११६३॥४१॥७२॥

वर्म आजद्विष, २१७२, ६॥

वाल्म्य, देखो शङ्ख वा० ।

महदत्त वैकितानेय, ११३५१॥५६॥१॥

मनेरय देववाक, ४६११, २॥

भाष, देखो प्रातृद् भा० ।

भाषुषिन (बहुय०), २१४०॥

मनु, ३११५१॥

महिदास पेतरेय, ४१११॥

मातरिभ्यन्, ४१०६॥

साम्य, देखो श्याति प्रा० ।

मिथभूति कौदित्य, ३१४१॥ व० ।

सूक्त सामभवत्, ३।५।२॥

महास्वी जयन्त सौहित्य, ३४२१११ पं० ।

राम कालुआसेथ वैयाअपय, ३५०२५ सं० । ४१६१२५ सं०

ਦੇਵਿਕਾ, ੧੧੨-੬੧੭, ੧੦੪

सौदित्य, देवो कृष्णाक्ष लो०, कृष्णरात्र लो०, जयन्त लो०, विवेक
 कृष्णरात्र लो०, दत्त जयन्त लो०, पल्लिगुप्त लो०, मित्रभृति
 लो०, यशस्वी जयन्त लो०, विपश्चित् इन्द्रजयन्त लो०,
 वैपश्चित् दार्दजयन्ति गुप्त लो०, वैपश्चित् दार्दजयन्ति
 इन्द्रजयन्त लो०, इयामजयन्त लो०, इयामभुजयन्त लो०,
 सत्यश्रवस लो० ।

वासिष्ठ, शारदाशास्त्रादि, आ तुल्य० वासिष्ठ ।

आदिकि, येसो मंसल या० ।

शारदय, देसो मंस बा०, कुबेर बा०, जनश्रुत बा०, अयन्त बा०,
ग्रीष्मपाद बा० ।

बार्थो, हेखो पेदुवाक ना०, गोबल ना० ।

वासिष्ठ वैफितामेय, १।४२।१॥

कावेय, हेतो श्रुत चा० कावेयप ॥

विद्यया विदुः सदा जयन्ते लौकिकम्, ३४२१॥ सं० ।

विपश्चित् शकुनिमिश्र पाराशर्य, ३४१।१॥ अ० ।

विश्वामित्र, ३।३।७।२५।१॥ (बहुव०) ३।१५।१॥ तुल० विश्वामित्र ।

બેકુચઢ (ઈન્ડ્ર), ઢીપ્પી ૧૪૧૦૧૦૧

वेन्य, १।४५।२। देखो पृष्ठु वै० ।

अपस्मित दार्ढजयन्ति गुप्त क्षौद्रित्य, ३५२३२॥ वं० ।

संप्रसारित दार्ढ्ययुग्मित हृदयान्त लौहित्य, ३४२।१॥ अं० ।

वैशुध (हलद), ४।१०।१०३

मैत्रावरुणाय, देखो राम कालुजस्तेय पै० ।

शकुनिमित्र, देखो विपश्चिह्न श० पाराशर्य ।

शङ्ख सामुद्र्य, ३४११॥ वं० । ४१७१॥ वं० ।

शङ्ख शाठ्यायनि आश्रय, ३४०१॥ वं० ।

शर्ष, ४१७१॥ वं० ।

शर्याति मानव, २७११॥ वं० ।

शाठ्यायनि, १६२१॥ वं० । १७२१॥ वं० । १८२१॥ वं० । १९२१॥ वं० । २०२१॥ वं० । २१२१॥ वं० । २२२१॥ वं० । २३२१॥ वं० । २४२१॥ वं० । २५२१॥ वं० । २६२१॥ वं० । २७२१॥ वं० । २८२१॥ वं० । २९२१॥ वं० । ३०२१॥ वं० । ३१२१॥ वं० । ३२२१॥ वं० । ३३२१॥ वं० । ३४२१॥ वं० । ३५२१॥ वं० । ३६२१॥ वं० । ३७२१॥ वं० । ३८२१॥ वं० । ३९२१॥ वं० । ४०२१॥ वं० । ४१२१॥ वं० । ४२२१॥ वं० । ४३२१॥ वं० । ४४२१॥ वं० । ४५२१॥ वं० । ४६२१॥ वं० । ४७२१॥ वं० । ४८२१॥ वं० । ४९२१॥ वं० । ५०२१॥ वं० । ५१२१॥ वं० । ५२२१॥ वं० । ५३२१॥ वं० । ५४२१॥ वं० । ५५२१॥ वं० । ५६२१॥ वं० । ५७२१॥ वं० । ५८२१॥ वं० । ५९२१॥ वं० । ६०२१॥ वं० । ६१२१॥ वं० । ६२२१॥ वं० । ६३२१॥ वं० । ६४२१॥ वं० । ६५२१॥ वं० । ६६२१॥ वं० । ६७२१॥ वं० । ६८२१॥ वं० । ६९२१॥ वं० । ७०२१॥ वं० । ७१२१॥ वं० । ७२२१॥ वं० । ७३२१॥ वं० । ७४२१॥ वं० । ७५२१॥ वं० । ७६२१॥ वं० । ७७२१॥ वं० । ७८२१॥ वं० । ७९२१॥ वं० । ८०२१॥ वं० । ८१२१॥ वं० । ८२२१॥ वं० । ८३२१॥ वं० । ८४२१॥ वं० । ८५२१॥ वं० । ८६२१॥ वं० । ८७२१॥ वं० । ८८२१॥ वं० । ८९२१॥ वं० । ९०२१॥ वं० । ९१२१॥ वं० । ९२२१॥ वं० । ९३२१॥ वं० । ९४२१॥ वं० । ९५२१॥ वं० । ९६२१॥ वं० । ९७२१॥ वं० । ९८२१॥ वं० । ९९२१॥ वं० । १००२१॥ वं० ।

शायिडल्य, देखो सुयज्ञ श० ।

शानावत्य, १३८१॥ वं० ।

शुक (जाबाल), ३७७१॥ वं० ।

शैलन (बहुव०), १२२१॥ वं० । १३२१॥ वं० । १४२१॥ वं० । १५२१॥ वं० । १६२१॥ वं० । १७२१॥ वं० । १८२१॥ वं० । १९२१॥ वं० । २०२१॥ वं० । २१२१॥ वं० । २२२१॥ वं० । २३२१॥ वं० । २४२१॥ वं० । २५२१॥ वं० । २६२१॥ वं० । २७२१॥ वं० । २८२१॥ वं० । २९२१॥ वं० । ३०२१॥ वं० । ३१२१॥ वं० । ३२२१॥ वं० । ३३२१॥ वं० । ३४२१॥ वं० । ३५२१॥ वं० । ३६२१॥ वं० । ३७२१॥ वं० । ३८२१॥ वं० । ३९२१॥ वं० । ४०२१॥ वं० । ४१२१॥ वं० । ४२२१॥ वं० । ४३२१॥ वं० । ४४२१॥ वं० । ४५२१॥ वं० । ४६२१॥ वं० । ४७२१॥ वं० । ४८२१॥ वं० । ४९२१॥ वं० । ५०२१॥ वं० । ५१२१॥ वं० । ५२२१॥ वं० । ५३२१॥ वं० । ५४२१॥ वं० । ५५२१॥ वं० । ५६२१॥ वं० । ५७२१॥ वं० । ५८२१॥ वं० । ५९२१॥ वं० । ६०२१॥ वं० । ६१२१॥ वं० । ६२२१॥ वं० । ६३२१॥ वं० । ६४२१॥ वं० । ६५२१॥ वं० । ६६२१॥ वं० । ६७२१॥ वं० । ६८२१॥ वं० । ६९२१॥ वं० । ७०२१॥ वं० । ७१२१॥ वं० । ७२२१॥ वं० । ७३२१॥ वं० । ७४२१॥ वं० । ७५२१॥ वं० । ७६२१॥ वं० । ७७२१॥ वं० । ७८२१॥ वं० । ७९२१॥ वं० । ८०२१॥ वं० । ८१२१॥ वं० । ८२२१॥ वं० । ८३२१॥ वं० । ८४२१॥ वं० । ८५२१॥ वं० । ८६२१॥ वं० । ८७२१॥ वं० । ८८२१॥ वं० । ८९२१॥ वं० । ९०२१॥ वं० । ९१२१॥ वं० । ९२२१॥ वं० । ९३२१॥ वं० । ९४२१॥ वं० । ९५२१॥ वं० । ९६२१॥ वं० । ९७२१॥ वं० । ९८२१॥ वं० । ९९२१॥ वं० । १००२१॥ वं० ।

शौनक, १५२१॥ वं० । देखो इन्द्रोक्त वैवाप शौ०, इति पद्मोक्ति शौ० ।

शौनक कापेय, ३१२१॥ वं० ।

श्यामजयन्त लौहित्य (इस नाम के दो व्यक्ति), ३४२१॥ वं० ।

श्यामसुजयन्त लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

श्यामसायन, देखो वैवतरण श्या० काश्यप ।

श्यामिष्ठि, देखो इष्ट इष्टा० ।

श्रुष बाह्य काश्यप, ३४०१॥ वं० ।

श्वजनि (एक वैश्य), ३४०१॥ वं० ।

सत्ययज्ञ पौलुवित, १३२१॥ वं० ।

सत्ययज्ञ पौलुवि प्राचीनयोग्य, ३४०१॥ वं० ।

सत्यधरस लौहित्य, ३४२१॥ वं० ।

सत्याधिवाक वैतरण, ३४२१॥ वं० ।

सात्यकि, देखो रुधाभूति सा० ।

सात्यकीर्त (बहुव०), ३४२१॥ वं० । अनुषक्ता सा० ।

सात्ययकि (बहुव०), २४४१॥ वं० । सोमशुक्ल सा० प्राचीनयोग्य ।

सामभवस, देखो मुञ्ज सा० ।

सायक ज्ञानभुतेय कायङ्गविय, ३४०१॥ वं० ।

सुचिन्त शैलन, ११४४॥

सुदक्षिण, ३४०१॥ (देखो सुदक्षिण तैमि)

सुदक्षिण तैमि, ३४०१॥ (देखो सुदक्षिण) ।

सुदक्ष पाशाशय, ३४०१॥ वं० ३४०१॥ वं० ।

सुयज्ञ शायिकलय, ४१७१॥

सोमवृहस्पति (द्विवं), ११५८॥

सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्राचीनयोग्य, ३४०१॥ वं० ।

इत्थाशय आलुकेय, ३४०१॥ वं० ।

हेमवती, देखो उमा हे० ।

२-निर्वचनादि सूची ।

अक्षर, ११४१॥ ३४०१॥ ३४०१॥

४३१॥

अन्तरिक्ष, ११२०॥ ४३१॥

असाध्य, २१८०॥ ११८॥

अर्क, ४२३१॥ ४३१॥

असु, १४०१॥

असुर, ३३१॥ ३३१॥

आङ्गिरस, २१११॥ २११॥

आदि, ११११॥ १११॥

आदित्य, ४२३१॥

आवर्त, ३३३१॥

उरस, ४२३१॥

अथ, ११११॥

गान्धर्व, ३३३१॥

वेषधुत, ११११॥

पतङ्ग, ३३३१॥

पश्यत, ११११॥

प्रतिहार, ११११॥

प्रस्ताम, प्रस्तामि, ११११॥

प्रस्ताम, ११११॥

वृहस्पति, २१११॥

भीमस, ११११॥

मधुपुत्र, ११११॥

महीया, ११११॥

रुद्र, ४२३१॥

रोवसी, १३३१॥

वसु, ४२३१॥

वेष्मामित्र, ३३३१॥

शतसमि, ११५०॥

सजात, ११८१॥

समुद्र, ११२५॥

सामन्, ११३३॥ ७०॥ ११२५॥ ११२५॥ ११२५॥ ११२५॥
५६२५॥ ११२५॥

सिन्धु, ११२५॥

सुवर्ग, ११५५॥

हरि, ११५५॥

३-(क) ऋचादिसूची ।

अदितिर्द्यौरदितिः, ११५१॥ ११५१॥

अपश्य गोपामनिपद्यमानाम्, ११५१॥ ११५१॥

आत्मा देवानामुत मर्त्यानाम्, ११५१॥ ११५१॥

आयुर्माता मतिः पिता, ११५१॥

इन्द्रमुक्यमुच्यते, ११५१॥

इमांमेवामृषिषीम्, ११५१॥ ११५१॥

उतेषां ज्येष्ठः, ११५१॥ ११५१॥

उपास्मै गायत, ११५१॥ ११५१॥

अवय पते मन्त्रकृतः, ११५१॥

अत्वादिराक् परिमितः, ११५१॥ ११५१॥

तत्सधितुर्वरेण्यम्, ११५१॥ ११५१॥

इयानुषं कश्यपस्य, ११५१॥ ११५१॥

नवो नवो सवसि, ११५१॥ ११५१॥

पतङ्गमन्त्रः, ११५१॥ ११५१॥

पतङ्गो वाचम्मनसा, ११५१॥ ११५१॥

मयीहं मन्वे भुवनादि, ११५१॥

महात्मनस्तुरो देवः, ११५१॥ ११५१॥

यद्व्याघा इन्द्र ते-शतम्, १३२१॥ ऋ० दा० २०५॥

यस्तत्तरदिमहृषमः, १३२१॥ ऋ० दा० २०५॥

वेऽग्नयः पुरीष्याः, १३२१॥ य० १०५॥

येमिवाति इषितः, १३२१॥ य० १०५॥

रूपं-रूपमतिरूपः, १३२१॥ ऋ० दा० २०५॥

रूपं-रूपमतिरूपः, १३२१॥ ऋ० दा० २०५॥

स नो मयोभूः, १३२१॥

स यदा वे म्रियते, १३२१॥

स्त्री स्मैवाग्ने, १३२१॥

सूर्या दिवस्तम्भनीम्, १३२१॥

(स)

अभिजिदस्यमिजव्यासम्, ३२०१॥

अमोऽहमस्मि, (दीर्घपाठ), ३२०१॥ (सतिम्), ३२०१॥

अरयस्य वत्सोऽस्ति, ३२०१॥

उपाधस्यचम, ३२०१॥ ३२०१॥

गुहासि देवोऽस्ति, ३२०१॥

विश्वरथा भोजम्, ३२०१॥

देवेन स्तविष्ठा, ३२०१॥

पुरुषः प्रजापतिः, ३२०१॥

प्राणा३ प्राणा३ प्राणा३, ३२०१॥

महाम्महत्त समधत्त, ३२०१॥

यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रः, ३२०१॥

विभूः पुरस्तात्सम्यत्, ३२०१॥

अयुवि सविता भवति, ३२०१॥

श्वेताश्वो वर्धतो, ३२०१॥

सत्यस्य पत्न्या, ३२०१॥

लोमः पवते, ३२०१॥ ३२०१॥



D.G.A. 80.
CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY
NEW DELHI
Borrowers record

No.— Sa2Vu/Jai/Ram - 81

Rama Deva &

~~811.2020~~

~~Borala~~

~~Title~~

Upanisads - Jaiminiya
Brāhmanas - Taittiriya
Sanskrit Lib - Upanisads

D.G.A. 80.
CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY
NEW DELHI
Issue record

Call No.— Sa2Vu/Jai/Ram - 8172

Author— Rama Deva & Oertel, H.

Title— Jaiminiya upaniṣadbrāh-
maṇam.

Borrower's Name	Date of Issue	Date of Return

P.T.O.